॥ ओ३म् ॥

यजुर्वेद-संहिता
सामवेद-संहिता

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वेदज्योति प्रेस
जी-७, मॉडल टाउन, दिल्ली-११० ००९

यजुर्वेद-संहिता सामवेद-संहिता स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती
वेदज्योति प्रेस

294.113
J19YS
C.4

ओ३म्

यजुर्वेद-संहिता

सम्पादक

परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

प्रकाशक :

वेदज्योति प्रेस

जी-७, मॉडल टाउन, दिल्ली-११० ००९

'ओ३म्'
पुस्तकालय
पतञ्जलि योगपीठ हरिद्वार

अनुक्रमांक : S-1499
वर्ग संख्या : 294-113
पुस्तक संख्या : J19YS
C.4

294.113
J19YS
C.4

Divya Yog Mandir
Library
24/5/07
Kankhal, Haridwar

S-1499

प्रकाशक	:	**वेदज्योति प्रेस,** जी–७, मॉडल टाउन, दिल्ली–११० ००९
संस्करण	:	प्रथम, सन् २००३
शब्द संयोजक	:	**भगवती लेज़र प्रिंट्स,**
मूल्य	:	चारों वेदों का सेट ३५०.०० रुपये
मुद्रक	:	**राधा प्रेस,** कैलाश नगर, दिल्ली–११० ०३१

LIBRARY
Sl. No. S-1499
Dated 24/5/2007
Divya Yog Mandir, Haridwar

भूमिका

वेद परमात्मा–प्रदत्त दिव्य ज्ञान है। परमेश्वर ने यह ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में मानवमात्र के कल्याण के लिए प्रदान किया था। वेद सार्वभौमिक और सार्वकालिक हैं। वेदों में मनुष्यों के करणीय सभी कर्त्तव्य–कर्मों और नाना प्रकार के ज्ञान–विज्ञान का उपदेश है।

वेद चार हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। यजुर्वेद का प्रकटीकरण महर्षि वायु पर हुआ था। इस वेद में चालीस अध्याय और १९७५ मन्त्र हैं।

ऋग्वेद ज्ञानकाण्ड है तो यजुर्वेद कर्मकाण्ड का वेद है। दूसरे शब्दों में ऋग्वेद मस्तिष्क का वेद है तो यजुर्वेद हाथों का वेद है। यजुर्वेद में अग्निहोत्र से लेक[illegible]श्वमेधपर्यन्त सभी प्रकार के यज्ञों का वर्णन है। यजुर्वेद कर्मवेद है, अतः इसमें आदि से लेक[illegible] तक सर्वत्र कर्म की प्रेरणा गूँज रही है। सर्वप्रथम मन्त्र में कहा—'**श्रेष्ठतमाय कर्मणे**' [illegible] **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।**' —४०।२, अर्थात् मनुष्य सौ वर्ष तक कर्म करते हुए ही जीने की इच्छा करे। कर्म भी श्रेष्ठ कर्म करे, निर्माणात्मक कर्म करे।

यद्यपि यजुर्वेद कर्मकाण्ड का वेद है, परन्तु अध्यात्म के गूढ़ रहस्य भी इसमें छिपे हुए हैं। इसके इकतीस, बत्तीस, छत्तीस और चालीसवें अध्याय तो इसके देदीप्यमान रत्न हैं। तेइसवें अध्याय की 'ब्रह्मोद्य ऋचाओं' [४५ से ६२] जैसी अनूठी रचना तो संसार के साहित्य में दुर्लभ है। आदर्श राष्ट्र का जो स्वरूप **आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो** [२२।२२] में प्रस्तुत किया है—उसकी तुलना करना असम्भव है। यजुः० ३४।१–६ में शिवसङ्कल्प और मनोविज्ञान का हृदयहारी चित्रण है। जीवन–निर्माण के अन्य भी अनेक दिव्य सन्देश इस वेद में हैं।

इस संस्करण की विशेषताएँ

यजुर्वेद के जितने संस्करण अब तक प्रकाशित हुए हैं उनमें यह संस्करण शुद्धतम संस्करण है। इस संस्करण की कुछ विशेषताएँ निम्न हैं—

१. अब तक कहीं से भी प्रकाशित संस्करणों से अधिक शुद्ध और प्रामाणिक है।

२. दो रंग में छापा गया है। कम्प्यूटर की कम्पोजिंग, उत्तम काग़ज़, बढ़िया छपाई, टिकाऊ पक्की जिल्द, इसकी अन्य विशेषताएँ हैं।

३. लोकं ता इन्द्रम् [१३।५८] आदि प्रतीकों को सम्पूर्ण वेद में से हटा दिया है, क्योंकि ऋषि दयानन्द सरस्वती ने उपर्युक्त मन्त्र के भाष्य में लिखा है—'**अत्र लोकन्ता इन्द्रमिति द्वादशाध्यायस्थानां त्रयाणां मन्त्राणां प्रतीकानि सूत्रव्याख्यानं दृष्ट्वा केनचिद् धृतानि। शतपथेऽव्याख्यातत्वादत्र न गृह्यन्ते।**' पुनः चौदहवें अध्याय के दसवें मन्त्र में ऋषिवर लिखते हैं—**अत्र पूर्ववत् मन्त्रत्रयप्रतीकानि 'लोकन्ता इन्द्र'-मिति लिखितानि निवारितानि।** इसी अध्याय के ३१वें मन्त्र

LIBRARY
Sl. No. ....
Dated ....
Divya Yog Mandir, Haridwar

के भाष्य में वे लिखते हैं—**अत्रापि 'लोकन्ता इन्द्र'-मिति मन्त्रत्रयप्रतीकानि पूर्ववत्केनचित् क्षिप्तानीति वेद्यम्।** ऋषि के निर्देशानुसार हमने आगे भी जहाँ-जहाँ प्रतीकें थीं, उन्हें हटा दिया है, प्रतीकें मन्त्रों का भाग नहीं हैं। कर्मकाण्ड में किसी ने प्रयोग किया होगा। बाद में उन्हें मन्त्रों का भाग बना दिया गया।

४. ग्वङ्ग दो प्रकार का है—ह्रस्व ग्वङ्ग [ꣳ] और दीर्घ ग्वङ्ग [ꣴ]। सामान्य नियम यह है कि ह्रस्व अक्षर के पश्चात् दीर्घ ꣴ आता है, जैसे **अन्तरिक्षꣴशान्तिः**—यजुः० ३६।१७ तथा दीर्घ अक्षर के पश्चात् ह्रस्व ꣳ आता है, जैसे **यजूꣳषि**—यजुः० ३४।५, परन्तु इस नियम के अपवाद भी हैं, अतः ह्रस्व अक्षर के पश्चात् भी ह्रस्व ꣳ आ जाता है, जैसे **कृतꣳ स्मर**—यजुः० ४०।१५। इस संस्करण में कहाँ ह्रस्व ꣳ होना चाहिए और कहाँ दीर्घ ꣴ होना चाहिए, इसका विशेषरूप से ध्यान रक्खा गया है।

५. यजुर्वेद में दो स्वरों के मध्य में विवृति चिह्न ऽ आता है। उदाहरणार्थ—**प्रजाभ्यऽओषधीभ्यः, अन्यस्याऽ उपावत,** मेऽ अरातीः, इत्यादि। ए और ओ के पश्चात् भी अवग्रह [ऽ] का चिह्न होना चाहिए। दोनों में भेद की दृष्टि से हमने विवृति चिह्न में [ऽ] इस चिह्न का और अवग्रह के रूप में [**S**] इस चिह्न का प्रयोग किया है।

६. अनेक विशेषताओं से युक्त होने पर भी इसका मूल्य प्रचार-प्रसार की दृष्टि से लागत से भी कम रक्खा गया है।

हम वेद का स्वाध्याय करें, वेद के अर्थों को जानें, वेद को जीवन में उतारकर अपने जीवन को सुजीवन बनाएँ।

जी-७, माडल टाउन,
दिल्ली-११० ०३६
दूरभाष : २७७३७७४९

विदुषामनुचरः
—**जगदीश्वरानन्द सरस्वती**
अक्तूबर, २००३

ओ३म्

यजुर्वेद-संहिता

अथ प्रथमोऽध्यायः

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिः १-३१॥

देवता—सविता १, ३, १०, २०, २५, २६। यज्ञः २, ७, १४, १५, २१, २७-३१। विष्णुः ४, ९। अग्निः ५, ८, ११, १७-१९, २३। प्रजापतिः ६। अप्सवितारौ १२। इन्द्रः[उ], अग्निः[क], यज्ञः[र] १३। वायुः[क], सविता[र] १६। यज्ञः[क], अग्निसवितारौ[र] २२। द्योविद्युतौ २४॥

छन्दः—स्वराड्बृहती[क], ब्राह्म्युष्णिक्[र] १। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् २। भुरिग्जगती ३। अनुष्टुप् ४। आर्चीत्रिष्टुप् ५। आर्चीपङ्क्तिः ६। प्राजापत्याजगती ७। निचृदतिजगती ८। निचृत्त्रिष्टुप् ९। भुरिग्बृहती १०। स्वराड्जगती ११, १४। भुरिगत्यष्टिः १२। निचृदुष्णिक्[उ], भुरिगार्चीगायत्री[क], भुरिगुष्णिक्[र] १३। निचृज्जगती[क], याजुषीपङ्क्तिः[र] १५। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप्[क], विराड्गायत्री[र] १६। निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः १७। ब्राह्म्युष्णिक्[उ], आर्चीत्रिष्टुप्[क], आर्चीपङ्क्तिः[र] १८। निचृद्ब्राह्मीत्रिष्टुप् १९। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २०, २५। गायत्री[क], निचृत्पङ्क्तिः[र] २१। स्वराट्त्रिष्टुप्[क], गायत्री[र] २२। बृहती २३। स्वराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः २४। स्वराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः[क], भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः[र] २६। ब्राह्मीत्रिष्टुप् २७। विराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः २८। त्रिष्टुप्[क,र] २९। निचृज्जगती ३०। जगती[क], अनुष्टुप्[र] ३१॥

स्वरः—मध्यमः[क], ऋषभः[र] १। धैवतः २, ५, ९, १९, २०, २५, २७, २९। निषादः ३, ७, ८, ११, १४, ३०। गान्धारः ४, १२। पञ्चमः ६, १७, २४, २६, २८। मध्यमः १०, २३। ऋषभः[उ,र], षड्जः[क] १३। निषादः[क], पञ्चमः[र] १५। धैवतः[क], षड्जः[र] १६। ऋषभः[उ], धैवतः[क], पञ्चमः[र] १८। षड्जः[क], पञ्चमः[र] २१। धैवतः[क], षड्जः[र] २२। निषादः[क], गान्धारः[र] ३१॥

[क]इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं [र]प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥१॥

वसोः पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो घर्मोऽसि विश्वधाऽअसि।
परमेण धाम्ना दृꣳहस्व मा ह्वार्मा ते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत् ॥२॥

वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्।
देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः॥३॥

सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः ।
इन्द्रस्य त्वा भागꣳसोमेनातनच्मि विष्णो हव्यꣳरक्ष ॥४॥
अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् ।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥५॥
कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति कस्मै त्वा युनक्ति
तस्मै त्वा युनक्ति । कर्मणे वां वेषाय वाम् ॥६॥
प्रत्युष्टꣳरक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳरक्षो निष्टप्ताऽअरातयः ।
उर्वन्तरिक्षमन्वेमि ॥७॥
धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः।
देवानामसि वह्नितमꣳसस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ॥८॥
अह्रुतमसि हविर्धानं दृꣳहस्व मा ह्वार्मा ते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत् ।
विष्णुस्त्वा क्रमतामुरु वातायापहतꣳरक्षो यच्छन्तां पञ्च ॥९॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
अग्नये जुष्टं गृह्णाम्यग्नीषोमाभ्यां जुष्टं गृह्णामि ॥१०॥
भूताय त्वा नारातये स्वरभिविख्येषं दृꣳहन्तां दुर्याः पृथिव्यामुर्वन्त-
रिक्षमन्वेमि पृथिव्यास्त्वा नाभौ सादयाम्यदित्याऽउपस्थेऽग्ने हव्यꣳरक्ष॥११॥
पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण
सूर्यस्य रश्मिभिः। देवीरापोऽअग्रेगुवोऽअग्रेपुवोऽग्रऽइममद्य यज्ञं
नयताग्रे यज्ञपतिꣳसुधातुं यज्ञपतिं देवयुवम् ॥१२॥
[उ]युष्माऽइन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्ये प्रोक्षिता स्थ।
[क]अग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि । [र]दैव्याय
कर्मणे शुन्धध्वं देवयज्यायै यद्वोऽशुद्धाः पराजघ्नुरिदं वस्तच्छुन्धामि ॥१३॥
शर्मास्यवधूतꣳरक्षोऽवधूताऽअरातयोऽदित्यास्त्वगसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु ।
अद्रिरसि वानस्पत्यो ग्रावासि पृथुबुध्नः प्रति त्वादित्यास्त्वग्वेत्तु ॥१४॥

[क]अग्नेस्तनूरसि वाचो विसर्जनं देववीतये त्वा गृह्णामि बृहद् ग्रावासि
वानस्पत्यः सऽइदं देवेभ्यो हविः शमीष्व सुशमि शमीष्व ।
[र]हविष्कृदेहि हविष्कृदेहि ॥१५॥
[क]कुक्कुटोऽसि मधुजिह्वऽइषमूर्जमावद त्वया वयꣳसङ्घातꣳसङ्घातं
जेष्म वर्षवृद्धमसि प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्तु परापूतꣳरक्षः परापूता
अरातयोऽपहतꣳरक्षो वायुर्वो विविनक्तु [र]देवो वः सविता
हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना ॥१६॥
धृष्टिरस्यपाऽग्नेऽअग्निमामादं जहि निष्क्रव्यादꣳसेधा देवयजं वह ।
ध्रुवमसि पृथिवीं दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि
भ्रातृव्यस्य वधाय ॥१७॥
[उ]अग्ने ब्रह्म गृभ्णीष्व धरुणमस्यन्तरिक्षं दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा
क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय। [क]धर्त्रमसि दिवं
दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय ।
[र]विश्वाभ्यस्त्वाशाभ्यऽउपदधामि चित स्थोर्ध्वचितो भृगूणामङ्गिरसां
तपसा तप्यध्वम् ॥१८॥
शर्मास्यवधूतꣳ रक्षोऽवधूताऽअरातयोऽदित्यास्त्वगसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु ।
धिषणासि पर्वती प्रति त्वादित्यास्त्वग्वेत्तु दिव स्कम्भनीरसि धिषणासि
पार्वतेयी प्रति त्वा पर्वती वेत्तु ॥१९॥
धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा ।
दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः
प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ॥२०॥
[क]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सं वपामि [र]समापऽओषधीभिः समोषधयो रसेन ।
सꣳरेवतीर्जगतीभिः पृच्यन्ताꣳ सं मधुमतीर्मधुमतीभिः पृच्यन्ताम् ॥२१॥

[क] जनयत्यै त्वा सँयौमीदमग्नेरिदमग्नीषोमयोरिषे त्वा घर्मोऽसि
विश्वायुरुरुप्रथाऽउरु प्रथस्वोरु ते यज्ञपतिः प्रथतामग्निष्टे त्वचं
मा हिꣳसीद्देवस्त्वा सविता श्रपयतु वर्षिष्ठेऽधि नाके ॥२२॥
मा भेर्मा संविक्थाऽअतमेरुर्यज्ञोऽतमेरुर्यजमानस्य प्रजा भूयात्
त्रिताय त्वा द्विताय त्वैकताय त्वा ॥२३॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
आददेऽध्वरकृतं देवेभ्यऽइन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणः सहस्रभृष्टिः
शततेजा वायुरसि तिग्मतेजा द्विषतो वधः ॥२४॥
पृथिवि देवयजन्योषध्यास्ते मूलं मा हिꣳसिषं व्रजं गच्छ गोष्ठानं
वर्षतु ते द्यौर्बधान देव सवितः परमस्यां पृथिव्याꣳ शतेन
पाशैर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मस्तमतो मा मौक् ॥२५॥
[क]अपाररुं पृथिव्यै देवयजनाद्वध्यासं व्रजं गच्छ गोष्ठानं वर्षतु
ते द्यौर्बधान देव सवितः परमस्यां पृथिव्याꣳ शतेन पाशैर्योऽ-
स्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मस्तमतो मा मौक्। [र]अररो दिवं मा
पप्तो द्रप्सस्ते द्यां मा स्कन् व्रजं गच्छ गोष्ठानं वर्षतु ते द्यौर्बधान
देव सवितः परमस्यां पृथिव्याꣳ शतेन पाशैर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं
च वयं द्विष्मस्तमतो मा मौक् ॥२६॥
गायत्रेण त्वा छन्दसा परिगृह्णामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि
जागतेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि। सुक्ष्मा चासि शिवा चासि
स्योना चासि सुषदा चास्यूर्जस्वती चासि पयस्वती च ॥२७॥
पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन्नुदादाय पृथिवीं जीवदानुम् ।
यामैरयँश्चन्द्रमसि स्वधाभिस्तामु धीरासोऽअनुदिश्य यजन्ते ।
प्रोक्षणीरासादय द्विषतो वधोऽसि ॥२८॥
[क]प्रत्युष्टꣳ रक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳ रक्षो निष्टप्ताऽअरातयः।
अनिशितोऽसि सपत्नक्षिद्वाजिनं त्वा वाजेध्यायै सम्मार्ज्मि।

[र]प्रत्युष्टꣳ रक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳ रक्षो निष्टप्ताऽअरातयः।
अनिशितासि सपत्नक्षिद्वाजिनीं त्वा वाजेध्यायै सम्मार्ज्मि ॥२९॥
अदित्यै रास्नासि विष्णोर्वेष्पोऽस्यूर्जे त्वाऽदब्धेन त्वा चक्षुषावपश्यामि।
अग्नेर्जिह्वासि सुहूर्देवेभ्यो धाम्नेधाम्ने मे भव यजुषेयजुषे ॥३०॥
[क]सवितुस्त्वा प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः।
सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः।
[र]तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धाम नामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं
देवयजनमसि ॥३१॥

इति प्रथमोऽध्यायः ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिः १-१६, १८-२०। देवलः १७। वामदेवः २१-३४॥

देवता—यज्ञः १, २, ५। अग्निः ३, ४, ७, ९, १४, १७, २७-३०। विष्णुः ६, ८, २५। इन्द्रः १०, २२। द्यावापृथिवी ११। सविता १२। बृहस्पतिः १३। अग्निषोमौ [क], इन्द्राग्नी [र] १५। द्यावापृथिवी मित्रावरुणौ च [क], अग्निः[र] १६। विश्वेदेवाः १८। अग्निवायू १९। अग्निसरस्वत्यौ २०। प्रजापतिः २१, २३। त्वष्टा २४। ईश्वरः २६। पितरः ३१-३३। आपः ३४॥

छन्दः—निचृत्पङ्क्तिः १। स्वराड्जगती २। भुरिगार्चीत्रिष्टुप् [उ], भुरिगार्चीपङ्क्तिः[क], पङ्क्तिः[र] ३। निचृद्गायत्री ४, ३३। निचृद्ब्राह्मीबृहती ५। ब्राह्मीत्रिष्टुप् [क], निचृत्त्रिष्टुप् [र] ६। बृहती ७। विराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः ८। जगती ९। भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः १०। ब्राह्मीबृहती ११। भुरिग्बृहती १२। विराड्जगती १३। अनुष्टुप् [क], भुरिगार्चीगायत्री [र] १४। ब्राह्मीबृहती [क], निचृदतिजगती [र] १५। भुरिगार्चीपङ्क्तिः[क], भुरिक्त्रिष्टुप् [र] १६। निचृज्जगती १७। स्वराट्त्रिष्टुप् १८। भुरिक्पङ्क्तिः १९, ३०। भुरिग्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २०। भुरिग्ब्राह्मीबृहती २१। विराट्त्रिष्टुप् २२, २४। निचृद्बृहती २३। निचृदार्चीपङ्क्तिः[उ], आर्चीपङ्क्तिः[क], भुरिग्जगती [र] २५। उष्णिक् २६। निचृत्पङ्क्तिः[क], गायत्री [र] २७। भुरिगुष्णिक् २८, ३४। स्वराडार्षी अनुष्टुप् २९। बृहती ३१। ब्राह्मीबृहती [क], निचृद्बृहती [र] ३२॥

स्वरः—पञ्चमः १, ८, १०, १९, ३०। निषादः २, ९, १३, १७। धैवतः[उ], पञ्चमः[क,र] ३। षड्जः ४, ३३। मध्यमः ५, ७, ११, १२, २१, २३, ३१, ३२। धैवतः ६, १८, २०, २२, २४। गान्धारः[क], षड्जः[र] १४। मध्यमः[क], निषादः[र] १५। पञ्चमः[क], धैवतः[र] १६। पञ्चमः[उ,क], निषादः[र] २५। ऋषभः २६, २८, ३४। पञ्चमः[क], षड्जः[र] २७। गान्धारः २९॥

कृष्णोऽस्याखरेष्ठोऽग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि वेदिरसि बर्हिषे
त्वा जुष्टां प्रोक्षामि बर्हिरसि स्रुग्भ्यस्त्वा जुष्टं प्रोक्षामि ॥ १॥
अदित्यै व्युन्दनमसि विष्णो स्तुपोऽस्यूर्णम्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्थां
देवेभ्यो भुवपतये स्वाहा भुवनपतये स्वाहा भूतानां पतये स्वाहा॥ २॥
[उ]गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्य-
ग्निरिडऽईडितः। [क]इन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणो विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य
परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः। [र]मित्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण
धर्मणा विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः ॥ ३॥

वीतिहोत्रं त्वा कवे द्युमन्तꣳसमिधीमहि। अग्ने बृहन्तमध्वरे ॥ ४॥
समिदसि सूर्यस्त्वा पुरस्तात् पातु कस्याश्चिदभिशस्त्यै ।
सवितुर्बाहू स्थऽऊर्णम्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्थं
देवेभ्यऽआ त्वा वसवो रुद्राऽआदित्याः सदन्तु ॥ ५॥
[क]घृताच्यसि जुहूर्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद
घृताच्यस्युपभृन्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद
घृताच्यसि ध्रुवा नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद
[र]प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद। ध्रुवाऽअसदन्नृतस्य योनौ ता
विष्णो पाहि पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं पाहि मां यज्ञन्यम् ॥ ६॥
अग्ने वाजजिद् वाजं त्वा सरिष्यन्तं वाजजितꣳ सम्मार्ज्मि ।
नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यः सुयमे मे भूयास्तम् ॥ ७॥
अस्कन्नमद्य देवेभ्यऽआज्यꣳ संभ्रियासमङ्घ्रिणा विष्णो मा त्वावक्रमिषं
वसुमतीमग्ने ते च्छायामुपस्थेषं विष्णो स्थानमसीतऽइन्द्रो
वीर्यमकृणोदूर्ध्वोऽध्वरऽआस्थात् ॥ ८॥
अग्ने वेर्होत्रं वेर्दूत्यमवतां त्वां द्यावापृथिवीऽअव त्वं द्यावापृथिवी
स्विष्टकृद्देवेभ्यऽइन्द्रऽआज्येन हविषा भूत्स्वाहा सं ज्योतिषा ज्योतिः॥ ९॥
मयीदमिन्द्रऽइन्द्रियं दधात्वस्मान् रायो मघवानः सचन्ताम् ।
अस्माकꣳ सन्त्वाशिषः सत्या नः सन्त्वाशिषऽउपहूता पृथिवी
मातोप मां पृथिवी माता ह्वयतामग्निराग्नीध्रात् स्वाहा ॥ १०॥
उपहूतो द्यौष्पितोप मां द्यौष्पिता ह्वयतामग्निराग्नीध्रात् स्वाहा।
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
प्रतिगृह्णाम्यग्नेष्ट्वास्येन प्राश्नामि ॥ ११॥
एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे ।
तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव ॥ १२॥

मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं
यज्ञꣳसमिमं दधातु। विश्वे देवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ ॥१३॥
[क]एषा तेऽअग्ने समित्तया वर्धस्व चा च प्यायस्व ।
वर्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि ।
[र]अग्ने वाजजिद्वाजं त्वा ससृवाꣳस ँ वाजजितꣳसम्मार्ज्मि ॥१४॥
[क]अग्नीषोमयोरुज्जितिमनूज्जेषं वाजस्य मा प्रसवेन प्रोहामि ।
अग्नीषोमौ तमपनुदतां योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मो
वाजस्यैनं प्रसवेनापोहामि। [र]इन्द्राग्न्योरुज्जितिमनूज्जेषं वाजस्य
मा प्रसवेन प्रोहामि। इन्द्राग्नी तमपनुदतां योऽस्मान् द्वेष्टि यं
च वयं द्विष्मो वाजस्यैनं प्रसवेनापोहामि ॥१५॥
[क]वसुभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यस्त्वादित्येभ्यस्त्वा संजानाथां द्यावापृथिवी
मित्रावरुणौ त्वा वृष्ट्यावताम्। [र]व्यन्तु वयोक्तꣳरिहाणा मरुतां
पृषतीर्गच्छ वशा पृश्निर्भूत्वा दिवं गच्छ ततो नो वृष्टिमावह।
चक्षुष्पाऽअग्नेऽसि चक्षुर्मे पाहि ॥१६॥
यं परिधिं पर्यधत्थाऽअग्ने देवपणिभिर्गुह्यमानः। तं तऽएतमनु
जोषं भराम्येष नेत्त्वदपचेतयाताऽअग्नेः प्रियं पाथोऽपीतम् ॥१७॥
सꣳस्रवभागा स्थेषा बृहन्तः प्रस्तरेष्ठाः परिधेयाश्च देवाः। इमां वाचमभि
विश्वे गृणन्तऽआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वꣳस्वाहा वाट् ॥१८॥
घृताची स्थो धुर्यौ पातꣳ सुम्ने स्थः सुम्ने मा धत्तम्। यज्ञ नमश्च
तऽउप च यज्ञस्य शिवे सन्तिष्ठस्व स्विष्टे मे सन्तिष्ठस्व ॥१९॥
अग्नेऽदब्धायोऽशीतम पाहि मा दिद्योः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्यै
पाहि दुरद्मन्याऽअविषं नः पितुं कृणु सुषदा योनौ स्वाहा
वाडग्नये संवेशपतये स्वाहा सरस्वत्यै यशोभगिन्यै स्वाहा ॥२०॥
वेदोऽसि येन त्वं देव वेद देवेभ्यो वेदोऽभवस्तेन मह्यं वेदो भूयाः।
देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित ।
मनसस्पतऽइमं देव यज्ञꣳस्वाहा वाते धाः ॥२१॥

सं बर्हिरङ्क्ताꣳहविषा घृतेन समादित्यैर्वसुभिः सम्मरुद्भिः।
समिन्द्रो विश्वदेवेभिरङ्क्तां दिव्यं नभो गच्छतु यत् स्वाहा ॥२२॥
कस्त्वा विमुञ्चति स त्वा विमुञ्चति कस्मै त्वा विमुञ्चति
तस्मै त्वा विमुञ्चति। पोषाय रक्षसां भागोऽसि ॥२३॥
सं वर्चसा पयसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा सꣳशिवेन ।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ॥२४॥
[उ]दिवि विष्णुर्व्यक्रꣳस्त जागतेन च्छन्दसा ततो निर्भक्तो
योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मो[क]ऽन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रꣳस्त त्रैष्टुभेन
च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः [र]पृथिव्यां
विष्णुर्व्यक्रꣳस्त गायत्रेण च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं
च वयं द्विष्मोऽस्मादन्नादस्यै प्रतिष्ठायाऽअगन्म स्वः सं ज्योतिषाभूम॥२५॥
स्वयंभूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वर्चोदाऽअसि वर्चो मे देहि ।
सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते ॥२६॥
[क]अग्ने गृहपते सुगृहपतिस्त्वयाऽग्नेऽहं गृहपतिना भूयासꣳसुगृहपतिस्त्वं
मयाऽग्ने गृहपतिना भूयाः। [र]अस्थूरि णौ गार्हपत्यानि सन्तु शतꣳहिमाः
सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते ॥२७॥
अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधीदमहं
यऽएवाऽस्मि सोऽस्मि ॥२८॥
अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा सोमाय पितृमते स्वाहा ।
अपहताऽअसुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः ॥२९॥
ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमानाऽअसुराः सन्तः स्वधया चरन्ति ।
परापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्टाँल्लोकात् प्रणुदात्यस्मात् ॥३०॥
अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम् ।
अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायिषत ॥३१॥

[क]नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे [र]नमो वः पितरः पितरो नमो वो गृहान्नः पितरो दत्त सतो वः पितरो देष्मैतद्वः पितरो वासः ॥३२॥

आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्। यथेह पुरुषोऽसत्॥३३॥

ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम् ।
स्वधा स्थ तर्पयत मे पितॄन् ॥३४॥

इति द्वितीयोऽध्यायः॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—विरूप आङ्गिरसः १। वसुश्रुतः २। भरद्वाजः ३, १३। प्रजापतिः ४, ५, ९, १०, ४४, ४५। सर्पराज्ञी कद्रूः ६–८। गोतमः ११, ५१, ५२। विरूपः १२। देववातभरतौ १४। वामदेवः १५, ३६, ३७। अवत्सारः १६–१९। याज्ञवल्क्यः २०, २१। वैश्वामित्रो मधुच्छन्दाः २२–२४। सुबन्धुः २५, २६। श्रुतबन्धुः २७। विप्रबन्धुः २८। मेधातिथिः २९। सत्यधृतिर्वारुणिः ३०–३३। मधुच्छन्दाः ३४। विश्वामित्रः ३५। आसुरिः ३८–४१। शँयुः ४२। शँयुर्बार्हस्पत्यः ४३। आगस्त्यः ४६, ४७। और्णवाभः ४८–५०। बन्धुः ५३–५९। वसिष्ठः ६०–६१। नारायणः ६२, ६३॥

देवता—अग्निः १–४, ६–८, ११, १२, १४–१९, २२–२७, ३६, ३८–४०, ४७। अग्निवायुसूर्याः ५। अग्निसूर्यौ ९। अग्निः[क], सूर्यः[र] १०। इन्द्राग्नी १३। आपः २०। विश्वेदेवाः २१। बृहस्पतिः २८, २९। ब्रह्मणस्पतिः ३०। आदित्यः ३१–३३। इन्द्रः ३४, ५०–५२। सविता ३५। प्रजापतिः ३७। वास्तुपतिरग्निः ४१, ४२। वास्तुपतिः ४३। मरुतः ४४, ४५। इन्द्रमारुतौ ४६। यज्ञः ४८, ४९। मनः ५३–५५। सोमः ५६। रुद्रः ५७–६३॥

छन्दः—गायत्री १, २, ४, ८, १६, २९, ४४, ५६। निचृद्गायत्री ३, ६, ११, १२, ३०, ३२, ३५, ३६, ५५। दैवीबृहती[क], निचृद्बृहती[र] ५। विराड्गायत्री ७, २३, २४, २७, २८, ३१, ३३, ५४। पङ्क्तिः[क], याजुषीपङ्क्तिः[र] ९। गायत्री[क], भुरिग्गायत्री[र] १०। विराट्त्रिष्टुप् १३। निचृदनुष्टुप् १४, ४०, ५७। भुरिक्त्रिष्टुप् १५। त्रिष्टुप् १७। निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः १८। जगती १९। भुरिग्बृहती २०, २५, ३९। उष्णिक् २१, ६२। भुरिगासुरीगायत्री[क], गायत्री[र] २२। स्वराड्बृहती २६। पथ्याबृहती ३४। ब्राह्म्युष्णिक् ३७। अनुष्टुप् ३८, ४२, ४९। आर्षीपङ्क्तिः ४१। भुरिग्जगती ४३, ६३। स्वराडनुष्टुप् ४५। भुरिक्पङ्क्तिः ४६। विराडनुष्टुप् ४७। ब्राह्म्यनुष्टुप् ४८। भुरिगनुष्टुप् ५०। विराट्पङ्क्तिः ५१, ५२, ५८। अतिपादनिचृद्गायत्री ५३। स्वराड्गायत्री ५९। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ६०। पङ्क्तिः ६१॥

स्वरः—षड्जः १–४, ६–८, १०–१२, १६, २२–२४, २७–३३, ३५, ३६, ४४, ५३–५६, ५९। मध्यमः ५, २०, २५, २६, ३४, ३९। पञ्चमः ९, १८, ४१, ४६, ५१, ५२, ५८, ६१। धैवतः १३, १५, १७, ६०। गान्धारः १४, ३८, ४०, ४२, ४५, ४७–५०, ५७। निषादः १९, ४३, ६३। ऋषभः २१, ३७, ६२॥

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥१॥

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे ॥२॥

तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य ॥३॥

उप त्वाग्ने हविष्मतीर्घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्व समिधो मम ॥४॥
[क]भूर्भुवः स्वर् [र]द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥५॥
आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन् मातरं पुरः। पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥६॥
अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती। व्यख्यन् महिषो दिवम् ॥७॥
त्रिꣳशद्धाम विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते। प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥८॥
[क]अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।
अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।
[र]ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥९॥
[क]सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या। जुषाणोऽअग्निर्वेतु स्वाहा।
[र]सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या। जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥१०॥
उपप्रयन्तोऽअध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये। आरेऽअस्मे च शृण्वते ॥११॥
अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति ॥१२॥
उभा वामिन्द्राग्नीऽआहुवध्याऽउभा राधसः सह मादयध्यै ।
उभा दाताराविषाꣳरयीणामुभा वाजस्य सातये हुवे वाम् ॥१३॥
अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः ।
तं जानन्नग्नऽआरोहाथा नो वर्द्धया रयिम् ॥१४॥
अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठोऽअध्वरेष्वीड्यः ।
यमप्नवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे ॥१५॥
अस्य प्रत्नामनु द्युतꣳशुक्रं दुदुह्रेऽअह्रयः। पयः सहस्रसामृषिम् ॥१६॥
तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाह्यायुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि वर्चोदाऽ
अग्नेऽसि वर्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण ॥१७॥
इन्धानास्त्वा शतꣳहिमा द्युमन्तꣳसमिधीमहि। वयस्वन्तो वयस्कृतꣳ
सहस्वन्तः सहस्कृतम्। अग्ने सपत्नदम्भनमदब्धासोऽअदाभ्यम्।
चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ॥१८॥

सं त्वमग्ने सूर्यस्य वर्चसागथाः समृषीणाꣳस्तुतेन। सं प्रियेण
धाम्ना समहमायुषा सं वर्चसा सं प्रजया सꣳरायस्पोषेण ग्मिषीय ॥१९॥
अन्ध स्थान्धो वो भक्षीय मह स्थ महो वो भक्षीयोर्ज स्थोर्जं वो
भक्षीय रायस्पोष स्थ रायस्पोषं वो भक्षीय ॥२०॥
रेवती रमध्वमस्मिन्योनावस्मिन् गोष्ठेऽस्मिँल्लोकेऽस्मिन् क्षये ।
इहैव स्त मापगात ॥२१॥
[क]सꣳहितासि विश्वरूप्यूर्जा माविश गौपत्येन ।
[र]उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्तऽएमसि ॥२२॥
राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्। वर्द्धमानꣳस्वे दमे ॥२३॥
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ॥२४॥
अग्ने त्वं नोऽअन्तमऽउत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः ।
वसुरग्निर्वसुश्रवाऽअच्छा नक्षि द्युमत्तमꣳरयिं दाः ॥२५॥
तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ।
स नो बोधि श्रुधी हवमुरुष्या णोऽअघायतः समस्मात् ॥२६॥
इडऽएह्यदितऽएहि काम्याऽएत। मयि वः कामधरणं भूयात् ॥२७॥
सोमानꣳस्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं यऽऔशिजः ॥२८॥
यो रेवान् योऽअमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्द्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः ॥२९॥
मा नः शꣳसोऽअररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य। रक्षा णो ब्रह्मणस्पते ॥३०॥
महि त्रीणामवोऽस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः। दुराधर्षं वरुणस्य ॥३१॥
नहि तेषाममा चन नाध्वसु वारणेषु। ईशे रिपुरघशꣳसः ॥३२॥
ते हि पुत्रासोऽअदितेः प्र जीवसे मर्त्याय। ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम् ॥३३॥
कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन् भूयऽइन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥३४॥
तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥३५॥
परि ते दूडभो रथोऽस्माँ२॥ऽअश्नोतु विश्वतः। येन रक्षसि दाशुषः ॥३६॥
भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याꣳसुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि शꣳस्य पशून् मे पाह्यथर्य पितुं मे पाहि ॥३७॥

आगन्म विश्ववेदसमस्मभ्यं वसुवित्तमम् ।
अग्ने सम्राडभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व ॥३८॥
अयमग्निर्गृहपतिर्गार्हपत्यः प्रजाया वसुवित्तमः ।
अग्ने गृहपतेऽभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व ॥३९॥
अयमग्निः पुरीष्यो रयिमान् पुष्टिवर्धनः ।
अग्ने पुरीष्याभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व ॥४०॥
गृहा मा बिभीत मा वेपध्वमूर्जं बिभ्रतऽएमसि ।
ऊर्जं बिभ्रद्वः सुमनाः सुमेधा गृहानैमि मनसा मोदमानः ॥४१॥
येषामध्येति प्रवसन् येषु सौमनसो बहुः ।
गृहानुपह्वयामहे ते नो जानन्तु जानतः ॥४२॥
उपहूताऽइह गावऽउपहूताऽअजावयः। अथोऽअन्नस्य कीलालऽउपहूतो
गृहेषु नः। क्षेमाय वः शान्त्यै प्रपद्ये शिवꣳशग्मꣳशंयोःशंयोः॥४३॥
प्रघासिनो हवामहे मरुतश्च रिशादसः। करम्भेण सजोषसः॥४४॥
यद् ग्रामे यदरण्ये यत् सभायां यदिन्द्रिये ।
यदेनश्चकृमा वयमिदं तदवयजामहे स्वाहा ॥४५॥
मो षू णऽइन्द्रात्र पृत्सु देवैरस्ति हि ष्मा ते शुष्मिन्नवयाः ।
महश्चिद्यस्य मीढुषो यव्या हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः ॥४६॥
अक्रन् कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा ।
देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः ॥४७॥
अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः ।
अव देवैर्देवकृतमेनोऽयासिषमव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि॥४८॥
पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत ।
वस्नेव विक्रीणावहाऽइषमूर्जꣳ शतक्रतो ॥४९॥
देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे ।
निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा॥५०॥

अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रियाऽअधूषत ।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी ॥५१॥
सुसन्दृशं त्वा वयं मघवन् वन्दिषीमहि ।
प्र नूनं पूर्णबन्धुर स्तुतो यासि वशाँ२॥ऽअनु योजा न्विन्द्र ते हरी ॥५२॥
मनो न्वाह्वामहे नाराशꣳसेन स्तोमेन। पितॄणां च मन्मभिः ॥५३॥
आ नऽएतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे। ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥५४॥
पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः। जीवं व्रातꣳसचेमहि ॥५५॥
वयꣳसोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि ॥५६॥
एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तं जुषस्व
स्वाहैष ते रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः ॥५७॥
अव रुद्रमदीमह्यव देवं त्र्यम्बकम् ।
यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात् ॥५८॥
भेषजमसि भेषजं गवेऽश्वाय पुरुषाय भेषजम्। सुखं मेषाय मेष्यै ॥५९॥
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ॥६०॥
एतत्ते रुद्रावसं तेन परो मूजवतोऽतीहि ।
अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासाऽअहिꣳसन्नः शिवोऽतीहि॥६१॥
त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥६२॥
शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः ।
निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥६३॥

इति तृतीयोऽध्यायः॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—प्रजापतिः १-७। आत्रेयः ८। आङ्गिरसः ९-१५। वत्सः १६-३६। गोतमः ३७॥

देवता—अबोषध्यौ १। आपः २, १२, १३। मेघः ३। परमात्मा ४। यज्ञः ५, ६, १०, २४, २६, ३७। अग्न्यब्बृहस्पतयः ७। ईश्वरः ८। विद्वान् ९, २७। अग्निः ११, १४-१७, २८, २९, ३२। वाग्विद्युतौ १८-२३। सविता २५। वरुणः ३०, ३१। सूर्यविद्वांसौ ३३। यजमानः ३४। सूर्यः ३५, ३६॥

छन्दः—विराड्ब्राह्मीजगती १। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २। भुरिगार्चीत्रिष्टुप् ३। निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः ४, १९। निचृदार्ष्यनुष्टुप् ५, ६, २९, ३२। पङ्क्तिः[क], आर्षीबृहती[र] ७। आर्ष्यनुष्टुप् ८। आर्षीपङ्क्तिः ९। निचृदार्षीजगती[क], साम्नीत्रिष्टुप्[र] १०। स्वराड्ब्राह्म्यनुष्टुप्[क], आर्ष्युष्णिक्[र] ११। भुरिग्ब्राह्म्यनुष्टुप् १२। भुरिगार्षीबृहती १३। स्वराडार्ष्युष्णिक् १४। ब्राह्मीबृहती १५। भुरिगार्षीपङ्क्तिः १६। आर्चीत्रिष्टुप् १७। स्वराडार्षीबृहती १८। साम्नीजगती[क], भुरिगार्ष्युष्णिक्[र] २०। विराडार्षीबृहती २१। ब्राह्मीपङ्क्तिः २२। आस्तारपङ्क्तिः २३। ब्राह्मीजगती[क], याजुषी-पङ्क्तिः[र] २४। भुरिक्शक्वरी[क], भुरिगार्षीगायत्री[र] २५। भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः २६, २७। साम्नी-बृहती[क], साम्न्युष्णिक्[र] २८। स्वराड्याजुषीत्रिष्टुप्[क], आर्षीत्रिष्टुप्[र] ३०। विराडार्षीत्रिष्टुप् ३१। निचृदार्षीगायत्री[क], याजुषीजगती[र] ३३। भुरिगार्चीगायत्री[क], भुरिगार्चीबृहती[र], विराडार्च्यनुष्टुप्[उ] ३४। निचृदार्षीजगती ३५। विराड्ब्राह्मीबृहती ३६। निचृदार्षीत्रिष्टुप् ३७॥

स्वरः—निषादः १, ३५। धैवतः २, ३, १७, ३०, ३१, ३७। पञ्चमः ४, ९, १६, १९, २२, २३, २६, २७। गान्धारः ५, ६, ८, १२, २९, ३२। पञ्चमः[क], मध्यमः[र] ७। निषादः[क], धैवतः[र] १०। गान्धारः[क], ऋषभः[र] ११। मध्यमः १३, १५, १८, २१, ३६। ऋषभः १४। निषादः[क], ऋषभः[र] २०। निषादः[क], पञ्चमः[र] २४। धैवतः[क] षड्जः[र] २५। मध्यमः[क], ऋषभः[र] २८। षड्जः[क], निषादः[र] ३३। षड्जः[क], मध्यमः[र], गान्धारः[उ] ३४॥

एदमगन्म देवयजनं पृथिव्या यत्र देवासोऽअजुषन्त विश्वे ।
ऋक्सामाभ्याᳬंसन्तरन्तो यजुर्भी रायस्पोषेण समिषा मदेम ।
इमाऽआपः शमु मे सन्तु देवीरोषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳहिꣳसीः ॥१॥
आपोऽअस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ।
विश्वꣳहि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि ।
दीक्षातपसोस्तनूरसि तां त्वा शिवाᳬंशग्मां परिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन् ॥२॥

महीनां पयोऽसि वर्चोदाऽअसि वर्चो मे देहि ।
वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दाऽअसि चक्षुर्मे देहि ॥३॥
चित्पतिर्मा पुनातु वाक्पतिर्मा पुनातु देवो मा सविता
पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।
तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥४॥
आ वो देवासऽईमहे वामं प्रयत्यध्वरे ।
आ वो देवासऽआशिषो यज्ञियासो हवामहे ॥५॥
स्वाहा यज्ञं मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात् स्वाहा
द्यावापृथिवीभ्याᳬंस्वाहा वातादारभे स्वाहा ॥६॥
[क]आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा मेधायै मनसेऽग्नये स्वाहा दीक्षायै
तपसेऽग्नये स्वाहा सरस्वत्यै पूष्णेऽग्नये स्वाहा। [र]आपो देवीर्बृहतीर्विश्व-
शम्भुवो द्यावापृथिवीऽउरोऽअन्तरिक्ष। बृहस्पतये हविषा विधेम स्वाहा॥७॥
विश्वो देवस्य नेतुर्मर्तो वुरीत सख्यम् ।
विश्वो रायऽइषुध्यति द्युम्नं वृणीत पुष्यसे स्वाहा ॥८॥
ऋक्सामयोः शिल्पे स्थस्ते वामारभे ते मा पातमास्य यज्ञस्योदृचः।
शर्मासि शर्म मे यच्छ नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः ॥९॥
[क]ऊर्गस्याङ्गिरस्यूर्णम्रदाऽऊर्जं मयि धेहि। सोमस्य नीविरसि
विष्णोः शर्मासि शर्म यजमानस्येन्द्रस्य योनिरसि सुसस्याः कृषीस्कृधि।
[र]उच्छ्रयस्व वनस्पतऽऊर्ध्वो मा पाह्यꣳहसऽआस्य यज्ञस्योदृचः॥१०॥
[क]व्रतं कृणुताग्निर्ब्रह्माग्निर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः ।
दैवीं धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसꣳसुतीर्था
नोऽअसद्वशे। [र]ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षक्रतवस्ते नोऽवन्तु
ते नः पान्तु तेभ्यः स्वाहा ॥११॥
श्वात्राः पीता भवत यूयमापोऽअस्माकमन्तरुदरे सुशेवाः ।
ताऽअस्मभ्यमयक्ष्माऽअनमीवाऽअनागसः स्वदन्तु देवीरमृताऽऋतावृधः ॥१२॥

Divya Yog Mandir Library 24/5/07 Haridwar S-1499

इयं ते यज्ञिया तनूरपो मुञ्चामि न प्रजाम् ।
अꣳहोमुचः स्वाहाकृताः पृथिवीमाविशत पृथिव्या सम्भव ॥१३॥
अग्ने त्वꣳ सु जागृहि वयꣳ सु मन्दिषीमहि ।
रक्षा णोऽअप्रयुच्छन् प्रबुधे नः पुनस्कृधि ॥१४॥
पुनर्मनः पुनरायुर्मऽआगन्पुनः प्राणः पुनरात्मा मऽआगन्पुनश्चक्षुः
पुनः श्रोत्रं मऽआगन्। वैश्वानरोऽअदब्धस्तनूपाऽअग्निर्नः
पातु दुरितादवद्यात् ॥१५॥
त्वमग्ने व्रतपाऽअसि देवऽआ मर्त्येष्वा। त्वं यज्ञेष्वीड्यः ।
रास्वेयत्सोमा भूयो भर देवो नः सविता वसोर्दाता वस्वदात् ॥१६॥
एषा ते शुक्र तनूरेतद्वर्चस्तया सम्भव भ्राजङ्गच्छ ।
जूरसि धृता मनसा जुष्टा विष्णवे ॥१७॥
तस्यास्ते सत्यसवसः प्रसवे तन्वो यन्त्रमशीय स्वाहा ।
शुक्रमसि चन्द्रमस्यमृतमसि वैश्वदेवमसि ॥१८॥
चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि क्षत्रियासि
यज्ञियास्यदितिरस्युभयतः शीर्ष्णी। सा नः सुप्राची
सुप्रतीच्येधि मित्रस्त्वा पदि बध्नीतां पूषाऽध्वनस्पात्विन्द्रायाध्यक्षाय ॥१९॥
[क]अनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु
सखा सयूथ्यः। [र]सा देवि देवमच्छेहीन्द्राय सोमꣳरुद्रस्त्वावर्त्तयतु
स्वस्ति सोमसखा पुनरेहि ॥२०॥
वस्व्यस्यदितिरस्यादित्यासि रुद्रासि चन्द्रासि ।
बृहस्पतिष्ट्वा सुम्ने रम्णातु रुद्रो वसुभिराचके ॥२१॥
अदित्यास्त्वा मूर्द्धन्नाजिघर्मि देवयजने पृथिव्याऽइडायास्पदमसि
घृतवत् स्वाहा। अस्मे रमस्वास्मे ते बन्धुस्त्वे रायो मे रायो मा
वयꣳ रायस्पोषेण वियौष्म तोतो रायः ॥२२॥
समख्ये देव्या धिया सं दक्षिणयोरुचक्षसा ।
मा मऽआयुः प्रमोषीर्मोऽअहं तव वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि ॥२३॥

[क]एष ते गायत्रो भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते त्रैष्टुभो
भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते जागतो भागऽइति मे
सोमाय ब्रूताच्छन्दोनामानाꣳसाम्राज्यङ्गच्छेति मे सोमाय
ब्रूतादास्माकोऽसि शुक्रस्ते [र]ग्रह्यो विचितस्त्वा विचिन्वन्तु ॥२४॥
[क]अभि त्यं देवꣳसवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवꣳ
रत्नधामभि प्रियं मतिं कविम्। ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भाऽ
अदिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत [र]सुक्रतुः कृपा स्वः।
प्रजाभ्यस्त्वा प्रजास्त्वाऽनुप्राणन्तु प्रजास्त्वमनुप्राणिहि ॥२५॥
शुक्रं त्वा शुक्रेण क्रीणामि चन्द्रं चन्द्रेणामृतममृतेन ।
सग्मे ते गोरस्मे ते चन्द्राणि तपसस्तनूरसि प्रजापतेर्वर्णः
परमेण पशुना क्रीयसे सहस्रपोषं पुषेयम् ॥२६॥
मित्रो नऽएहि सुमित्रधऽइन्द्रस्योरुमाविश दक्षिणमुशन्नुशन्तꣳस्योनः
स्योनम्। स्वान भ्राजाङ्घारे बम्भारे हस्त सुहस्त कृशानवेते वः
सोमक्रयणास्तान्रक्षध्वं मा वो दभन् ॥२७॥
[क]परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वा मा सुचरिते भज ।
[र]उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृताँ२॥ऽअनु ॥२८॥
प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम् ।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥२९॥
[क]अदित्यास्त्वगस्यदित्यै सदऽआसीद ।
[र]अस्तभ्नाद् द्यां वृषभोऽअन्तरिक्षममिमीत वरिमाणम्पृथिव्याः।
आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड् विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि ॥३०॥
वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पयऽउस्रियासु ।
हृत्सु क्रतुं वरुणो विक्ष्वग्निं दिवि सूर्यमदधात् सोममद्रौ ॥३१॥
सूर्यस्य चक्षुरारोहाग्नेरक्ष्णः कनीनकम् ।
यत्रैतशेभिरीयसे भ्राजमानो विपश्चिता ॥३२॥

[क]उस्रावेतं धूर्षाहौ युज्येथामनश्रूऽअवीरहणौ ब्रह्मचोदनौ ।
[र]स्वस्ति यजमानस्य गृहान् गच्छतम् ॥३३॥
[क]भद्रो मेऽसि प्रच्यवस्व भुवस्पते विश्वान्यभि धामानि। [र]मा त्वा
परिपरिणो विदन्मा त्वा परिपन्थिनो विदन्मा त्वा वृकाऽअघायवो
विदन्। [उ]श्येनो भूत्वा परापत यजमानस्य गृहान् गच्छ तन्नौ सँस्कृतम् ॥३४॥
नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतꣳसपर्यत ।
दूरेदृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शꣳसत ॥३५॥
वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्यऽ
ऋतसदन्यसि वरुणस्यऽऋतसदनमसि वरुणस्यऽऋतसदनमासीद ॥३६॥
या ते धामानि हविषा यजन्ति ता ते विश्वा परिभूरस्तु यज्ञम् ।
गयस्फानः प्रतरणः सुवीरोऽवीरहा प्रचरा सोम दुर्यान् ॥३७॥

इति चतुर्थोऽध्यायः॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—गोतमः १-१४। मेधातिथिः १५। वसिष्ठः १६, १७। औतथ्यो दीर्घतमा १८-२९। मधुच्छन्दाः ३०-३५। आगस्त्यः ३६-४३॥

देवता—विष्णुः १, १५-२१, ३८, ४१। विष्णुर्यज्ञः २। यज्ञः ३, १३, २२, २३, २५-२८, ४३। अग्निः ४, ६, ८, ९, ३१-३७, ४०, ४२। विद्युत् ५। सोमः ७। वाक् १०-१२। सविता १४। सूर्यविद्वांसौ २४। ईश्वरसभाध्यक्षौ २९, ३०। सोमसवितारौ ३९॥

छन्दः—स्वराड्ब्राह्मीबृहती १, ३४। आर्षीगायत्री [क], आर्चीत्रिष्टुप् [र] २। आर्षीपङ्क्तिः ३। आर्षीत्रिष्टुप् ४। आर्ष्युष्णिक् [क], भुरिगार्षीपङ्क्तिः [र] ५। विराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः ६। आर्षीबृहती [क], आर्षीजगती [र] ७। विराडार्षीबृहती [क], निचृदार्षीबृहती [र,उ] ८। भुरिगार्षीगायत्री [१], भुरिग्ब्राह्मीबृहती [२], निचृद्ब्राह्मीजगती [३], याजुष्यनुष्टुप् [४] ९। ब्राह्म्युष्णिक् १०। निचृद् ब्राह्मीत्रिष्टुप् ११, ४०। भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः १२। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् १३, २४, ३८, ४१। स्वराडार्षीजगती १४। भुरिगार्षीगायत्री १५। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् १६, १८। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् १७, ३२, ४२। निचृदार्षीजगती १९। विराडार्षीत्रिष्टुप् २०। भुरिगार्चीपङ्क्तिः २१। साम्नीपङ्क्तिः[क], भुरिगार्षीबृहती [र] २२। याजुषीबृहती [उ], आसुरीगायत्री [क], ब्राह्म्यनुष्टुप् [ख], स्वराड्ब्राह्म्युष्णिक् [र] २३। ब्राह्मीबृहती [क], आर्षीपङ्क्तिः[र] २५। निचृदार्षीपङ्क्तिः[क], निचृदार्षीत्रिष्टुप् [र] २६। ब्राह्मीजगती २७। आर्षीजगती २८। अनुष्टुप् २९। आर्च्युष्णिक् ३०। विराडार्ष्यनुष्टुप् ३१। ब्राह्मीपङ्क्तिः ३३। विराड्ब्राह्मीबृहती ३५। निचृदार्चीत्रिष्टुप् ३६। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् ३७। साम्नीबृहती [क], निचृदार्षीपङ्क्तिः[र] ३९। ब्राह्मीत्रिष्टुप् ४३॥

स्वरः—मध्यमः १, ८, ३४, ३५। षड्जः[क], धैवतः[र] २। पञ्चमः ३, ६, १२, २१, ३३। धैवतः ४, ११, १६-१८, २०, ३२, ३६, ३७, ४०, ४२, ४३। ऋषभः[क], पञ्चमः[र] ५। मध्यमः[क], निषादः[र] ७। षड्जः[१], मध्यमः[२], निषादः[३], गान्धारः[४] ९। ऋषभः १०, ३०। गान्धारः १३, २४, २९, ३१, ३८, ४१। निषादः १४, १९, २७, २८। षड्जः १५। पञ्चमः[क], मध्यमः[र] २२। मध्यमः[उ], षड्जः[क], गान्धारः[ख], ऋषभः[र] २३। मध्यमः[क], पञ्चमः[र] २५। पञ्चमः[क], धैवतः[र] २६। मध्यमः[क], पञ्चमः[र] ३९॥

अग्नेस्तनूरसि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूरसि विष्णवे
त्वाऽतिथेरातिथ्यमसि विष्णवे त्वा श्येनाय त्वा सोमभृते
विष्णवे त्वाऽग्नये त्वा रायस्पोषदे विष्णवे त्वा ॥१॥
[क]अग्नेर्जनित्रमसि वृषणौ स्थऽउर्वश्यस्यायुरसि पुरूरवाऽअसि ।
[र]गायत्रेण त्वा छन्दसा मन्थामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा मन्थामि
जागतेन त्वा छन्दसा मन्थामि ॥२॥

भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ ।
मा यज्ञꣳहिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः ॥३॥
अग्नावग्निश्चरति प्रविष्टऽऋषीणां पुत्रोऽअभिशस्तिपावा ।
स नः स्योनः सुयजा यजेह देवेभ्यो हव्यꣳसदमप्रयुच्छन्त्स्वाहा ॥४॥
[क]आपतये त्वा परिपतये गृह्णामि तनूनप्त्रे शाक्वराय शक्वनऽओजिष्ठाय ।
[ख]अनाधृष्टमस्यनाधृष्यं देवानामोजोऽनभिशस्त्यभिशस्तिपाऽ
अनभिशस्तेन्यमञ्जसा सत्यमुपगेषꣳस्विते मा धाः ॥५॥
अग्ने व्रतपास्त्वे व्रतपा या तव तनूरियꣳसा मयि यो मम तनूरेषा सा त्वयि ।
सह नौ व्रतपते व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षापतिर्मन्यतामनु तपस्तपस्पतिः ॥६॥
[क]अꣳशुरꣳशुष्टे देव सोमाप्यायतामिन्द्रायैकधनविदे ।
आ तुभ्यमिन्द्रः प्यायतामा त्वमिन्द्राय प्यायस्व ।
[ख]आप्याययास्मान्त्सखीन्त्सन्न्या मेधया स्वस्ति ते देव सोम सुत्यामशीय ।
एष्टा रायः प्रेषे भगायऽऋतमृतवादिभ्यो नमो द्यावापृथिवीभ्याम् ॥७॥
[क]या तेऽअग्नेऽयःशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा ।
उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा ।
[ख]या तेऽअग्ने रजःशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा ।
उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा ।
[ग]या तेऽअग्ने हरिशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा ।
उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा ॥८॥
[१]तप्तायनी मेऽसि वित्तायनी मेऽस्यवतान्मा नाथितादवतान्मा
व्यथितात् । [२]विदेदग्निर्नभो नामाग्नेऽअङ्गिरऽआयुना नाम्नेहि
योऽस्यां पृथिव्यामसि यत्तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा दधे
विदेदग्निर्नभो नामाग्नेऽअङ्गिरऽआयुना [३]नाम्नेहि यो द्वितीयस्यां
पृथिव्यामसि यत्तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा दधे विदेदग्निर्नभो
नामाग्नेऽअङ्गिरऽआयुना नाम्नेहि यस्तृतीयस्यां पृथिव्यामसि
यत्तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा दधे । [४]अनु त्वा देववीतये ॥९॥

सिꣳह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः कल्पस्व सिꣳह्यसि सपत्नसाही
देवेभ्यः शुन्धस्व सिꣳह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः शुम्भस्व ॥१०॥
इन्द्रघोषस्त्वा वसुभिः पुरस्तात्पातु प्रचेतास्त्वा रुद्रैः पश्चात्पातु
मनोजवास्त्वा पितृभिर्दक्षिणतः पातु विश्वकर्मा त्वादित्यैरुत्तरतः
पात्विदमहं तप्तं वार्बहिर्धा यज्ञान्निःसृजामि ॥११॥
सिꣳह्यसि स्वाहा सिꣳह्यस्यादित्यवनिः स्वाहा सिꣳह्यसि
ब्रह्मवनिः क्षत्रवनिः स्वाहा सिꣳह्यसि सुप्रजावनी रायस्पोषवनिः
स्वाहा सिꣳह्यस्यावह देवान्यजमानाय स्वाहा भूतेभ्यस्त्वा ॥१२॥
ध्रुवोऽसि पृथिवीं दृꣳह ध्रुवक्षिदस्यन्तरिक्षं दृꣳहाच्युतक्षिदसि
दिवं दृꣳहाग्नेः पुरीषमसि ॥१३॥
युञ्जते मनऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः स्वाहा ॥१४॥
इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ॥१५॥
इरावती धेनुमती हि भूतꣳसूयवसिनी मनवे दशस्या ।
व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा ॥१६॥
देवश्रुतौ देवेष्वाघोषतं प्राची प्रेतमध्वरं कल्पयन्तीऽऊर्ध्वं यज्ञं नयतं
मा जिह्वरतम् । स्वं गोष्ठमावदतं देवी दुर्येऽआयुर्मा निर्वादिष्टं प्रजां
मा निर्वादिष्टमत्र रमेथां वर्ष्मन् पृथिव्याः ॥१७॥
विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजाꣳसि ।
योऽअस्कभायदुत्तरꣳसधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णवे त्वा ॥१८॥
दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽउरोरन्तरिक्षात् ।
उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा ॥१९॥
प्र तद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः ।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥२०॥

विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि।
वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥२१॥

[क]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
[ग]आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवाऽअपि कृन्तामि ।
बृहन्नसि बृहद्रवा बृहतीमिन्द्राय वाचं वद ॥२२॥

[उ]रक्षोहणं वलगहनं [क]वैष्णवीमिदमहं तं वलगमुत्किरामि [ख]यं मे निष्ट्यो
यममात्यो निचखानेदमहं तं वलगमुत्किरामि यं मे समानो यमसमानो
निचखानेदमहं तं वलगमुत्किरामि [ग]यं मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेदमहं
तं वलगमुत्किरामि यं मे सजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥२३॥

स्वराडसि सपत्नहा सत्रराडस्यभिमातिहा
जनराडसि रक्षोहा सर्वराडस्यमित्रहा ॥२४॥

[क]रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो
वलगहनोऽवनयामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि
वैष्णवान्रक्षोहणौ [ग]वां वलगहनाऽउपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ
वां वलगहनौ पर्यूहामि वैष्णवी वैष्णवमसि वैष्णवा स्थ ॥२५॥

[क]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवाऽअपिकृन्तामि। [ग]यवोऽसि
यवयास्मद् द्वेषो यवयारातीर्दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वा
शुन्धन्ताँल्लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसि ॥२६॥

उद्दिवꣳस्तभानान्तरिक्षं पृण दृꣳहस्व पृथिव्यां द्युतानस्त्वा मारुतो
मिनोतु मित्रावरुणौ ध्रुवेण धर्मणा। ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि
रायस्पोषवनि पर्यूहामि। ब्रह्म दृꣳह क्षत्रं दृꣳहायुर्दृꣳह प्रजां दृꣳह॥२७॥

ध्रुवासि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात्।
घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथामिन्द्रस्य छदिरसि विश्वजनस्य छाया॥२८॥

परि त्वा गिर्वणो गिरऽइमा भवन्तु विश्वतः ।
वृद्धायुमनु वृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः ॥२९॥

इन्द्रस्य स्यूरसीन्द्रस्य ध्रुवोऽसि। ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ॥३०॥

विभूरसि प्रवाहणो वह्निरसि हव्यवाहनः ।
श्वात्रोऽसि प्रचेतास्तुथोऽसि विश्ववेदाः ॥३१॥

उशिगसि कविरङ्घारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाञ्छुन्ध्यूरसि
मार्जालीयः सम्राडसि कृशानुः परिषद्योऽसि पवमानो नभोऽसि
प्रतक्वा मृष्टोऽसि हव्यसूदनऽऋतधामासि स्वर्ज्योतिः ॥३२॥

समुद्रोऽसि विश्वव्यचाऽअजोऽस्येकपादहिरसि बुध्न्यो वागस्यैन्द्रमसि
सदोऽस्यृतस्य द्वारौ मा मा सन्ताप्तमध्वनामध्वपते प्र मा तिर
स्वस्ति मेऽस्मिन् पथि देवयाने भूयात् ॥३३॥

मित्रस्य मा चक्षुषेक्षध्वमग्नयः सगराः सगरा स्थ सगरेण
नाम्ना रौद्रेणानीकेन पात माग्नयः पिपृत माग्नयो गोपायत
मा नमो वोऽस्तु मा मा हिꣳसिष्ट ॥३४॥

ज्योतिरसि विश्वरूपं विश्वेषां देवानाꣳसमित्। त्वꣳसोम
तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यऽउरु यन्तासि वरूथꣳस्वाहा
जुषाणोऽअप्तुराज्यस्य वेतु स्वाहा ॥३५॥

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम॥३६॥

अयं नोऽअग्निर्वरिवस्कृणोत्वयं मृधः पुरऽएतु प्रभिन्दन्।
अयं वाजाञ्जयतु वाजसातावयꣳशत्रूञ्जयतु जर्हृषाणः स्वाहा॥३७॥

उरु विष्णो विक्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि ।
घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर स्वाहा ॥३८॥

[क]देव सवितरेष ते सोमस्तꣳरक्षस्व मा त्वा दभन् ।
[ग]एतत्त्वं देव सोम देवो देवाँ२॥ऽउपागाऽइदमहं मनुष्यान्त्सह
रायस्पोषेण स्वाहा निर्वरुणस्य पाशान्मुच्ये ॥३९॥

अग्ने व्रतपास्त्वे व्रतपा या तव तनूर्मय्यभूदेषा सा त्वयि
यो मम तनूस्त्वय्यभूदियꣳसा मयि। यथायथं नौ व्रतपते
व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षापतिरमꣳस्तानु तपस्तपस्पतिः ॥४०॥
उरु विष्णो विक्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि ।
घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर स्वाहा ॥४१॥
अत्यन्याँ२॥ऽअगां नान्याँ२॥ऽउपागामर्वाक् त्वा परेभ्योऽविदं परोऽवरेभ्यः। तं त्वा जुषामहे देव वनस्पते देवयज्यायै देवास्त्वा देवयज्यायै जुषन्तां विष्णवे त्वा। ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳहिꣳसीः॥४२॥
द्यां मा लेखीरन्तरिक्षं मा हिꣳसीः पृथिव्या सम्भव ।
अयꣳहि त्वा स्वधितिस्तेतिजानः प्रणिनाय महते सौभगाय ।
अतस्त्वं देव वनस्पते शतवल्शो विरोह सहस्रवल्शा वि वयꣳरुहेम॥४३॥

इति पञ्चमोऽध्यायः॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

—:o:—

ऋषिः–आगस्त्यः १। शाकल्यः २। दीर्घतमा ३, ६, ८, ९, १७-२३। मेधातिथिः ४, ५, ७, १०-१६, २४-२८। मधुच्छन्दाः २९-३६। गोतमः ३७॥

देवता–सविता १, २, ३०। विष्णुः ३, ४, ५। विद्वांसः ६, १२, १४, १५। त्वष्टा ७, २०। बृहस्पतिः ८। सविता, अश्विनौ, पूषा ९। आपः १०, १३, १७, २७। वातः ११। द्यावापृथिव्यौ १६, ३५। अग्निः १८, २९। विश्वेदेवाः १९। सेनापतिः २१। वरुणः २२। अप्-यज्ञ-सूर्याः २३। लिङ्गोक्ताः २४। सोमः २५, २६, ३३, ३६। प्रजा २८। प्रजासभ्यराजानः ३१। सभापतीराजा ३२। यज्ञः ३४। इन्द्रः ३७॥

छन्दः–निचृत्पङ्क्तिः[उ], आसुर्युष्णिक्[क], भुरिगार्ष्युष्णिक्[र] १। निचृद्गायत्री[क], स्वराट्पङ्क्तिः[र] २। आर्च्युष्णिक्[उ], भुरिगार्च्युष्णिक्[क], निचृत्प्राजापत्याबृहती[र] आसुरीगायत्री[ख] ३। निचृदार्षीगायत्री ४। गायत्री ५। आर्ष्युष्णिक्[क], भुरिक्साम्नीबृहती ६। निचृदार्षीबृहती ७। प्राजापत्यानुष्टुप्[क], भुरिक्प्राजापत्याबृहती[र] ८। प्राजापत्याबृहती[क], पङ्क्तिः[र], याजुषीत्रिष्टुप्[उ] ९। प्राजापत्याबृहती[क], विराडार्चीबृहती[र] १०। भुरिगार्ष्युष्णिक्[क,र], स्वराडार्च्युष्णिक्[उ] ११। भुरिक्प्राजापत्यानुष्टुप् भुरिगासुर्यनुष्टुप्[र] १२। निचृदार्ष्यनुष्टुप् १३, २३, २८। भुरिगार्षीजगती १४। भुरिगार्चीत्रिष्टुप्[क], आर्षीपङ्क्तिः[र] १५। ब्राह्म्युष्णिक्[क,र] १६। निचृद्ब्राह्म्यनुष्टुप् १७। प्राजापत्यानुष्टुप्[क] दैवीपङ्क्तिः[र], आर्चीपङ्क्तिः[उ] १८। ब्राह्म्यनुष्टुप् १९। ब्राह्मीत्रिष्टुप् २०। साम्नी[क], ब्राह्मी[ख], भुरिगार्षी[र], आर्ष्युष्णिक्[र] २१। स्वराडब्राह्म्युष्णिक्[क], त्रिपाद्विराड्गायत्री[र] २२। आर्षीत्रिष्टुप्[क], त्रिपाद्गायत्री[र] २४। विराडार्ष्यनुष्टुप् २५। भुरिग्गायत्री[क], आर्षीत्रिष्टुप्[र] २६। निचृदार्षीत्रिष्टुप् २७। भुरिगार्षीगायत्री २९। स्वराडार्षीपङ्क्तिः[क], निचृदार्ष्यनुष्टुप्[र] ३०। ब्राह्म्युष्णिक्[क], आर्ष्युष्णिक्[र] ३१। पञ्चपान्मध्येज्योतिष्मतीजगती ३२। भुरिगार्षीबृहती ३३। स्वराडार्षीबृहती ३४। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् ३५, ३७। उष्णिक् ३६॥

स्वरः–पञ्चमः[उ], ऋषभः[क,र] १। षड्जः,[क] पञ्चमः[र] २। ऋषभः[उ,क], मध्यमः[र] षड्जः[ख] ३। षड्जः ४, ५, २९। ऋषभः[क], मध्यमः[र] ६। मध्यमः ७, १०, ३३, ३४। गान्धारः[क], मध्यमः[र] ८। मध्यमः[क], पञ्चमः[र], धैवतः[उ] ९। ऋषभः ११, १६, २१, ३१, ३६। गान्धारः १२, १३, १७, १९, २३, २५, २८, ३५, ३७। निषादः १४, ३२। धैवतः[क] पञ्चमः[र] १५। गान्धारः[क], पञ्चमः[र,उ] १८। धैवतः २०, २७। ऋषभः[क], षड्जः[र] २२। धैवतः[क] षड्जः[र] २४। षड्जः[क], धैवतः[र] २६। पञ्चमः[क], गान्धारः[र] ३०॥

[उ]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवाऽअपिकृन्तामि ।
[क]यवोऽसि यवयास्मद् द्वेषो यवयारातीर् [र]दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय
त्वा पृथिव्यै त्वा शुन्धन्ताँल्लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसि ॥१॥

[क]अग्रेणीरसि स्वावेशऽउन्नेतृणामेतस्य वित्तादधि त्वा स्थास्यति
[र]देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु सुपिप्पलाभ्यस्त्वौषधीभ्यः ।
द्यामग्रेणास्पृक्षऽआन्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपरेणादृꣳहीः ॥२॥
[उ]या ते धामान्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गाऽअयासः ।
[क]अत्राह तदुरुगायस्य विष्णोः परमं पदमवभारि भूरि ।
[र]ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि रायस्पोषवनि पर्यूहामि ।
ब्रह्म दृꣳह क्षत्रं दृꣳहायुर्दृꣳह प्रजां दृꣳह ॥३॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥४॥
तद्विष्णोः परमं पदꣳसदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥५॥
[क]परिवीरसि परि त्वा दैवीर्विशो व्ययन्तां परीमं यजमानꣳरायो
मनुष्याणाम् । [र]दिवः सूनुरस्येष ते पृथिव्याँल्लोकऽआरण्यस्ते पशुः ॥६॥
उपावीरस्युप देवान्दैवीर्विशः प्रागुरुशिजो वह्नितमान् ।
देव त्वष्टर्वसु रम हव्या ते स्वदन्ताम् ॥७॥
[क]रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि ।
[र]ऋतस्य त्वा देवहविः पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुषः ॥८॥
[क]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
[र]अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनज्मि । अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा
माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः ।
अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि ॥९॥
[क]अपां पेरुरस्यापो देवीः स्वदन्तु स्वात्तं चित्सद्देवहविः ।
[र]सं ते प्राणो वातेन गच्छताꣳ समङ्गानि यजत्रैः सं यज्ञपतिराशिषा ॥१०॥
[क]घृतेनाक्तौ पशूँस्त्रायेथाꣳ रेवति यजमाने प्रियं धाऽआविश ।
[र]उरोरन्तरिक्षात्सजूर्देवेन वातेनास्य हविषस्त्मना यज समस्य तन्वा भव ।
[उ]वर्षो वर्षीयसि यज्ञे यज्ञपतिं धाः स्वाहा देवेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥११॥

माहिर्भूर्मा पृदाकुर्नमस्तऽआतानानर्वा प्रेहि ।
[र]घृतस्य कुल्याऽउपऽऋतस्य पथ्याऽअनु ॥१२॥
देवीरापः शुद्धा वोढ्वꣳ सुपरिविष्टा देवेषु
सुपरिविष्टा वयं परिवेष्टारो भूयास्म ॥१३॥
वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि
श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि
पायुं ते शुन्धामि चरित्राँस्ते शुन्धामि ॥१४॥
[क]मनस्तऽआप्यायतां वाक् तऽआप्यायतां प्राणस्तऽआप्यायतां
चक्षुस्तऽआप्यायताꣳ श्रोत्रं तऽआप्यायताम् । [र]यत्ते क्रूरं यदास्थितं
तत्तऽआप्यायतां निष्ट्यायतां तत्ते शुध्यतु शमहोभ्यः ।
ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳहिꣳसीः ॥१५॥
[क]रक्षसां भागोऽसि निरस्तꣳरक्षऽइदमहꣳरक्षोऽभितिष्ठामीदमहꣳ
रक्षोऽवबाधऽइदमहꣳरक्षोऽधमं तमो नयामि । [र]घृतेन द्यावापृथिवी
प्रोर्णुवाथां वायो वे स्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा
स्वाहाकृतेऽऊर्ध्वनभसं मारुतं गच्छतम् ॥१६॥
इदमापः प्रवहतावद्यं च मलं च यत् ।
यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपेऽअभीरुणम् ।
आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु ॥१७॥
[क]सं ते मनो मनसा सं प्राणः प्राणेन गच्छताम् ।
[र]रेडस्यग्निष्ट्वा श्रीणात्वापस्त्वा समरिणन्वातस्य त्वा ध्राज्यै
पूष्णो रꣳह्याऽऊष्मणो व्यथिषत्प्रयुतं द्वेषः ॥१८॥
घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि
स्वाहा । दिशः प्रदिशऽआदिशो विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥१९॥
ऐन्द्रः प्राणोऽअङ्गेऽअङ्गे निदीध्यदैन्द्रऽउदानोऽअङ्गेऽअङ्गे निधीतः ।
देव त्वष्टर्भूरि ते सꣳसमेतु सलक्ष्मा यद्विषुरूपं भवाति ।
देवत्रा यन्तमवसे सखायोऽनु त्वा माता पितरो मदन्तु ॥२०॥

[क]समुद्रं गच्छ स्वाहान्तरिक्षं गच्छ स्वाहा [ख]देवꣳसवितारं
गच्छ स्वाहा मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहाहोरात्रे गच्छ स्वाहा
छन्दाꣳसि गच्छ स्वाहा द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा [ग]यज्ञं गच्छ
स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यं नभो गच्छ स्वाहाग्निं वैश्वानरं
गच्छ स्वाहा [घ]मनो मे हार्दि यच्छ दिवं ते धूमो गच्छतु
स्वर्ज्योतिः पृथिवीं भस्मनापृण स्वाहा ॥२१॥
[क]मापो मौषधीर्हिꣳसीर्धाम्नोधाम्नो राजँस्ततो वरुण नो मुञ्च।
यदाहुरघ्न्याऽइति वरुणेति शपामहे ततो वरुण नो मुञ्च ।
[ख]सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु
योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥२२॥
हविष्मतीरिमाऽआपो हविष्माँ२॥ऽआविवासति ।
हविष्मान्देवोऽअध्वरो हविष्माँ२॥ऽअस्तु सूर्यः ॥२३॥
[क]अग्नेर्वोऽपन्नगृहस्य सदसि सादयामीन्द्राग्न्योर्भागधेयी स्थ
मित्रावरुणयोर्भागधेयी स्थ विश्वेषां देवानां भागधेयी स्थ ।
[ख]अमूर्याऽउप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह। ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥२४॥
हृदे त्वा मनसे त्वा दिवे त्वा सूर्याय त्वा ।
ऊर्ध्वमिममध्वरं दिवि देवेषु होत्रा यच्छ ॥२५॥
[क]सोम राजन्विश्वास्त्वं प्रजाऽउपावरोह विश्वास्त्वां प्रजाऽउपावरोहन्तु।
[ख]शृणोत्वग्निः समिधा हवं मे शृण्वन्त्वापो धिषणाश्च देवीः।
श्रोता ग्रावाणो विदुषो न यज्ञꣳशृणोतु देवः सविता हवं मे स्वाहा ॥२६॥
देवीरापोऽअपान्नपाद्यो वऽऊर्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान् मदिन्तमः ।
तं देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषां भाग स्थ स्वाहा ॥२७॥
कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्याऽउन्नयामि ।
समापोऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः ॥२८॥

यमग्ने पृत्सु मर्त्यमवा वाजेषु यं जुनाः। स यन्ता शश्वतीरिषः स्वाहा ॥२९॥
[क]देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
आददे रावासि गभीरमिममध्वरं कृधीन्द्राय सुषूतमम् ।
[ख]उत्तमेन पविनोर्जस्वन्तं मधुमन्तं पयस्वन्तं निग्राभ्या स्थ
देवश्रुतस्तर्पयत मा ॥३०॥
[क]मनो मे तर्पयत वाचं मे तर्पयत प्राणं मे तर्पयत चक्षुर्मे मे
तर्पयत श्रोत्रं मे तर्पयतात्मानं मे तर्पयत [ख]प्रजां मे तर्पयत
पशून्मे तर्पयत गणान्मे तर्पयत गणा मे मा वितृषन् ॥३१॥
इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्रवतऽइन्द्राय त्वादित्यवतऽइन्द्राय
त्वाभिमातिघ्ने। श्येनाय त्वा सोमभृतेऽग्नये त्वा रायस्पोषदे ॥३२॥
यत्ते सोम दिवि ज्योतिर्यत्पृथिव्यां यदुरावन्तरिक्षे ।
तेनास्मै यजमानायोरु राये कृध्यधि दात्रे वोचः ॥३३॥
श्वात्रा स्थ वृत्रतुरो राधोगूर्त्ताऽअमृतस्य पत्नीः ।
ता देवीर्देवत्रेमं यज्ञं नयतोपहूताः सोमस्य पिबत ॥३४॥
मा भेर्मा संविक्थाऽऊर्जं धत्स्व धिषणे वीड्वी सती
वीडयेथामूर्जं दधाथाम्। पाप्मा हतो न सोमः ॥३५॥
प्रागपागुदगधराक्सर्वतस्त्वा दिशऽआधावन्तु ।
अम्ब निष्पर समरीर्विदाम् ॥३६॥
त्वमङ्ग प्रशꣳसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम् ।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः॥३७॥

इति षष्ठोऽध्यायः॥

अथ सप्तमोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—गोतमः १-६। वसिष्ठः ७। मधुच्छन्दाः ८, ३३। गृत्समदः ९, ३४। त्रिसदस्युः १०। मेधातिथिः ११। वत्सारः काश्यपः १२-२३। भरद्वाजः २४, २५, ३९। देवश्रवाः २६-३०। विश्वामित्रः ३१, ३५-३८। त्रिशोकः ३२। वत्सः ४०। प्रस्कण्वः ४१। कुत्सः ४२। आङ्गिरसः ४३-४८॥

देवता—प्राणः १। सोमः २, २१। विद्वांसः ३, ४६। मघवा ४। ईश्वरः ५। योगी ६। वायुः ७। इन्द्रवायू ८। मित्रावरुणौ ९, १०। अश्विनौ ११। विश्वेदेवाः १२-१७, १९, २२-२४, ३२-३४। प्रजापतिः १८, २९, ३०, ३५-३८, ४०, ४४, ४५। यज्ञः २०, २६। वैश्वानरः २५। यज्ञपतिः २७, २८। इन्द्राग्नी ३१। प्रजासेनापतिः ३९। सूर्यः ४१, ४२। अन्तर्यामी जगदीश्वरः ४३। वरुणः ४७। आत्मा ४८॥

छन्दः—निचृदार्ष्युनुष्टुप् १। निचृदार्षीपङ्क्तिः २। विराड्ब्राह्मीजगती ३। आर्ष्युष्णिक् ४, ४८। आर्षीपङ्क्तिः ५। भुरिक्त्रिष्टुप् ६। निचृज्जगती ७। आर्षीगायत्री[क], स्वराडार्षीगायत्री[र] ८। आर्षीगायत्री[क], आसुरीगायत्री[र] ९। ब्राह्मीबृहती १०। ब्राह्म्युष्णिक् ११। निचृदार्षीजगती[क], पङ्क्तिः[र] १२। निचृदार्षीत्रिष्टुप्[क], प्राजापत्यागायत्री[र] १३। विराड्जगती १४। निचृद्ब्राह्म्यनुष्टुप् १५। निचृदार्षीत्रिष्टुप्[क], साम्नीगायत्री[र] १६। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् १७। निचृत्त्रिष्टुप्[क], प्राजापत्यागायत्री[र] १८। भुरिगार्षीपङ्क्तिः १९। निचृदार्षीजगती २०। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप्[क], याजुषीजगती[र] २१। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २२। अनुष्टुप्[१], प्राजापत्यानुष्टुप्[२], स्वराट्साम्न्यनुष्टुप्[३], भुरिगार्चीगायत्री[४], भुरिक्साम्न्यनुष्टुप्[५] २३। आर्षीत्रिष्टुप् २४, ३१। याजुष्यनुष्टुप्[क], विराडार्षीबृहती[र,३] २५। स्वराड्ब्राह्मीबृहती २६। आसुर्यनुष्टुप्[१,२,६], आसुर्युष्णिक्[३,७], साम्नीगायत्री[४], आसुरीगायत्री[५] २७। ब्राह्मीबृहती २८। आर्चीपङ्क्तिः[क], भुरिक्साम्नीपङ्क्तिः[र] २९। साम्नीगायत्री[१,३,४,५,९,११], आसुर्यनुष्टुप्[२,६,१०,१२], याजुषीपङ्क्तिः[७,८], आसुर्युष्णिक्[१३] ३०। आर्षीगायत्री[क], आर्च्युष्णिक्[र] ३२। आर्षीगायत्री[क], आर्चीबृहती[र] ३३। आर्षीगायत्री[क], निचृदार्ष्युष्णिक्[र] ३४। आर्षीत्रिष्टुप्[क], आर्ष्युष्णिक्[र] ३५। विराडार्षीत्रिष्टुप्[१], आर्ष्युष्णिक्[२], साम्न्युष्णिक्[३] ३६। निचृदार्षीत्रिष्टुप्[क], प्राजापत्यात्रिष्टुप्[र] ३७, ३८। भुरिक्पङ्क्तिः[क], साम्नीत्रिष्टुप्[र] ३९। आर्षीगायत्री[क], विराडार्षीगायत्री[र] ४०। भुरिगार्षीगायत्री ४१। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् ४२-४४, ४६। विराड्जगती ४५। भुरिक्प्राजापत्याजगती[१], स्वराट्प्राजापत्याजगती[२], निचृदार्चीजगती[३], विराडार्चीजगती[४] ४७॥

स्वरः—गान्धारः १, १५। पञ्चमः २, ५, १९, २९। निषादः ३, ७, १४, २०, ४५, ४७। ऋषभः, ४, ११, ४८। धैवतः ६, १७, २२, २४, ३१, ३७, ३८, ४२-४४, ४६। षड्जः ८, ९, ४०, ४१। मध्यमः १०, २६, २८। निषादः[क], पञ्चमः[र] १२। धैवतः[क], षड्जः[र] १३, १६, १८। धैवतः[क], निषादः[र] २१। गान्धारः[१,२,३,५], षड्जः[४] २३। गान्धारः[क], मध्यमः[र,३] २५। गान्धारः[१,२,६], ऋषभः[३,७], षड्जः[४,५], २७। षड्जः[१,३,४,५,९,११], गान्धारः[२,६,१०,१२],

पञ्चमः[७,८], ऋषभः[१३] ३०। षड्जः[क], ऋषभः[र] ३२, ३४। षड्जः[क] मध्यमः[र] ३३। धैवतः[क], ऋषभः[र] ३५, ३६। पञ्चमः[क], धैवतः[र] ३९॥

वाचस्पतये पवस्व वृष्णोऽअꣳशुभ्यां गभस्तिपूतः ।
देवो देवेभ्यः पवस्व येषां भागोऽसि ॥१॥
मधुमतीर्नऽइषस्कृधि यत्ते सोमादाभ्यं नाम जागृवि
तस्मै ते सोम सोमाय स्वाहा स्वाहोर्वन्तरिक्षमन्वेमि ॥२॥
स्वाङ्कृतोऽसि विश्वेभ्यऽइन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः पार्थिवेभ्यो
मनस्त्वाष्टु स्वाहा त्वा सुभव सूर्याय देवेभ्यस्त्वा
मरीचिपेभ्यो देवांꣳशो यस्मै त्वेडे तत्सत्यमुपरिप्रुता भङ्गेन
हतोऽसौ फट् प्राणाय त्वा व्यानाय त्वा ॥३॥
उपयामगृहीतोऽस्यन्तर्यच्छ मघवन् पाहि सोमम् ।
उरुष्य रायऽएषो यजस्व ॥४॥
अन्तस्ते द्यावापृथिवी दधाम्यन्तर्दधाम्युर्वन्तरिक्षम् ।
सजूर्देवेभिरवरैः परैश्चान्तर्यामे मघवन् मादयस्व ॥५॥
स्वाङ्कृतोऽसि विश्वेभ्यऽइन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः पार्थिवेभ्यो
मनस्त्वाष्टु स्वाहा त्वा सुभव सूर्याय देवेभ्यस्त्वा
मरीचिपेभ्यऽउदानाय त्वा ॥६॥
आ वायो भूष शुचिपाऽउप नः सहस्रं ते नियुतो विश्ववार ।
उपो तेऽअन्धो मद्यमयामि यस्य देव दधिषे पूर्वपेयं वायवे त्वा ॥७॥
[क]इन्द्रवायूऽइमे सुताऽउप प्रयोभिरागतम्। इन्दवो वामुशन्ति हि ।
उपयामगृहीतोऽसि वायवऽइन्द्रवायुभ्यां त्वैष ते योनिः
सजोषोभ्यां त्वा ॥८॥
[क]अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोमऽऋतावृधा। ममेदिह श्रुतꣳहवम् ।
[र]उपयामगृहीतोऽसि मित्रावरुणाभ्यां त्वा ॥९॥
राया वयꣳससवाꣳसो मदेम हव्येन देवा यवसेन गावः ।
तां धेनुं मित्रावरुणा युवं नो विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीमेष
ते योनिर्ऋतायुभ्यां त्वा ॥१०॥

या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् ।
उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ॥११॥
[क]तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा ज्येष्ठतातिं बर्हिषदꣳस्वर्विदम् ।
प्रतीचीनं वृजनं दोहसे धुनिमाशुं जयन्तमनु यासु वर्धसे ।
[र]उपयामगृहीतोऽसि शण्डाय त्वैष ते योनिर्वीरतां पाह्यपमृष्टः
शण्डो देवास्त्वा शुक्रपाः प्रणयन्त्वनाधृष्टासि ॥१२॥
[क]सुवीरो वीरान् प्रजनयन् परीह्यभि रायस्पोषेण यजमानम् ।
सञ्जग्मानो दिवा पृथिव्या शुक्रः शुक्रशोचिषा निरस्तः
शण्डः [र]शुक्रस्याधिष्ठानमसि ॥१३॥
अच्छिन्नस्य ते देव सोम सुवीर्यस्य रायस्पोषस्य ददितारः स्याम ।
सा प्रथमा सँस्कृतिर्विश्ववारा स प्रथमो वरुणो मित्रोऽअग्निः ॥१४॥
स प्रथमो बृहस्पतिश्चिकित्वाँस्तस्माऽइन्द्राय सुतमाजुहोत स्वाहा ।
तृम्पन्तु होत्रा मध्वो याः स्विष्टा याः सुप्रीताः सुहुता यत्स्वाहायाडग्नीत् ॥१५॥
[क]अयं वेनश्चोदयत् पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने ।
इममपाꣳसङ्गमे सूर्यस्य शिशुं न विप्रा मतिभी रिहन्ति ।
[र]उपयामगृहीतोऽसि मर्काय त्वा ॥१६॥
मनो न येषु हवनेषु तिग्मं विपः शच्या वनुथो द्रवन्ता ।
आ यः शर्याभिस्तुविनृम्णोऽअस्याश्रीणीतादिशं गभस्तावेष
ते योनिः प्रजाः पाह्यपमृष्टो मर्को देवास्त्वा मन्थिपाः
प्रणयन्त्वनाधृष्टासि ॥१७॥
[क]सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन् परीह्यभि रायस्पोषेण यजमानम् ।
सञ्जग्मानो दिवा पृथिव्या मन्थी मन्थिशोचिषा
निरस्तो मर्को [र]मन्थिनोऽधिष्ठानमसि ॥१८॥
ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्यामध्येकादश स्थ ।
अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥१९॥

उपयामगृहीतोऽस्याग्रयणोऽसि स्वाग्रयणः । पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं
विष्णुस्त्वामिन्द्रियेण पातु विष्णुं त्वं पाह्यभि सवनानि पाहि ॥२०॥
[क]सोमः पवते सोमः पवतेऽस्मै ब्रह्मणेऽस्मै क्षत्रायास्मै सुन्वते
यजमानाय पवतऽइषऽऊर्जे पवतेऽद्भ्यऽओषधीभ्यः पवते
द्यावापृथिवीभ्यां पवते सुभूताय पवते विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यऽ
[र]एष ते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः ॥२१॥
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा बृहद्वते वयस्वतऽउक्थाव्यं गृह्णामि ।
यत्तऽइन्द्र बृहद्वयस्तस्मै त्वा विष्णवे त्वैष ते योनिरुक्थेभ्यस्त्वा
देवेभ्यस्त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामि ॥२२॥
[१]मित्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामीन्द्राय त्वा देवाव्यं
यज्ञस्यायुषे गृह्णामी[२]न्द्राग्निभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामी[३]न्द्रा-
वरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामी[४]न्द्राबृहस्पतिभ्यां त्वा देवाव्यं
यज्ञस्यायुषे गृह्णामी[५]न्द्राविष्णुभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामि ॥२३॥
मूर्द्धानं दिवोऽअरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् ।
कविꣳसम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥२४॥
[क]उपयामगृहीतोऽसि [र]ध्रुवोऽसि ध्रुवक्षितिर्ध्रुवाणां ध्रुवतमोऽच्युताना-
मच्युतक्षित्तमऽएष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा । [उ]ध्रुवं ध्रुवेण मनसा
वाचा सोममवनयामि । अथा नऽइन्द्रऽइद्विशोऽसपत्नाः समनसस्करत् ॥२५॥
यस्ते द्रप्स स्कन्दति यस्तेऽअꣳशुर्ग्रावच्युतो धिषणयोरुपस्थात् ।
अध्वर्योर्वा परि वा यः पवित्रात्तं ते जुहोमि मनसा
वषट्कृतꣳस्वाहा देवानामुत्क्रमणमसि ॥२६॥
[१]प्राणाय मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व [२]व्यानाय मे वर्चोदा वर्चसे
पवस्वो[३]दानाय मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व [४]वाचे मे वर्चोदा वर्चसे
पवस्व [५]क्रतूदक्षाभ्यां मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व [६]श्रोत्राय मे वर्चोदा
वर्चसे पवस्व [७]चक्षुर्भ्यां मे वर्चोदसौ वर्चसे पवेथाम् ॥२७॥

आ॒त्मने॑ मे वर्चो॒दा वर्च॑से पवस्वौज॑से मे वर्चो॒दा
वर्च॑से पव॒स्वायु॑षे मे वर्चो॒दा वर्च॑से पवस्व॒ विश्वा॑भ्यो मे
प्र॒जाभ्यो॑ वर्चो॒दसौ॒ वर्च॑से पवेथाम् ॥२८॥
[क]कोऽसि कत॒मोऽसि॒ कस्या॑सि॒ को नामा॑सि ।
यस्य॑ ते॒ नामाम॑न्महि॒ यं त्वा॒ सोमे॒नाती॑तृपाम ।
[२]भूर्भुव॒: स्व॒: सु॒प्र॒जाः प्र॒जाभि॑: स्या॒ꣳसु॒वीरो॑ वी॒रैः सु॒पोष॒: पोषै॑: ॥२९॥
[१]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि॒ मध॑वे [२]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि॒ माध॑वाय [३]त्वोपया॒म-
गृ॑हीतोऽसि शु॒क्राय॑ [४]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि॒ शुच॑ये [५]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि॒
नभ॑से [६]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि नभ॒स्या॒य [७]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसी॒षे [८]त्वोपया॒म-
गृ॑हीतोऽस्यू॒र्जे [९]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि॒ सह॑से [१०]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि
स॒ह॒स्या॒य [११]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि॒ तप॑से [१२]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽसि त॒प॒स्या॒य
[१३]त्वोपया॒मगृ॑हीतोऽस्यꣳहसस्पतये॑ त्वा ॥३०॥
इन्द्रा॑ग्नी॒ऽआग॑तꣳसु॒तं गी॒र्भिर्नभो॒ वरे॑ण्यम् । अ॒स्य पा॑तं धि॒येषि॒ता ।
उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसीन्द्रा॒ग्निभ्यां॑ त्वै॒ष ते॒ योनि॑रिन्द्रा॒ग्निभ्यां॑ त्वा ॥३१॥
[क]आ घा॒ येऽअ॒ग्निमि॑न्ध॒ते स्तृ॒णन्ति॑ ब॒र्हिरा॑नु॒षक् । येषा॒मिन्द्रो॒ युवा॒ सखा॑ ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽस्यग्नी॒न्द्राभ्यां॑ त्वै॒ष ते॒ योनि॑रग्नी॒न्द्राभ्यां॑ त्वा ॥३२॥
[क]ओमा॑सश्चर्षणीधृतो॒ विश्वे॑ देवास॒ऽआग॑त ।
दा॒श्वाꣳसो॑ दा॒शुष॑: सु॒तम् । [२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि॒
विश्वे॑भ्यस्त्वा दे॒वेभ्य॑ऽए॒ष ते॒ योनि॒र्विश्वे॑भ्यस्त्वा दे॒वेभ्य॑: ॥३३॥
[क]विश्वे॑ देवास॒ऽआग॑त शृणु॒ता म॑ इ॒मꣳहव॑म् ।
एदं ब॒र्हिर्निषी॑दत । [२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि॒ विश्वे॑भ्यस्त्वा
दे॒वेभ्य॑ऽए॒ष ते॒ योनि॒र्विश्वे॑भ्यस्त्वा दे॒वेभ्य॑: ॥३४॥
[क]इन्द्र॑ मरुत्वऽइ॒ह पा॑हि॒ सोमं॒ यथा॑ शार्या॒तेऽअपि॑बः सु॒तस्य॑ ।
तव॒ प्रणी॑ती॒ तव॑ शूर॒ शर्म॒न्नावि॑वासन्ति क॒वय॑: सुय॒ज्ञाः । [२]उ॒प॒या॒म-
गृ॑हीतो॒ऽसीन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑तऽए॒ष ते॒ योनि॒रिन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑ते ॥३५॥

[१]म॒रुत्व॑न्तं वृष॒भं वा॑वृधा॒नमक॑वारिं दि॒व्यꣳशा॒समिन्द्र॑म् ।
वि॒श्वा॒साह॒मव॑से॒ नूत॑नायो॒ग्रꣳस॑हो॒दामि॒ह तꣳहु॑वेम ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसीन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑तऽए॒ष ते॒ योनि॒रिन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑ते ।
[३]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि म॒रुतां॒ त्वौज॑से ॥३६॥
[क]स॒जोषा॑ऽइन्द्र॒ सग॑णो म॒रुद्भि॒: सोमं॑ पिब वृत्र॒हा शू॑र वि॒द्वान् ।
ज॒हि शत्रूँ॒१॥ऽरप॒ मृधो॑ नु॒दस्वाथाभ॑यं कृणुहि वि॒श्वतो॑ नः ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतो॒ऽसीन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑तऽए॒ष ते॒ योनि॒रिन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑ते ॥३७॥
[क]म॒रुत्वाँ॑२॥ऽइन्द्र वृष॒भो रणा॑य॒ पिबा॒ सोम॑मनुष्व॒धं मदा॑य ।
आसि॑ञ्चस्व ज॒ठरे॒ मध्व॑ऽऊ॒र्मिं त्वꣳराजा॑सि॒ प्रति॑पत्सु॒ताना॑म् ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतो॒ऽसीन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑तऽए॒ष ते॒ योनि॒रिन्द्रा॑य त्वा म॒रुत्व॑ते ॥३८॥
[क]म॒हाँ२॥ऽइन्द्रो॑ नृ॒वदाच॑र्षणि॒प्राऽउ॒त द्वि॒बर्हा॑ऽअमि॒नः सहो॑भिः ।
अ॒स्म॒द्र्य॒ग्वावृधे वी॒र्या॒योरु॒: पृ॒थुः सुकृ॑तः क॒र्तृभि॑र्भूत् ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि म॒हे॒न्द्राय॑ त्वै॒ष ते॒ योनि॑र्महे॒न्द्राय॑ त्वा ॥३९॥
[क]म॒हाँ२॥ऽइन्द्रो॒ यऽओज॑सा प॒र्जन्यो॑ वृ॒ष्टिमाँ॑२॥ऽइव । स्तोमै॑र्व॒त्सस्य॑ वावृधे ।
[२]उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽसि म॒हे॒न्द्राय॑ त्वै॒ष ते॒ योनि॑र्महे॒न्द्राय॑ त्वा ॥४०॥
उदु॒ त्यं जा॒तवे॑दसं दे॒वं व॑हन्ति के॒तव॑: । दृ॒शे विश्वा॑य॒ सूर्य॒ꣳस्वाहा॑ ॥४१॥
चि॒त्रं दे॒वाना॒मुद॑गा॒दनी॑कं॒ चक्षु॑र्मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्या॒ग्नेः ।
आप्रा॒ द्यावा॑पृथि॒वीऽअ॒न्तरि॑क्ष॒ꣳसूर्य॑ऽआ॒त्मा जग॑तस्त॒स्थुष॑श्च॒ स्वाहा॑ ॥४२॥
अग्ने॒ नय॑ सु॒पथा॑ रा॒येऽअ॒स्मान्विश्वा॑नि देव व॒युना॑नि वि॒द्वान् ।
यु॒यो॒ध्य॒स्मज्जु॑हुरा॒णमेनो॒ भूयि॑ष्ठां ते॒ नम॑ऽउक्तिं विधेम॒ स्वाहा॑ ॥४३॥
अ॒यं नो॑ऽअ॒ग्निर्वरि॑वस्कृणोत्व॒यं मृध॑: पु॒रऽए॑तु प्रभि॒न्दन् ।
अ॒यं वाजा॑ञ्जयतु॒ वाज॑साताव॒यꣳशत्रू॑ञ्जयतु॒ जर्हृ॑षाण॒: स्वाहा॑ ॥४४॥
रू॒पेण॑ वो रू॒पम॒भ्यागां॑ तु॒थो वो॑ वि॒श्ववे॑दा॒ विभ॑जतु ।
ऋ॒तस्य॑ प॒था प्रेत॑ च॒न्द्रद॑क्षिणा॒ वि स्व॒: पश्य॒
व्य॒न्तरि॑क्षं॒ यत॑स्व सद॒स्यैः ॥४५॥

ब्रा॒ह्म॒णम॒द्य वि॑देयं पि॒तृम॑न्तं पैतृ॒मत्य॒मृषि॑मार्षे॒यꣳसु॒धातु॑दक्षिणम्।
अ॒स्मद्रा॑ता देव॒त्रा ग॑च्छत प्रदा॒तार॒मावि॑शत ॥४६॥
[१]अ॒ग्नये॑ त्वा॒ मह्यं॒ वरु॑णो ददातु॒ सो॒ऽमृत॒त्वम॑शी॒यायु॑र्दा॒त्रऽए॑धि॒
मयो॒ मह्यं॑ प्रतिग्रही॒त्रे [२]रु॒द्राय॑ त्वा॒ मह्यं॒ वरु॑णो ददातु॒
सो॒ऽमृत॒त्वम॑शीय प्रा॒णो दा॒त्रऽए॑धि॒ वयो॒ मह्यं॑ प्रतिग्रही॒त्रे
[३]बृह॒स्पत॑ये त्वा॒ मह्यं॒ वरु॑णो ददातु॒ सो॒ऽमृत॒त्वम॑शीय॒
त्वग्दा॒त्रऽए॑धि॒ मयो॒ मह्यं॑ प्रतिग्रही॒त्रे [४]य॒माय॑ त्वा॒ मह्यं॒ वरु॑णो
ददातु॒ सो॒ऽमृत॒त्वम॑शीय॒ हयो॑ दा॒त्रऽए॑धि॒ वयो॒ मह्यं॑ प्रतिग्रही॒त्रे॥४७॥
को॑ऽदा॒त्कस्मा॑ऽअदा॒त्कामो॑ऽदा॒त्कामा॑यादात्।
कामो॑ दा॒ता काम॑ः प्रतिग्रही॒ता कामै॒तत्ते॑ ॥४८॥

इति सप्तमोऽध्यायः॥

अथाष्टमोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—आङ्गिरसः १-३। कुत्सः ४, ५। भरद्वाजः ६-१४। अत्रिः १५-२२, २४-३०। अत्रिः[उ], शुनःशेपः[क] २३। गोतमः ३१, ३३, ३५। मेधातिथिः ३२। मधुच्छन्दाः ३४। विवस्वान् ३६, ३७। वैखानसः ३८, ३९। प्रस्कण्वः ४०, ४१। कुसुरुविन्दुः ४२, ४३। शासः ४४-४७। देवाः ४८-५३। वसिष्ठः ५४-६२। कश्यपः ६३॥

देवता—बृहस्पतिस्सोमः १। गृहपतिर्मघवा २। आदित्यो गृहपतिः ३, ४। गृहपतयः ५, ६, १०-१२, १४-१६, १८, २०-२६, ३३-३५, ५३। सविता गृहपतिः ७। विश्वेदेवा गृहपतयः ८, १७, १९। गृहपतयो विश्वेदेवाः ९, १३। दम्पती २७-३२। परमेश्वरः ३६। सम्राड्माण्डलिकौ राजानौ ३७। राजादयो गृहपतयः ३८, ४०। राजादयो गृहस्थाः ३९। सूर्यः ४१। पत्नीः ४२, ४३। इन्द्रः ४४। ईश्वरसभेशौ राजानौ ४५। विश्वकर्मेन्द्रः ४६, ४७। प्रजापतयः ४८, ५०। विश्वेदेवाः प्रजापतयः ४९। प्रजापतयो गृहस्थाः ५१। प्रजापतिः ५२। परमेष्ठी प्रजापतिः ५४। इन्द्रादयः ५५। विश्वेदेवाः गृहस्थाः ५६। विश्वेदेवाः ५७-६१। यज्ञः ६२, ६३॥

छन्दः—आर्चीपङ्क्तिः १। भुरिगार्षीपङ्क्तिः २। निचृदार्षीपङ्क्तिः ३। निचृज्जगती ४। प्राजापत्यानुष्टुप्[क], निचृदार्षीजगती[र] ५। निचृदार्षीत्रिष्टुप् ६, १९। विराड्ब्राह्म्यनुष्टुप् ७। प्राजापत्यागायत्री[क], निचृदार्षीबृहती[र] ८। प्राजापत्यागायत्री[उ], आर्ष्युष्णिक्[क], स्वराडार्षीपङ्क्तिः[र] ९। विराड्ब्राह्मीबृहती १०, ४७। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् ११। आर्षीपङ्क्तिः १२, ४३, ५५। निचृत्साम्न्युष्णिक्[१,३,४], साम्न्युष्णिक्[२], प्राजापत्योष्णिक्[५], निचृदार्ष्युष्णिक्[६] १३। विराडार्षीत्रिष्टुप् १४, १६। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् १५, ३६। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् १७, २०, ६२। आर्षीत्रिष्टुप् १८, २४। स्वराडार्ष्युष्णिक् २१। विराडार्च्युष्णिक्[क], विराडार्चीबृहती[र] २२। याजुष्युष्णिक्[उ], निचृदार्षीत्रिष्टुप्[क], आसुरीगायत्री[र] २३। भुरिगार्षीपङ्क्तिः २५। स्वराडार्षीबृहती २६। भुरिक्प्राजापत्यानुष्टुप्[क], स्वराडार्षीबृहती[र] २७। भुरिक्साम्न्युष्णिक्[उ], प्राजापत्यानुष्टुप्[क] भुरिगासुर्युष्णिक्[र], २८। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् २९। आर्षीजगती ३०। आर्षीगायत्री ३१, ३२। आर्ष्यनुष्टुप्[क], आर्ष्युष्णिक्[र] ३३। विराडार्ष्यनुष्टुप्[क], विराडार्ष्युष्णिक्[र] ३४। विराडार्ष्यनुष्टुप्[क], आर्ष्युष्णिक्[र] ३५। साम्नीत्रिष्टुप्[क], विराडार्चीत्रिष्टुप्[र] ३७। भुरिक्त्रिपादनिचृद्गायत्री[उ], स्वराडार्च्यनुष्टुप्[क], भुरिगार्च्यनुष्टुप्[र] ३८। आर्षीगायत्री[उ,क], आर्च्युष्णिक्[र] ३९। आर्षीगायत्री[उ,क], स्वराडार्षीगायत्री[र] ४०। निचृदार्षीगायत्री[क], स्वराडार्षीगायत्री[र] ४१। स्वराड्ब्राह्म्युष्णिक् ४२। निचृदनुष्टुप्[क], स्वराडार्षीगायत्री[र] ४४। भुरिगार्षीत्रिष्टुप्[क], विराडार्ष्यनुष्टुप्[र] ४५। निचृदार्षीत्रिष्टुप्[क], विराडार्ष्यनुष्टुप्[र] ४६। आसुरीत्रिष्टुप्[१], याजुषीजगती[२,४,५], याजुषीत्रिष्टुप्[३], साम्नीबृहती[६] ४८। विराट्प्राजापत्याजगती[क], निचृदार्ष्युष्णिक्[र] ४९। भुरिगार्षीजगती ५०, ५१। निचृदार्षीबृहती ५२। आर्ष्यनुष्टुप्[१], आसुर्युष्णिक्[२], प्राजापत्याबृहती[३], विराट्प्राजा-पत्यापङ्क्तिः[४] ५३। निचृद्ब्राह्म्युष्णिक् ५४। आर्षीबृहती ५६। निचृद्ब्राह्मीबृहती ५७।

निचृदार्षीजगती ५८। निचृदार्षीजगती[क], विराडार्षीगायत्री[र] ५९। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ६०। ब्राह्म्युष्णिक् ६१। स्वराडार्षीगायत्री ६३॥

स्वरः–पञ्चमः १-३, १२, २५, ४३, ५५। निषादः ४, ३०, ५०, ५१, ५८। गान्धारः[क], निषादः[र] ५। धैवतः ६, १४-२०, २४, ३६, ३७, ६०, ६२। गान्धारः ७, ११, २९। षड्जः[क], मध्यमः[र] ८। षड्जः[उ], ऋषभः[क], पञ्चमः[र] ९। मध्यमः १०, २६, ४७, ५२, ५६, ५७। ऋषभः १३, २१, ४२, ५४, ६१। ऋषभः[क], मध्यमः[र] २२। ऋषभः[उ], धैवतः[क], षड्जः[र] २३। गान्धारः[क], मध्यमः[र] २७। ऋषभः[उ,र], गान्धारः[क] २८। षड्जः ३१, ३२, ४०, ४१, ६३। गान्धारः[क], ऋषभः[र] ३३, ३४, ३५। षड्जः[उ], गान्धारः[क,र], ३८। षड्जः[उ,क], ऋषभः[र]. ३९। गान्धारः[क], षड्जः[र] ४४। धैवतः[क], गान्धारः[र] ४५, ४६। धैवतः[१,३], निषादः[२,४,५], मध्यमः[६] ४८। निषादः[क], ऋषभः[र], ४९। गान्धारः[१], ऋषभः[२], मध्यमः[३], पञ्चमः[४] ५३। निषादः[क], षड्जः[र] ५९॥

उपयामगृहीतोऽस्यादित्येभ्यस्त्वा ।
विष्णऽउरुगायैष ते सोमस्तꣳरक्षस्व मा त्वा दभन् ॥१॥
कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन्भूयऽइन्नु ते दानं देवस्य पृच्यतऽआदित्येभ्यस्त्वा ॥२॥
कदा चन प्रयुच्छस्युभे निपासि जन्मनी ।
तुरीयादित्य सवनं तऽइन्द्रियमातस्थावमृतं दिव्यादित्येभ्यस्त्वा ॥३॥
यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नमादित्यासो भवता मृडयन्तः ।
आ वोऽर्वाची सुमतिर्ववृत्यादꣳहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासदादित्येभ्यस्त्वा ॥४॥
[क]विवस्वन्नादित्यैष ते सोमपीथस्तस्मिन् मत्स्व ।
[र]श्रदस्मै नरो वचसे दधातन यदाशीर्दा दम्पती वाममश्नुतः ।
पुमान् पुत्रो जायते विन्दते वस्वधा विश्वाहारपऽएधते गृहे ॥५॥
वाममद्य सवितर्वाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यꣳसावीः ।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम ॥६॥
उपयामगृहीतोऽसि सावित्रोऽसि चनोधाश्चनोधाऽअसि चनो मयि धेहि।
जिन्व यज्ञं जिन्व यज्ञपतिं भगाय देवाय त्वा सवित्रे ॥७॥
[क]उपयामगृहीतोऽसि [र]सुशर्मासि सुप्रतिष्ठानो बृहदुक्षाय नमः ।
विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यऽएष ते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः ॥८॥

[उ]उपयामगृहीतोऽसि [क]बृहस्पतिसुतस्य देव सोम तऽइन्दोरिन्द्रियावतः
पत्नीवतो ग्रहाँ२॥ऽऋध्यासम्। [र]अहं परस्तादहमवस्ताद्यदन्तरिक्षं तदु
मे पिताभूत्। अहꣳसूर्यमुभयतो ददर्शाहं देवानां परमं गुहा यत् ॥९॥
अग्ना३॥ऽइ पत्नीवन्त्सजूर्देवेन त्वष्ट्रा सोमं पिब स्वाहा। प्रजापतिर्वृषासि
रेतोधा रेतो मयि धेहि प्रजापतेस्ते वृष्णो रेतोधसो रेतोधामशीय ॥१०॥
उपयामगृहीतोऽसि हरिरसि हारियोजनो हरिभ्यां त्वा ।
हर्योर्धाना स्थ सहसोमाऽइन्द्राय ॥११॥
यस्तेऽअश्वसनिर्भक्षो यो गोसनिस्तस्य तऽइष्टयजुष स्तुतस्तोमस्य
शस्तोक्थस्योपहूतस्योपहूतो भक्षयामि ॥१२॥
[१]देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि [२]मनुष्यकृतस्यैनसोऽवयजनमसि
[३]पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमस्यात्मकृतस्यैनसोऽवयजनमस्येनसऽएनसोऽ
वयजनमसि। [६]यच्चाहमेनो विद्वाँश्चकार यच्चाविद्वाँस्तस्य
सर्वस्यैनसोऽवयजनमसि ॥१३॥
सं वर्चसा पयसा सं तनूभिरगन्महि मनसा सꣳशिवेन ।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ॥१४॥
समिन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः सꣳसूरिभिर्मघवन्त्सꣳस्वस्त्या।
सं ब्रह्मणा देवकृतं यदस्ति सं देवानाꣳसुमतौ यज्ञियानाꣳस्वाहा ॥१५॥
सं वर्चसा पयसा सं तनूभिरगन्महि मनसा सꣳशिवेन ।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ॥१६॥
धाता रातिः सवितेदं जुषन्तां प्रजापतिर्निधिपा देवोऽअग्निः।
त्वष्टा विष्णुः प्रजया सꣳरराणा यजमानाय द्रविणं दधात स्वाहा ॥१७॥
सुगा वो देवाः सदनाऽअकर्म यऽआजग्मेदꣳसवनं जुषाणाः।
भरमाणा वहमाना हवीꣳष्यस्मे धत्त वसवो वसूनि स्वाहा ॥१८॥
याँ२॥ऽआवहऽउशतो देव देवाँस्तान् प्रेरय स्वेऽअग्ने सधस्थे।
जक्षिवाꣳसः पपिवाꣳसश्च विश्वेऽसुं घर्मꣳस्वरातिष्ठतानु स्वाहा ॥१९॥

वयꣳहि त्वा प्रयति यज्ञेऽअस्मिन्नग्ने होतारमवृणीमहीह ।
ऋधगयाऽऋधगुताशमिष्ठाः प्रजानन् यज्ञमुपयाहि विद्वान्त्स्वाहा ॥२०॥
देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित ।
मनसस्पतऽइमं देव यज्ञꣳस्वाहा वाते धाः ॥२१॥
[क]यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा ।
[र]एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा ॥२२॥
[उ]माहिर्भूर्मा पृदाकुः । [क]उरुꣳहि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवाऽउ ।
अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ।
[र]नमो वरुणायाभिष्ठितो वरुणस्य पाशः ॥२३॥
अग्नेरनीकमपऽआविवेशापान्नपात् प्रतिरक्षन्नसुर्यम् ।
दमेदमे समिधं यक्ष्यग्ने प्रति ते जिह्वा घृतमुच्चरण्यत् स्वाहा ॥२४॥
समुद्रे ते हृदयमप्स्वन्तः सं त्वा विशन्त्वोषधीरुतापः ।
यज्ञस्य त्वा यज्ञपते सूक्तोक्तौ नमोवाके विधेम यत् स्वाहा ॥२५॥
देवीरापऽएष वो गर्भस्तꣳसुप्रीतꣳसुभृतं बिभृत ।
देव सोमैष ते लोकस्तस्मिञ्छञ्च वक्ष्व परि च वक्ष्व ॥२६॥
[क]अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः ।
[र]अव देवैर्देवकृतमेनोऽयासिषमव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं
पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि । देवानाꣳसमिदसि ॥२७॥
[उ]एजतु दशमास्यो गर्भो जरायुणा सह ।
[क]यथायं वायुरेजति यथा समुद्रऽएजति ।
[र]एवायं दशमास्योऽअस्रज्जरायुणा सह ॥२८॥
यस्यै ते यज्ञियो गर्भो यस्यै योनिर्हिरण्ययी ।
अङ्गान्यह्रुता यस्य तं मात्रा समजीगमꣳस्वाहा ॥२९॥
पुरुदस्मो विषुरूपऽइन्दुरन्तर्महिमानमानञ्ज धीरः ।
एकपदीं द्विपदीं त्रिपदीं चतुष्पदीमष्टापदीं भुवनानु प्रथन्ताꣳस्वाहा ॥३०॥

मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो विमहसः । स सुगोपातमो जनः ॥३१॥
मही द्यौः पृथिवी च नऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पिपृतां नो भरीमभिः ॥३२॥
[क]आतिष्ठ वृत्रहन्रथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी ।
अर्वाचीनꣳसु ते मनो ग्रावा कृणोतु वग्नुना । [र]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय
त्वा षोडशिनऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा षोडशिने ॥३३॥
[क]युक्ष्वा हि केशिना हरी वृषणा कक्ष्यप्रा ।
अथा नऽइन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर । [र]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय
त्वा षोडशिनऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा षोडशिने ॥३४॥
[क]इन्द्रमिद्धरी वहतोऽप्रतिधृष्टशवसम् ।
ऋषीणां च स्तुतीरुप यज्ञं च मानुषाणाम् । [र]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय
त्वा षोडशिनऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा षोडशिने ॥३५॥
यस्मान्न जातः परोऽअन्योऽअस्ति यऽआविवेश भुवनानि विश्वा ।
प्रजापतिः प्रजया सꣳरराणस्त्रीणि ज्योतीꣳषि सचते स षोडशी ॥३६॥
[क]इन्द्रश्च सम्राड् वरुणश्च राजा तौ ते भक्षं चक्रतुरग्रऽएतम् ।
[र]तयोरहमनु भक्षं भक्षयामि वाग्देवी जुषाणा सोमस्य तृप्यतु
सह प्राणेन स्वाहा ॥३७॥
[उ]अग्ने पवस्व स्वपाऽअस्मे वर्चः सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयि पोषम् ।
[क]उपयामगृहीतोऽस्यग्नये त्वा वर्चसऽएष ते योनिरग्नये त्वा वर्चसे ।
[र]अग्ने वर्चस्विन्वर्चस्वाँस्त्वं देवेष्वसि वर्चस्वानहं मनुष्येषु भूयासम् ॥३८॥
[उ]उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रेऽअवेपयः । सोममिन्द्र चमू सुतम् ।
[क]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वौजसऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वौजसे ।
[र]इन्द्रौजिष्ठौजिष्ठस्त्वं देवेष्वस्योजिष्ठोऽहं मनुष्येषु भूयासम् ॥३९॥
[उ]अदृश्रमस्य केतवो वि रश्मयो जनाँ२ऽअनु । भ्राजन्तो अग्नयो यथा ।
[क]उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजायैष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजाय ।
[र]सूर्य भ्राजिष्ठ भ्राजिष्ठस्त्वं देवेष्वसि भ्राजिष्ठोऽहं मनुष्येषु भूयासम् ॥४०॥

[क]उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्। [ख]उपयाम-
गृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजायैष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजाय ॥४१॥
आजिघ्र कलशं मह्या त्वा विशन्त्विन्दवः। पुनरूर्जा निवर्त्तस्व
सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्माविशताद्रयिः ॥४२॥
इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति।
एता तेऽअघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मां सुकृतं ब्रूतात् ॥४३॥
[क]वि नऽइन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः।
योऽअस्माँ२॥ऽअभिदासत्यधरं गमया तमः।
[ख]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा विमृधऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा विमृधे ॥४४॥
[क]वाचस्पतिं विश्वकर्माणमूतये मनोजुवं वाजेऽअद्या हुवेम।
स नो विश्वानि हवनानि जोषद्विश्वशम्भूरवसे साधुकर्मा।
[ख]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा विश्वकर्मणऽएष
ते योनिरिन्द्राय त्वा विश्वकर्मणे ॥४५॥
[क]विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम्।
तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत्।
[ख]उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा विश्वकर्मणऽएष ते
योनिरिन्द्राय त्वा विश्वकर्मणे ॥४६॥
उपयामगृहीतोऽस्यग्नये त्वा गायत्रच्छन्दसं गृह्णामीन्द्राय
त्वा त्रिष्टुप्छन्दसं गृह्णामि विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो
जगच्छन्दसं गृह्णाम्यनुष्टुप्तेऽभिगरः ॥४७॥
[१]व्रेशीनां त्वा पत्मन्नाधूनोमि [२]कुकूननानां त्वा पत्मन्नाधूनोमि।
[३]भन्दनानां त्वा पत्मन्नाधूनोमि [४]मदिन्तमानां त्वा पत्मन्नाधूनोमि।
[५]मधुन्तमानां त्वा पत्मन्नाधूनोमि [६]शुक्रं त्वा शुक्रऽआधूनोम्यह्नो
रूपे सूर्यस्य रश्मिषु ॥४८॥

[क]ककुभꣳरूपं वृषभस्य रोचते बृहच्छुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः
सोमः सोमस्य पुरोगाः। [ख]यत्ते सोमादाभ्यं नाम जागृवि तस्मै
त्वा गृह्णामि तस्मै ते सोम सोमाय स्वाहा ॥४९॥
उशिक् त्वं देव सोमाग्नेः प्रियं पाथोऽपीहि वशी त्वं देव
सोमेन्द्रस्य प्रियं पाथोऽपीह्यस्मत्सखा त्वं देव सोम विश्वेषां
देवानां प्रियं पाथोऽपीहि ॥५०॥
इह रतिरिह रमध्वमिह धृतिरिह स्वधृतिः स्वाहा।
उपसृजन्धरुणं मात्रे धरुणो मातरं धयन्।
रायस्पोषमस्मासु दीधरत् स्वाहा ॥५१॥
सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृताऽअभूम।
दिवं पृथिव्याऽअध्यारुहामाविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः ॥५२॥
[१]युवं तमिन्द्रापर्वता पुरोयुधा यो नः पृतन्यादप तन्तमिद्धतं
वज्रेण तन्तमिद्धतम्। [२]दूरे चत्ताय छन्त्सद् गहनं यदिनक्षत्।
[३]अस्माकꣳशत्रून् परि शूर विश्वतो दर्मा दर्षीष्ट विश्वतः।
[४]भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याम सुवीरा वीरैः सुपोषाः पोषैः ॥५३॥
परमेष्ठ्यभिधीतः प्रजापतिर्वाचि व्याहृतायामन्धोऽअच्छेतः।
सविता सन्यां विश्वकर्मा दीक्षायां पूषा सोमक्रयण्याम् ॥५४॥
इन्द्रश्च मरुतश्च क्रयायोपोत्थितोऽसुरः पण्यमानो मित्रः क्रीतो
विष्णुः शिपिविष्टऽऊरावासन्नो विष्णुर्नरन्धिषः ॥५५॥
प्रोह्यमाणः सोमऽआगतो वरुणऽआसन्द्यामासन्नोऽग्निराग्नीध्रऽइन्द्रो
हविर्द्धानेऽथर्वोपावह्रियमाणः ॥५६॥
विश्वे देवाऽअꣳशुषु न्युप्तो विष्णुराप्रीतपाऽआप्याय्यमानो यमः
सूयमानो विष्णुः सम्भ्रियमाणो वायुः पूयमानः शुक्रः पूतः।
शुक्रः क्षीरश्रीर्मन्थी सक्तुश्रीः ॥५७॥

विश्वे देवाश्चमसेषून्नीतोऽसुर्होमायोद्यतो रुद्रो
हूयमानो वातोऽभ्यावृतो नृचक्षाः प्रतिख्यातो भक्षो
भक्ष्यमाणः पितरो नाराशꣳसाः ॥५८॥
[क]सन्नः सिन्धुरवभृथायोद्यतः समुद्रोऽभ्यवह्रियमाणः सलिलः
प्रप्लुतो ययोरोजसा स्कभिता रजाᳫंसि वीर्येभिर्वीरतमा शविष्ठा।
[र]या पत्येतेऽअप्रतीता सहोभिर्विष्णूऽअगन्वरुणा पूर्वहूतौ ॥५९॥
देवान् दिवमगन्यज्ञस्ततो मा द्रविणमष्टु मनुष्यानन्तरिक्षमगन्यज्ञस्ततो
मा द्रविणमष्टु पितृन् पृथिवीमगन्यज्ञस्ततो मा द्रविणमष्टु यं
कं च लोकमगन्यज्ञस्ततो मे भद्रमभूत् ॥६०॥
चतुस्त्रिꣳशत्तन्तवो ये वितत्निरे यऽइमं यज्ञᳫंस्वधया ददन्ते।
तेषां छिन्नꣳसम्वेतद्दधामि स्वाहा घर्मोऽअप्येतु देवान् ॥६१॥
यज्ञस्य दोहो विततः पुरुत्रा सोऽअष्टधा दिवमन्वाततान ।
स यज्ञ धुक्ष्व महि मे प्रजायाᳫंरायस्पोषं विश्वमायुरशीय स्वाहा॥६२॥
आपवस्व हिरण्यवदश्ववत्सोम वीरवत्।
वाजं गोमन्तमाभर स्वाहा ॥६३॥

इत्यष्टमोऽध्यायः॥

अथ नवमोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—इन्द्राबृहस्पती १। बृहस्पतिः २-१३। दधिक्रावा १४, १५। वसिष्ठः १६, १८-२५। नाभानेदिष्ठः १७। तापसः २६-३४। वरुणः ३५, ३६। देववातः ३७-४०॥

देवता—सविता १, ५, १३। इन्द्रः २, ३। राजधर्मराजादयः ४। अश्वः ६। सेनापतिः ७। प्रजापतिः ८, १९, २०, २३-२५। वीरः ९। इन्द्राबृहस्पती १०-१२। बृहस्पतिः १४-१८। यज्ञः २१। दिशः २२। सोमाग्न्यादित्यविष्णुसूर्यबृहस्पतयः २६। अर्यमादिमन्त्रोक्ताः २७, २९। अग्निः २८, ३७। सम्राट् ३०। अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ३१। पूषादयो मन्त्रोक्ताः ३२। मित्रादयो मन्त्रोक्ताः ३३। वस्वादयो मन्त्रोक्ताः ३४। विश्वेदेवाः ३५, ३६। रक्षोघ्नः ३८, ३९। यजमानः ४०॥

छन्दः—स्वराडार्षीत्रिष्टुप् १। आर्षीपङ्क्तिः[क], विकृतिः[र] २। निचृदतिशक्वरी ३। भुरिक्कृतिः ४। भुरिगष्टिः ५। भुरिग्जगती ६। भुरिगुष्णिक् ७। भुरिक्त्रिष्टुप् ८। धृतिः ९। विराडुत्कृतिः १०। जगती ११, १४, १५, १७, २४, ३०। स्वराडतिधृतिः १२। निचृदतिजगती १३। भुरिक्पङ्क्तिः १६। निचृत्त्रिष्टुप् १८। निचृद्धृतिः १९। भुरिक्कृतिः २०। अत्यष्टिः २१। निचृदत्यष्टिः २२। स्वराट्त्रिष्टुप् २३, २५। अनुष्टुप् २६। स्वराडनुष्टुप् २७। भुरिगनुष्टुप् २८। भुरिगार्षीगायत्री २९। स्वराडतिधृतिः ३१। कृतिः ३२, ३३। निचृज्जगती[क], निचृद्धृतिः[र] ३४। विराडुत्कृतिः ३५। विकृतिः ३६। निचृदनुष्टुप् ३७। भुरिग्ब्राह्मीबृहती ३८। अतिजगती ३९। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ४०॥

स्वरः—धैवतः १, ८, १८, २३, २५, ४०। पञ्चमः[क], मध्यमः[र] २। पञ्चमः ३, १६। निषादः ४, ६, ११, १३-१५, १७, २०, २४, ३०, ३२, ३३, ३९। मध्यमः ५, ३६, ३८। ऋषभः ७, ९, १९। षड्जः १०, १२, २९, ३१, ३५। गान्धारः २१, २२, २६-२८, ३७। निषादः[क], ऋषभः[र] ३४॥

देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय ।
दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा ॥१॥
[क]ध्रुवसदं त्वा नृषदं मनःसदमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं
गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्। [र]अप्सुषदं त्वा घृतसदं
व्योमसदमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय
त्वा जुष्टतमम्। पृथिविसदं त्वाऽन्तरिक्षसदं दिविसदं देवसदं
नाकसदमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय
त्वा जुष्टतमम् ॥२॥

अपाꣳरसमुद्वयसꣳसूर्ये सन्तꣳसमाहितम्।
अपाꣳरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय
त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥३॥
ग्रहाऽऊर्जाहुतयो व्यन्तो विप्राय मतिम्। तेषां विशिप्रियाणां
वोऽहमिषमूर्जꣳसमग्रभमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं
गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्। सम्पृचौ स्थः सं
मा भद्रेण पृङ्क्तं विपृचौ स्थो वि मा पाप्मना पृङ्क्तम् ॥४॥
इन्द्रस्य वज्रोऽसि वाजसास्त्वयायं वाजꣳसेत्। वाजस्य नु प्रसवे
मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे। यस्यामिदं विश्वं
भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत् ॥५॥
अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तिष्वश्वा भवत वाजिनः ।
देवीरापो यो वऽऊर्मिः प्रतूर्तिः ककुन्मान्वाजसास्तेनायं वाजꣳसेत्॥६॥
वातो वा मनो वा गन्धर्वाः सप्तविꣳशतिः ।
तेऽअग्रेऽश्वमयुञ्जँस्तेऽअस्मिन् जवमादधुः ॥७॥
वातरꣳहा भव वाजिन् युज्यमानऽइन्द्रस्येव दक्षिणः श्रियैधि ।
युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदसऽआ ते त्वष्टा पत्सु जवं दधातु ॥८॥
जवो यस्ते वाजिन्निहितो गुहा यः श्येने परीत्तोऽअचरच्च वाते।
तेन नो वाजिन् बलवान् बलेन वाजजिच्च भव समने च पारयिष्णुः।
वाजिनो वाजजितो वाजꣳसरिष्यन्तो बृहस्पतेर्भागमवजिघ्रत ॥९॥
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यसवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकꣳरुहेयम्।
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यसवसऽइन्द्रस्योत्तमं नाकꣳरुहेयम् ।
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यप्रसवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकमरुहम्।
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यप्रसवसऽइन्द्रस्योत्तमं नाकमरुहम् ॥१०॥
बृहस्पते वाजं जय बृहस्पतये वाचं वदत बृहस्पतिं वाजं जापयत।
इन्द्र वाजं जयेन्द्राय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयत ॥११॥

एषा वः सा सत्या संवागभूद्यया बृहस्पतिं वाजमजीजपताजीजपत
बृहस्पतिं वाजं वनस्पतयो विमुच्यध्वम्। एषा वः सा सत्या
संवागभूद्ययेन्द्रं वाजमजीजपताजीजपतेन्द्रं वाजं वनस्पतयो विमुच्यध्वम् ॥१२॥
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यप्रसवसो बृहस्पतेर्वाजजितो वाजं जेषम्।
वाजिनो वाजजितोऽध्वन स्कभ्नुवन्तो योजना मिमानाः काष्ठां गच्छत ॥१३॥
एष स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धोऽअपिकक्षऽआसनि।
क्रतुं दधिक्राऽअनु सꣳसनिष्यदत्पथामङ्काꣳस्यन्वापनीफणत् स्वाहा ॥१४॥
उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनुवाति प्रगर्धिनः ।
श्येनस्येव ध्रजतोऽअङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्जा तरित्रतः स्वाहा ॥१५॥
शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।
जम्भयन्तोऽहिं वृकꣳरक्षाꣳसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥१६॥
ते नोऽअर्वन्तो हवनश्रुतो हवं विश्वे शृण्वन्तु वाजिनो मितद्रवः।
सहस्रसा मेधसाता सनिष्यवो महो ये धनꣳसमिथेषु जभ्रिरे ॥१७॥
वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥१८॥
आ मा वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावापृथिवी विश्वरूपे।
आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमोऽअमृतत्वेन गम्यात्।
वाजिनो वाजजितो वाजꣳससृवाꣳसो बृहस्पतेर्भागमवजिघ्रत निमृजानाः ॥१९॥
आपये स्वाहा स्वापये स्वाहापिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा वसवे
स्वाहाहर्पतये स्वाहाह्ने मुग्धाय स्वाहा मुग्धाय वैनꣳशिनाय
स्वाहा विनꣳशिनऽआन्त्यायनाय स्वाहाऽऽन्त्याय भौवनाय स्वाहा
भुवनस्य पतये स्वाहाऽधिपतये स्वाहा ॥२०॥
आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳश्रोत्रं
यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् ।
प्रजापतेः प्रजाऽअभूम स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम ॥२१॥

अस्मे वोऽअस्त्विन्द्रियमस्मे नृम्णमुत क्रतुरस्मे वर्चाꣳसि सन्तु वः ।
नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्याऽइयं ते राड्यन्तासि यमनो
ध्रुवोऽसि धरुणः । कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा ॥२२॥
वाजस्येमं प्रसवः सुषुवेऽग्रे सोमꣳराजानमोषधीष्वप्सु ।
ताऽअस्मभ्यं मधुमतीर्भवन्तु वयꣳराष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः स्वाहा ॥२३॥
वाजस्येमां प्रसवः शिश्रिये दिवमिमा च विश्वा भुवनानि सम्राट् ।
अदित्सन्तं दापयति प्रजानन्त्स नो रयिꣳसर्ववीरं नियच्छतु स्वाहा ॥२४॥
वाजस्य नु प्रसव आबभूवेमा च विश्वा भुवनानि सर्वतः ।
सनेमि राजा परियाति विद्वान्प्रजां पुष्टिं वर्धयमानोऽअस्मे स्वाहा ॥२५॥
सोमꣳराजानमवसेऽग्निमन्वारभामहे ।
आदित्यान्विष्णुꣳसूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिꣳस्वाहा ॥२६॥
अर्यमणं बृहस्पतिमिन्द्रं दानाय चोदय ।
वाचं विष्णुꣳसरस्वतीꣳसवितारं च वाजिनꣳस्वाहा ॥२७॥
अग्नेऽअच्छा वदेह नः प्रति नः सुमना भव ।
प्र नो यच्छ सहस्रजित् त्वꣳहि धनदाऽअसि स्वाहा ॥२८॥
प्र नो यच्छत्वर्यमा प्र पूषा प्र बृहस्पतिः ।
प्र वाग्देवी ददातु नः स्वाहा ॥२९॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा
साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥३०॥
अग्निरेकाक्षरेण प्राणमुदजयत्तमुज्जेषमश्विनौ द्व्यक्षरेण द्विपदो
मनुष्यानुदजयतां तानुज्जेषं विष्णुस्त्र्यक्षरेण त्रींल्लोकानुदजयत्तानुज्जेषꣳ
सोमश्चतुरक्षरेण चतुष्पदः पशूनुदजयत्तानुज्जेषम् ॥३१॥
पूषा पञ्चाक्षरेण पञ्च दिशऽउदजयत्ताऽउज्जेषꣳसविता षडक्षरेण
षड्ऋतूनुदजयत्तानुज्जेषं मरुतः सप्ताक्षरेण सप्त ग्राम्यान्
पशूनुदजयँस्तानुज्जेषं बृहस्पतिरष्टाक्षरेण गायत्रीमुदजयत्तामुज्जेषम् ॥३२॥

मित्रो नवाक्षरेण त्रिवृतꣳस्तोममुदजयत्तमुज्जेषं वरुणो दशाक्षरेण
विराजमुदजयत्तामुज्जेषमिन्द्रऽएकादशाक्षरेण त्रिष्टुभमुदजयत्तामुज्जेषं
विश्वे देवा द्वादशाक्षरेण जगतीमुदजयँस्तामुज्जेषम् ॥३३॥
वसवस्त्रयोदशाक्षरेण त्रयोदशꣳस्तोममुदजयँस्तमुज्जेषꣳ
रुद्राश्चतुर्दशाक्षरेण चतुर्दशꣳस्तोममुदजयँस्तमुज्जेषमादित्याः
पञ्चदशाक्षरेण पञ्चदशꣳस्तोममुदजयँस्तामुज्जेषमदितिः
षोडशाक्षरेण षोडशꣳस्तोममुदजयत्तमुज्जेषं प्रजापतिः
सप्तदशाक्षरेण सप्तदशꣳस्तोममुदजयत्तमुज्जेषम् ॥३४॥
एष ते निर्ऋते भागस्तं जुषस्व स्वाहाऽग्निनेत्रेभ्यो देवेभ्यः
पुरःसद्भ्यः स्वाहा यमनेत्रेभ्यो देवेभ्यो दक्षिणासद्भ्यः स्वाहा
विश्वदेवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पश्चात्सद्भ्यः स्वाहा मित्रावरुणनेत्रेभ्यो
वा मरुन्नेत्रेभ्यो वा देवेभ्यऽउत्तरासद्भ्यः स्वाहा सोमनेत्रेभ्यो
देवेभ्यऽउपरिसद्भ्यो दुवस्वद्भ्यः स्वाहा ॥३५॥
ये देवाऽअग्निनेत्राः पुरःसदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवा यमनेत्रा
दक्षिणासदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवा विश्वदेवनेत्राः पश्चात्सदस्तेभ्यः
स्वाहा ये देवा मित्रावरुणनेत्रा वा मरुन्नेत्रा वोत्तरासदस्तेभ्यः
स्वाहा ये देवाः सोमनेत्राऽउपरिसदो दुवस्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा ॥३६॥
अग्ने सहस्व पृतनाऽअभिमातीरपास्य । दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसि ॥३७॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
उपांꣳशोर्वीर्येण जुहोमि हतꣳरक्षः स्वाहा रक्षसां त्वा वधायावधिष्म
रक्षोऽवधिष्मामुमसौ हतः ॥३८॥
सविता त्वा सवानाꣳसुवतामग्निर्गृहपतीनाꣳसोमो वनस्पतीनाम् ।
बृहस्पतिर्वाचऽइन्द्रो ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो
धर्मपतीनाम् ॥३९॥
इमं देवाऽअसपत्नꣳसुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय
महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै
विशऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳराजा ॥४०॥
इति नवमोऽध्यायः॥

अथ दशमोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—वरुणः १-१७। देववातः १८-२३। वामदेवः २४-२६। शुनःशेपः २७-३४॥

देवता—आपः १, ६। वृषा २। अपांपतिः ३। सूर्यादयो मन्त्रोक्ताः ४। अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ५, २३। वरुणः ७, २७। यजमानः ८, १०-१४, १८, १९, २८। प्रजापतिः ९, २०। परमात्मा १५। मित्रावरुणौ १६। क्षत्रपतिः १७, २१, ३१, ३२। इन्द्रः २२। सूर्यः २४, २५। आसन्दी राजपत्नी २६। अग्निः २९। सवित्रादिमन्त्रोक्ताः ३०। अश्विनौ ३३, ३४॥

छन्दः—निचृदार्षीत्रिष्टुप् १, २२। स्वराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः २। अभिकृतिः[क], निचृज्जगती[र] ३। जगती[१], स्वराट्पङ्क्तिः[२], स्वराड्ब्राह्मीबृहती[३,४], आर्चीपङ्क्तिः[५], भुरिक्त्रिष्टुप्[६,७] ४। स्वराड्धृतिः ५। स्वराड्ब्राह्मीबृहती ६। विराडार्षीत्रिष्टुप् ७, २२। कृतिः ८। भुरिगष्टिः ९। विराडार्षीपङ्क्तिः १०। आर्चीपङ्क्तिः ११, १३। निचृदार्ष्यनुष्टुप् १२, ३३। भुरिग्जगती १४, २४। विराडार्चीपङ्क्तिः १५। स्वराडार्षीजगती १६, २९। आर्षीपङ्क्तिः १७। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् १८। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् १९। भुरिगतिधृतिः २०। भुरिग्ब्राह्मीबृहती २१। जगती २३, २५। भुरिगनुष्टुप् २६। पिपीलिकामध्याप्रतिष्ठागायत्री २७। विराड्धृतिः २८। भुरिग्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ३०। आर्षीत्रिष्टुप् ३१। निचृद्ब्राह्म्यनुष्टुप् ३२। भुरिक्पङ्क्तिः ३४॥

स्वरः—धैवतः १, ७, १८, १९, २२, ३०, ३१। पञ्चमः २, १०, ११, १३, १५, १७, ३४। ऋषभः[क], निषादः[र] ३। निषादः[१], पञ्चमः[२,५], मध्यमः[३,४], धैवतः[६,७] ४। ऋषभः ५, २८। मध्यमः ६, ९, २१। निषादः ८, १४, १६, २३-२५, २९। गान्धारः १२, २६, ३२, ३३। षड्जः २०, २७॥

अपो देवा मधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्वती राजस्वश्चितानाः ।
याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन् याभिरिन्द्रमनयन्नत्यरातीः ॥१॥
वृष्णऽऊर्मिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहा वृष्णऽऊर्मिरसि
राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि वृषसेनोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे
देहि स्वाहा वृषसेनोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि ॥२॥
[क]अर्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहार्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै
दत्तौजस्वती स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहौजस्वती स्थ राष्ट्रदा
राष्ट्रममुष्मै दत्तापः परिवाहिणी स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहापः

परिवाहिणी स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्तापां पतिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रं
मे[र]देहि स्वाहाऽपां पतिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देह्यपां गर्भोऽसि
राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहापां गर्भोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि ॥३॥
[१]सूर्यत्वचस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा सूर्यत्वचस स्थ
राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त सूर्यवर्चस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त
स्वाहा [२]सूर्यवर्चस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त मान्दा स्थ राष्ट्रदा
राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा मान्दा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त [३]व्रजक्षित
स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा व्रजक्षित स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै
दत्त वाशा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा वाशा स्थ राष्ट्रदा
राष्ट्रममुष्मै दत्त [४]शविष्ठा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा शविष्ठा
स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त शक्वरी स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त
स्वाहा शक्वरी स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त [५]जनभृत स्थ राष्ट्रदा
राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा जनभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त [६]विश्वभृत
स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा विश्वभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै
दत्तापः स्वराज स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त । [७]मधुमतीर्मधुमतीभिः
पृच्यन्तां महि क्षत्रं क्षत्रियाय वन्वानाऽअनाधृष्टाः सीदत सहौजसो
महि क्षत्रं क्षत्रियाय दधतीः ॥४॥
सोमस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भूयात्। अग्नये स्वाहा
सोमाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा सरस्वत्यै स्वाहा पूष्णे स्वाहा
बृहस्पतये स्वाहेन्द्राय स्वाहा घोषाय स्वाहा श्लोकाय स्वाहाꣳ
शाय स्वाहा भगाय स्वाहार्यम्णे स्वाहा ॥५॥
पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण
पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। अनिभृष्टमसि वाचो बन्धुस्तपोजाः
सोमस्य दात्रमसि स्वाहा राजस्वः ॥६॥

सधमादो द्युम्निनीराप एताऽअनाधृष्टाऽअपस्यो वसानाः ।
पस्त्यासु चक्रे वरुणः सधस्थमपाᳬशिशुर्मातृतमास्वन्तः ॥७॥
क्षत्रस्योल्बमसि क्षत्रस्य जराय्वसि क्षत्रस्य योनिरसि क्षत्रस्य
नाभिरसीन्द्रस्य वार्त्रघ्नमसि मित्रस्यासि वरुणस्यासि त्वयायं
वृत्रं वधेत्। दृवासि रुजासि क्षुमासि। पातैनं प्राञ्चं पातैनं
प्रत्यञ्चं पातैनं तिर्यञ्चं दिग्भ्यः पात ॥८॥
आविर्मर्याऽआवित्तोऽअग्निर्गृहपतिरावित्तऽइन्द्रो वृद्धश्रवाऽआवित्तौ
मित्रावरुणौ धृतव्रतावावित्तः पूषा विश्ववेदाऽआवित्ते द्यावापृथिवी
विश्वशम्भुवावावित्तादितिरुरुशर्मा ॥९॥
अवेष्टा दन्दशूकाः प्राचीमारोह गायत्री त्वावतु रथन्तरꣳसाम
त्रिवृत् स्तोमो वसन्तऽऋतुर्ब्रह्म द्रविणम् ॥१०॥
दक्षिणामारोह त्रिष्टुप् त्वावतु बृहत्साम पञ्चदश
स्तोमो ग्रीष्मऽऋतुः क्षत्रं द्रविणम् ॥११॥
प्रतीचीमारोह जगती त्वावतु वैरूपꣳसाम सप्तदश
स्तोमो वर्षाऽऋतुर्विड् द्रविणम् ॥१२॥
उदीचीमारोहानुष्टुप् त्वावतु वैराजꣳसामैकविꣳश
स्तोमः शरदृतुः फलं द्रविणम् ॥१३॥
ऊर्ध्वामारोह पङ्क्तिस्त्वावतु शाक्वररैवते सामनी त्रिणवत्रयस्त्रिꣳशौ
स्तोमौ हेमन्तशिशिरावृतू वर्चो द्रविणं प्रत्यस्तं नमुचेः शिरः॥१४॥
सोमस्य त्विषिरसि तवैव मे त्विषिर्भूयात् ।
मृत्योः पाह्योजोऽसि सहोऽस्यमृतमसि ॥१५॥
हिरण्यरूपाऽउषसो विरोकऽउभाविन्द्राऽउदिथः सूर्यश्च । आरोहतं
वरुण मित्र गर्त्तं ततश्चक्षाथामदितिं दितिं च मित्रोऽसि वरुणोऽसि॥१६॥
सोमस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिञ्चाम्यग्नेर्भ्राजसा सूर्यस्य वर्चसेन्द्रस्येन्द्रियेण
क्षत्राणां क्षत्रपतिरेध्यति दिद्यून् पाहि ॥१७॥

इमं देवाऽअसपत्नꣳसुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय
महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममुमुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै
विशऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाᳬराजा ॥१८॥
प्र पर्वतस्य वृषभस्य पृष्ठान्नावश्चरन्ति स्वसिचऽइयानाः ।
ताऽआववृत्रन्नधरागुदक्ताऽअहिं बुध्न्यमनु रीयमाणाः ।
विष्णोर्विक्रमणमसि विष्णोर्विक्रान्तमसि विष्णोः क्रान्तमसि ॥१९॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्त्वयममुष्य पितासावस्य पिता
वयꣳस्याम पतयो रयीणाᳬस्वाहा। रुद्र यत्ते क्रिवि परं
नाम तस्मिन् हुतमस्यमेष्टमसि स्वाहा ॥२०॥
इन्द्रस्य वज्रोऽसि मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषा युनज्मि।
अव्यथायै त्वा स्वधायै त्वारिष्टो अर्जुनो मरुतां प्रसवेन
जयापाम मनसा समिन्द्रियेण ॥२१॥
मा तऽइन्द्र ते वयं तुराषाडयुक्तासोऽअब्रह्मता विदसाम ।
तिष्ठा रथमधि यं वज्रहस्ता रश्मीन्देव यमसे स्वश्वान् ॥२२॥
अग्नये गृहपतये स्वाहा सोमाय वनस्पतये स्वाहा
मरुतामोजसे स्वाहेन्द्रस्येन्द्रियाय स्वाहा ।
पृथिवि मातर्मा मा हिꣳसीर्मोऽअहं त्वाम् ॥२३॥
हꣳसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजाऽऋतजाऽअद्रिजाऽऋतं बृहत् ॥२४॥
इयदस्यायुरस्यायुर्मयि धेहि युङ्ङसि वर्चोऽसि वर्चो मयि
धेह्यूर्गस्यूर्जं मयि धेहि। इन्द्रस्य वां वीर्यकृतो बाहूऽअभ्युपावहरामि ॥२५॥
स्योनासि सुषदासि क्षत्रस्य योनिरसि ।
स्योनामासीद सुषदामासीद क्षत्रस्य योनिमासीद॥२६॥

निषसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा। साम्राज्याय सुक्रतुः ॥२७॥
अभिभूरस्येतास्ते पञ्च दिशः कल्पन्तां ब्रह्मँस्त्वं ब्रह्मासि सवितासि
सत्यप्रसवो वरुणोऽसि सत्यौजाऽइन्द्रोऽसि विशौजा रुद्रोऽसि सुशेवः।
बहुकार श्रेयस्कर भूयस्करेन्द्रस्य वज्रोऽसि तेन मे रध्य ॥२८॥
अग्निः पृथुर्धर्मणस्पतिर्जुषाणोऽअग्निः पृथुर्धर्मणस्पतिराज्यस्य वेतु स्वाहा।
स्वाहाकृताः सूर्यस्य रश्मिभिर्यतध्वꣳसजातानां मध्यमेष्ठ्याय ॥२९॥
सवित्रा प्रसवित्रा सरस्वत्या वाचा त्वष्ट्रा रूपैः पूष्णा पशुभि-
रिन्द्रेणास्मे बृहस्पतिना ब्रह्मणा वरुणेनौजसाग्निना तेजसा
सोमेन राज्ञा विष्णुना दशम्या देवतया प्रसूतः प्रसर्पामि ॥३०॥
अश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व।
वायुः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ्क्सोमो अतिस्रुतः। इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥३१॥
कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमऽउक्तिं यजन्ति।
उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णे ॥३२॥
युवꣳसुराममश्विना नमुचावासुरे सचा।
विपिपाना शुभस्पतीऽइन्द्रं कर्मस्वावतम् ॥३३॥
पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावथुः काव्यैर्दꣳसनाभिः।
यत्सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥३४॥

इति दशमोऽध्यायः॥

अथैकादशोऽध्यायः

—:0:—

ऋषिः—प्रजापतिः १-११। नाभानेदिष्ठः १२, ७५-८३। कुश्रिः १३। शुनःशेपः १४-१६। पुरोधाः १७। मयोभूः १८-२२। गृत्समदः २३, २४, २७-३१, ३६। सोमकः २५। पायुः २६। भरद्वाजः ३२-३४। देवश्रवो देववातः ३५। प्रस्कण्वः ३७। सिन्धुद्वीपः ३८-४०, ५०-६१। विश्वमनाः ४१। कण्वः ४२। त्रितः ४३, ४४, ४६-४८। चित्रः ४५। उत्कीलः ४९। विश्वामित्रः ६२-६६। आत्रेयः ६७-६९। सोमाहुतिः ७०। विरूपः ७१। वारुणिः ७२। जमदग्निः ७३-७४॥

देवता—सविता १-११, ६३, ६७। वाजी १२, १३। क्षत्रपतिः १४, २०। गणपतिः १५। अग्निः १६-१९, २४-२९, ३२-३४, ३६, ३७, ४०-४९, ७०-७८। द्रविणोदाः २१, २२। प्रजापतिः २३। दम्पती ३०। जायापती ३१। होता ३५। आपः ३८, ५०-५२। वायुः ३९। मित्रः ५३, ६२, ६४। रुद्रः ५४। सिनीवाली ५५। अदितिः ५६, ५७, ५९। वसुरुद्रादित्यविश्वेदेवाः ५८। वस्वादयो मन्त्रोक्ताः ६०। आदित्यादयो लिङ्गोक्ताः ६१। वस्वादयो लिङ्गोक्ताः ६५। अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ६६। अम्बा ६८, ६९। सेनापतिः ७९। अध्यापकोपदेशकौ ८०। पुरोहितयजमानौ ८१। सभापतिर्यजमानः ८२। यजमानपुरोहितौ ८३॥

छन्दः—विराडार्ष्यनुष्टुप् १, ३०। शङ्कुमतीगायत्री २। निचृदनुष्टुप् ३, १८, १९, ३१, ७३, ७९। जगती ४। भुरिक्पङ्क्तिः ५, ११, १६। निचृदार्षीजगती ६। आर्षीत्रिष्टुप् ७, २३, ३२, ३६, ४९, ५९, ६९। भुरिक्शक्वरी ८। भुरिगतिशक्वरी ९। भुरिगनुष्टुप् १०, ४०, ४१, ४८, ७७। आर्षीपङ्क्तिः २१, २४, २७। आस्तारपङ्क्तिः १२। गायत्री १३, १४, ५०-५२, ६८। आर्षीजगती १५। निचृदार्षीत्रिष्टुप् १७, २२, ३५। निचृदार्षीबृहती २०, ३७। निचृद्गायत्री २५, ३३, ३४, ६२। अनुष्टुप् २६, ५४, ६४, ६७, ८०। प्रकृतिः २८। स्वराट्पङ्क्तिः २९। न्यङ्कुसारिणीबृहती ३८। विराट्त्रिष्टुप् ३९, ४३, ७५। उपरिष्टाद्ब्राह्मीबृहती ४२, ५३, ८३। विराडनुष्टुप् ४४, ५५, ५६, ७४, ८२। विराट्पथ्याबृहती ४५। ब्राह्मीबृहती ४६। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ४७, ६६। भुरिग्बृहती ५७, ६३। स्वराट्संकृतिः[क], अभिकृतिः[र] ५८। स्वराट्संकृतिः ६०। भुरिक्कृतिः[क], निचृत्प्रकृतिः[र] ६१। भुरिग्धृतिः ६५। विराड्गायत्री ७०, ७१। भुरिगुष्णिक् ७२, ७८। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् ७६। निचृदार्चीपङ्क्तिः ८१॥

स्वरः—गान्धारः १, ३, १०, १८, १९, २६, ३०, ३१, ४०, ४१, ४४, ४८, ५४-५६, ६०, ६४, ६७, ७३, ७४, ७७, ७९, ८०, ८२। षड्जः २, १३, १४, २५, ३३, ३४, ५०-५२, ६२, ६८, ७०, ७१। निषादः ४, ६, १५। पञ्चमः ५, ९, ११, १२, १६, २१, २४, २७, २९, ८१। धैवतः ७, ८, १७, २२, २३, २८, ३२, ३५, ३६, ३९, ४३, ४७, ४९, ५९, ६६, ६९, ७५, ७६। मध्यमः २०, ३७, ३८, ४२, ४५, ४६, ५३, ५७, ६३, ८३। गान्धारः[क], ऋषभः[र] ५८। निषादः[क], धैवतः[र] ६१। ऋषभः ६५, ७२, ७८॥

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरत् ॥१॥
युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे। स्वर्ग्याय शक्त्या ॥२॥
युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्यतो धिया दिवम्।
बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान्॥३॥
युञ्जते मनऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः ॥४॥
युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोकऽएतु पथ्येव सूरेः ।
शृण्वन्तु विश्वेऽअमृतस्य पुत्राऽआ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः ॥५॥
यस्य प्रयाणमन्वन्यऽइद्ययुर्देवा देवस्य महिमानमोजसा ।
यः पार्थिवानि विममे सऽएतशो रजाꣳसि देवः सविता महित्वना ॥६॥
देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय ।
दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥७॥
इमं नो देव सवितर्यज्ञं प्रणय देवाव्यꣳसखिविदꣳसत्राजितं
धनजितꣳस्वर्जितम्। ऋचा स्तोमꣳसमर्धय गायत्रेण रथन्तरं
बृहद् गायत्रवर्त्तनि स्वाहा ॥८॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
आददे गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वत्पृथिव्याः सधस्थादग्निं
पुरीष्यमङ्गिरस्वदाभर त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥९॥
अभ्रिरसि नार्यसि त्वया वयमग्निꣳशकेम खनितुꣳसधस्थ आ ।
जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥१०॥
हस्तऽआधाय सविता बिभ्रदभ्रिꣳहिरण्ययीम् ।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरदानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥११॥
प्रतूर्तं वाजिन्नाद्रव वरिष्ठामनु संवतम् ।
दिवि ते जन्म परममन्तरिक्षे तव नाभिः पृथिव्यामधि योनिरित् ॥१२॥

युञ्जाथाꣳरासभं युवमस्मिन् यामे वृषण्वसू। अग्निं भरन्तमस्मयुम् ॥१३॥
योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे। सखायऽइन्द्रमूतये ॥१४॥
प्रतूर्वन्नेह्यवक्रामन्नशस्ती रुद्रस्य गाणपत्यं मयोभूरेहि ।
उर्वन्तरिक्षं वीहि स्वस्तिगव्यूतिरभयानि कृण्वन् पूष्णा सयुजा सह ॥१५॥
पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वदाभराग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वद-
च्छेमोऽग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वद्भरिष्यामः ॥१६॥
अन्वग्निरुषसामग्रमख्यदन्वहानि प्रथमो जातवेदाः ।
अनु सूर्यस्य पुरुत्रा च रश्मीननु द्यावापृथिवीऽआततन्थ ॥१७॥
आगत्य वाज्यध्वानꣳसर्वा मृधो विधूनुते ।
अग्निꣳसधस्थे महति चक्षुषा निचिकीषते ॥१८॥
आक्रम्य वाजिन् पृथिवीमग्निमिच्छ रुचा त्वम् ।
भूम्या वृत्वाय नो ब्रूहि यतः खनेम तं वयम् ॥१९॥
द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी सधस्थमात्मान्तरिक्षꣳसमुद्रो योनिः ।
विख्याय चक्षुषा त्वमभि तिष्ठ पृतन्यतः ॥२०॥
उत्क्राम महते सौभगायास्मादास्थानाद् द्रविणोदा वाजिन् ।
वयꣳस्याम सुमतौ पृथिव्याऽअग्निं खनन्तऽउपस्थेऽअस्याः ॥२१॥
उदक्रमीद् द्रविणोदा वाज्यर्वाकः सुलोकꣳसुकृतं पृथिव्याम् ।
ततः खनेम सुप्रतीकमग्निꣳस्वो रुहाणाऽअधि नाकमुत्तमम् ॥२२॥
आ त्वा जिघर्मि मनसा घृतेन प्रतिक्षियन्तं भुवनानि विश्वा ।
पृथुं तिरश्चा वयसा बृहन्तं व्यचिष्ठमन्नै रभसं दृशानम् ॥२३॥
आ विश्वतः प्रत्यञ्चं जिघर्म्यरक्षसा मनसा तज्जुषेत ।
मर्यश्री स्पृहयद्वर्णोऽअग्निर्नाभिमृशे तन्वा जर्भुराणः ॥२४॥
परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानि दाशुषे ॥२५॥
परि त्वाग्ने पुरं वयं विप्रꣳसहस्य धीमहि ।
धृषद्वर्णं दिवेदिवे हन्तारं भङ्गुरावताम् ॥२६॥

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि ।
त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः ॥२७॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामि । ज्योतिष्मन्तं
त्वाग्ने सुप्रतीकमजस्रेण भानुना दीद्यतम् । शिवं प्रजाभ्योऽहिꣳसन्तं
पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामः ॥२८॥
अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः समुद्रमभितः पिन्वमानम् ।
वर्धमानो महाँ२॥ऽआ च पुष्करे दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथस्व ॥२९॥
शर्म च स्थो वर्म च स्थोऽच्छिद्रे बहुलेऽउभे ।
व्यचस्वती संवसाथां भृतमग्निं पुरीष्यम् ॥३०॥
संवसाथाꣳस्वर्विदा समीचीऽउरसा त्मना ।
अग्निमन्तर्भरिष्यन्ती ज्योतिष्मन्तमजस्रमित् ॥३१॥
पुरीष्योऽसि विश्वभराऽअथर्वा त्वा प्रथमो निरमन्थदग्ने ।
त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत । मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥३२॥
तमु त्वा दध्यङ्ङृषिः पुत्रऽईधेऽअथर्वणः । वृत्रहणं पुरन्दरम् ॥३३॥
तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम् । धनञ्जयꣳरणेरणे ॥३४॥
सीद होतः स्वऽउ लोके चिकित्वान्त्सादया यज्ञꣳसुकृतस्य योनौ ।
देवावीर्देवान् हविषा यजास्यग्ने बृहद्यजमाने वयो धाः ॥३५॥
नि होता होतृषदने विदानस्त्वेषो दीदिवाँ२॥ऽअसदत्सुदक्षः ।
अदब्धव्रतप्रमतिर्वसिष्ठः सहस्रम्भरः शुचिजिह्वोऽअग्निः ॥३६॥
सꣳसीदस्व महाँ२॥ऽअसि शोचस्व देववीतमः ।
वि धूममग्नेऽअरुषं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम् ॥३७॥
अपो देवीरुपसृज मधुमतीरयक्ष्माय प्रजाभ्यः ।
तासामास्थानादुज्जिहतामोषधयः सुपिप्पलाः ॥३८॥

सं ते वायुर्मातरिश्वा दधातूत्तानाया हृदयं यद्विकस्तम् ।
यो देवानां चरसि प्राणथेन कस्मै देव वषडस्तु तुभ्यम् ॥३९॥
सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमासदत्स्वः ।
वासोऽअग्ने विश्वरूपꣳसंव्ययस्व विभावसो ॥४०॥
उदु तिष्ठ स्वध्वरावा नो देव्या धिया ।
दृशे च भासा बृहता सुशुक्वनिराग्ने याहि सुशस्तिभिः ॥४१॥
ऊर्ध्वऽऊ षु णऽऊतये तिष्ठा देवो न सविता ।
ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भिर्विह्वयामहे ॥४२॥
स जातो गर्भोऽअसि रोदस्योरग्ने चारुर्विभृतऽओषधीषु ।
चित्रः शिशुः परि तमाꣳस्यक्तून् प्र मातृभ्योऽअधि कनिक्रदद् गाः ॥४३॥
स्थिरो भव वीड्वङ्गऽआशुर्भव वाज्यर्वन् ।
पृथुर्भव सुषदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहणः ॥४४॥
शिवो भव प्रजाभ्यो मानुषीभ्यस्त्वमङ्गिरः ।
मा द्यावापृथिवीऽअभि शोचीर्मान्तरिक्षं मा वनस्पतीन् ॥४५॥
प्रैतु वाजी कनिक्रदन्नानदद्रासभः पत्वा । भरन्नग्निं पुरीष्यं मा पाद्यायुषः
पुरा । वृषाग्निं वृषणं भरन्नपां गर्भꣳसमुद्रियम् । अग्नऽआयाहि वीतये ॥४६॥
ऋतꣳसत्यमृतꣳसत्यमग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वद्भरामः ।
ओषधयः प्रतिमोदध्वमग्निमेतꣳशिवमायन्तमभ्यत्र युष्माः ।
व्यस्यन् विश्वाऽअनिराऽअमीवा निषीदन्नोऽअप दुर्मतिं जहि ॥४७॥
ओषधयः प्रतिगृभ्णीत पुष्पवतीः सुपिप्पलाः ।
अयं वो गर्भऽऋत्वियः प्रत्नꣳसधस्थमासदत् ॥४८॥
वि पाजसा पृथुना शोशुचानो बाधस्व द्विषो रक्षसोऽअमीवाः ।
सुशर्मणो बृहतः शर्मणि स्यामग्नेरहꣳसुहवस्य प्रणीतौ ॥४९॥
आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नऽऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥५०॥

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिव मातरः ॥५१॥
तस्माऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः ॥५२॥

मित्रः सꣳसृज्य पृथिवीं भूमिं च ज्योतिषा सह ।
सुजातं जातवेदसमयक्ष्माय त्वा सꣳसृजामि प्रजाभ्यः ॥५३॥
रुद्राः सꣳसृज्य पृथिवीं बृहज्ज्योतिः समीधिरे ।
तेषां भानुरजस्रऽइच्छुक्रो देवेषु रोचते ॥५४॥
सꣳसृष्टां वसुभी रुद्रैर्धीरैः कर्मण्यां मृदम् ।
हस्ताभ्यां मृद्वीं कृत्वा सिनीवाली कृणोतु ताम् ॥५५॥
सिनीवाली सुकपर्दा सुकुरीरा स्वौपशा ।
सा तुभ्यमदिते मह्योखां दधातु हस्तयोः ॥५६॥

उखां कृणोतु शक्त्या बाहुभ्यामदितिर्धिया ।
माता पुत्रं यथोपस्थे साग्निं बिभर्त्तु गर्भऽआ । मखस्य शिरोऽसि ॥५७॥
[क]वसवस्त्वा कृण्वन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवासि पृथिव्यसि
धारया मयि प्रजाꣳरायस्पोषं गौपत्यꣳसुवीर्यꣳसजातान्यजमानाय
रुद्रास्त्वा कृण्वन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवास्यन्तरिक्षमसि
धारया मयि प्रजाꣳरायस्पोषं गौपत्यꣳसुवीर्यꣳसजातान्यजमानाया-
दित्यास्त्वा कृण्वन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवासि द्यौरसि
धारया मयि प्रजाꣳरायस्पोषं गौपत्यꣳसुवीर्यꣳसजातान्यजमानाय
विश्वे त्वा देवा वैश्वानराः कृण्वन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद्
ध्रुवासि दिशोऽसि धारया मयि प्रजाꣳरायस्पोषं गौपत्यꣳसुवीर्यꣳ
सजातान्यजमानाय ॥५८॥
अदित्यै रास्नास्यदितिष्टे बिलं गृभ्णातु । कृत्वाय सा महीमुखां
मृन्मयीं योनिमग्नये । पुत्रेभ्यः प्रायच्छददितिः श्रपयानिति ॥५९॥

वसवस्त्वा धूपयन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् रुद्रास्त्वा धूपयन्तु
त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वदादित्यास्त्वा धूपयन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिर-
स्वद् विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा धूपयन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्व-
दिन्द्रस्त्वा धूपयतु वरुणस्त्वा धूपयतु विष्णुस्त्वा धूपयतु ॥६०॥
[क]अदितिष्ट्वा देवी विश्वदेव्यावती पृथिव्याः सधस्थेऽअङ्गिरस्वत्
खनत्ववट देवानां त्वा पत्नीर्देवीर्विश्वदेव्यावतीः पृथिव्याः सधस्थेऽ
अङ्गिरस्वद्दधतूखे धिषणास्त्वा देवीर्विश्वदेव्यावतीः पृथिव्याः
सधस्थेऽअङ्गिरस्वदभीन्धतामुखे वरूत्रीष्ट्वा देवीर्विश्वदेव्यावतीः
पृथिव्याः सधस्थेऽअङ्गिरस्वच्छ्रपयन्तूखे ग्नास्त्वा देवीर्विश्वदेव्यावतीः
पृथिव्याः सधस्थेऽअङ्गिरस्वत्पचन्तूखे जनयस्त्वाच्छिन्नपत्रा देवीर्विश्व-
देव्यावतीः पृथिव्याः सधस्थेऽअङ्गिरस्वत्पचन्तूखे ॥६१॥
मित्रस्य चर्षणीधृतोऽवो देवस्य सानसि । द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम् ॥६२॥
देवस्त्वा सवितोद्वपतु सुपाणिः स्वङ्गुरिः सुबाहुरुत शक्त्या ।
अव्यथमाना पृथिव्यामाशा दिशऽआपृण ॥६३॥
उत्थाय बृहती भवोदु तिष्ठ ध्रुवा त्वम् ।
मित्रैतां तऽउखां परिददाम्यभित्त्याऽएषा मा भेदि ॥६४॥
वसवस्त्वाच्छृन्दन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद्रुद्रास्त्वाच्छृन्दन्तु त्रैष्टुभेन
छन्दसाङ्गिरस्वदादित्यास्त्वाच्छृन्दन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद्विश्वे त्वा
देवा वैश्वानराऽआच्छृन्दन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥६५॥
आकूतिमग्निं प्रयुजꣳस्वाहा मनो मेधामग्निं प्रयुजꣳस्वाहा चित्तं
विज्ञातमग्निं प्रयुजꣳस्वाहा वाचो विधृतिमग्निं प्रयुजꣳस्वाहा
प्रजापतये मनवे स्वाहाग्नये वैश्वानराय स्वाहा ॥६६॥

विश्वो देवस्य नेतुर्मर्तो वुरीत सख्यम् ।
विश्वो रायऽइषुध्यति द्युम्नं वृणीत पुष्यसे स्वाहा ॥६७॥

मा सु भित्था मा सु रिषोऽम्ब धृष्णु वीरयस्व सु ।
अग्निश्चेदं करिष्यथः ॥६८॥
दृꣳहस्व देवि पृथिवि स्वस्तयऽआसुरी माया स्वधया कृतासि ।
जुष्टं देवेभ्यऽइदमस्तु हव्यमरिष्टा त्वमुदिहि यज्ञेऽअस्मिन् ॥६९॥
द्रवन्नः सर्पिरासुतिः प्रत्नो होता वरेण्यः । सहसस्पुत्रोऽअद्भुतः ॥७०॥
परस्याऽअधि संवतोऽवराँ२॥ऽअभ्यातर । यत्राहमस्मि ताँ२॥ऽअव ॥७१॥
परमस्याः परावतो रोहिदश्वऽइहागहि ।
पुरीष्यः पुरुप्रियोऽग्ने त्वं तरा मृधः ॥७२॥
यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि ।
सर्वं तदस्तु ते घृतं तज्जुषस्व यविष्ठ्य ॥७३॥
यदत्त्युपजिह्विका यद् वम्रोऽअतिसर्पति ।
सर्वं तदस्तु ते घृतं तज्जुषस्व यविष्ठ्य ॥७४॥
अहरहरप्रयावं भरन्तोऽश्वायेव तिष्ठते घासमस्मै ।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तोऽग्ने मा ते प्रतिवेशा रिषाम ॥७५॥
नाभा पृथिव्याः समिधानेऽअग्नौ रायस्पोषाय बृहते हवामहे ।
इरम्मदं बृहदुक्थं यजत्रं जेतारमग्निं पृतनासु सासहिम् ॥७६॥
याः सेनाऽअभीत्वरीराव्याधिनीरुगणाऽउत ।
ये स्तेना ये च तस्करास्ताँस्तेऽअग्नेऽपिदधाम्यास्ये ॥७७॥
दꣳष्ट्राभ्यां मलिम्लूञ्जम्भ्यैस्तस्कराँ२॥ऽउत ।
हनुभ्याꣳस्तेनान् भगवस्ताँस्त्वं खाद सुखादितान् ॥७८॥
ये जनेषु मलिम्लव स्तेनासस्तस्करा वने ।
ये कक्षेष्वघायवस्ताँस्ते दधामि जम्भयोः ॥७९॥
योऽअस्मभ्यमरातीयाद्यश्च नो द्वेषते जनः ।
निन्दाद्योऽअस्मान् धिप्साच्च सर्वं तं मस्मसा कुरु ॥८०॥

सꣳशितं मे ब्रह्म सꣳशितं वीर्यं बलम् ।
सꣳशितं क्षत्रं जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः ॥८१॥
उदेषां बाहूऽअतिरमुद्वर्चोऽअथो बलम् ।
क्षिणोमि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वाँ२॥ऽअहम् ॥८२॥
अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ।
प्रप्र दातारं तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥८३॥

इत्येकादशोऽध्यायः॥

अथ द्वादशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—वत्सप्रीः १, ६-१०, १८-२९, ३३, ४०, ४१। कुत्सः २। श्यावाश्वः ३-५। ध्रुवः ११। शुनःशेपः १२। त्रितः १३-१७। विरूपाक्षः ३०। विरूपः ३६-३९, ११६। तापसः ३१, ३२। वसिष्ठः ३४, ३५। दीर्घतमाः ४२। सोमाहुतिः ४३-४६। विश्वामित्रः ४७-५४। प्रियमेधाः ५५। सुतजेतृमधुच्छन्दाः ५६। मधुच्छन्दाः ५७-६५। विश्वावसुः ६६-६८। कुमारहारितः ६९-७४। भिषक् ७५-९०। वरुणः ९१-१०१। हिरण्यगर्भः १०२-१०५। पावकाग्निः १०६-१११। गोतमः ११२-११४। वत्सारः ११५। प्रजापतिः ११७॥

देवता—अग्निः १, २, ६-११, १३, १५-३४, ३६-४४, ४६-५४, ५७-५९, ६६, १०३, १०४, १०६, १०८, १०९, १११, ११५-११७। सविता ३। गरुत्मान् ४। विष्णुः ५। वरुणः १२। जीवेश्वरौ १४। आपः ३५, ५५। पितरः ४५। इन्द्रः ५६। दम्पती ६०। पत्नी ६१। निर्ऋतिः ६२-६४। यजमानः ६५। कृषीवलाः कवयो वा ६७, ६८। कृषीवलाः ६९-७१। मित्रादयो लिङ्गोक्ताः ७२। अघ्न्याः ७३। अश्विनौ ७४। वैद्यः ७५-७७, ७९, ८१, ८५-८७। चिकित्सुः ७८। ओषधयः ८०, ८२। वैद्याः ८३, ८४, ८८-९३, ९५, ९६, ९८, १००। भिषजः ९४, १०१। भिषग्वराः ९७। ओषधिः ९९। कः १०२। विद्वान् १०५, १०७, ११०। सोमः ११२-११४॥

छन्दः—भुरिक्पङ्क्तिः १, २५। आर्षीत्रिष्टुप् २। विराड्जगती ३। भुरिग्धृतिः ४। भुरिगुत्कृतिः ५। निचृदार्षीत्रिष्टुप् ६, १८-२२, २४, ३३, ४५, ६२, १०२। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् ७। आर्षीत्रिष्टुप् ८, ३४, ३५, ४७, ६१, ६४, ७०। निचृदार्षीगायत्री ९, ४०। निचृद्गायत्री १०, ३६, ४१। आर्ष्यनुष्टुप् ११। विराडार्षीत्रिष्टुप् १२, २६-२९, ४२, ६६, ६८। भुरिगार्षीपङ्क्तिः १३, ४८, ४९, ५१, ६३, १०७, ११३। भुरिग्जगती १४। विराट्त्रिष्टुप् १५, १०५। विराडनुष्टुप् १६, १७, ३१, ३२, ४३, ५०, ५४, ५५, ७२, ८२, ८४, ८७-९०, ९४, ९५, ९९। आर्षीत्रिष्टुप् २३। गायत्री ३०, ६७, ११६, ११७। भुरिगार्ष्युष्णिक् ३७। निचृदार्ष्यनुष्टुप् ३८, ५२। निचृदनुष्टुप् ३९, ५६, ७७, ८३, ८६, ९२, ९८, १०१। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् ४४। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् ४६। स्वराडनुष्टुप् ५३। भुरिगुष्णिक् ५७, ५९। भुरिगुपरिष्टाद्बृहती ५८। आर्षीपङ्क्तिः ६०, ११०। आर्षीजगती ६५, ७४। त्रिष्टुप् ६९। विराट्पङ्क्तिः ७१। भुरिगार्षीगायत्री ७३। अनुष्टुप् ७५, ७६, ७८-८१, ८५, ९१, ९६, ९७। विराडार्ष्यनुष्टुप् ९३। विराड्बृहती १००। निचृदुष्णिक् १०३। भुरिग्गायत्री १०४। निचृत्पङ्क्तिः १०६, १०८। निचृदार्षीपङ्क्तिः १०९। स्वराडार्षीपङ्क्तिः १११। निचृद्गायत्री ११२, ११५। आसुर्युष्णिक् ११४॥

स्वरः—पञ्चमः १, १३, २५, ४८, ४९, ५१, ६०, ६३, ७१, १०६-१११, ११३। धैवतः २, ६, ८, १२, १५, १८-२४, २६-२९, ३३-३५, ४२, ४४-४७, ६१, ६२,

६४, ६६, ६८-७०, १०२, १०५। निषादः ३, १४, ६५, ७४। ऋषभः ४, ३७, ५७, ५९, १०३, ११४। षड्जः ५, ९, १०, ३०, ३६, ४०, ४१, ६७, ७३, १०४, ११२, ११५-११७। गान्धारः ७, ११, १६, १७, ३१, ३२, ३८, ३९, ४३, ५०, ५२-५६, ७२, ७५-९९, १०१। मध्यमः ५८, १००॥

दृशानो रुक्मऽउर्व्या व्यद्यौद् दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः ।
अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौरजनयत्सुरेताः ॥१॥
नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकꣳसमीची ।
द्यावाक्षामा रुक्मोऽअन्तर्विभाति देवाऽअग्निं धारयन् द्रविणोदाः ॥२॥
विश्वा रूपाणि प्रतिमुञ्चते कविः प्रासावीद् भद्रं द्विपदे चतुष्पदे ।
वि नाकमख्यत्सविता वरेण्योऽनु प्रयाणमुषसो विराजति ॥३॥
सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ ।
स्तोमऽआत्मा छन्दाꣳस्यङ्गानि यजूꣳषि नाम ।
साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्याः शफाः ।
सुपर्णोऽसि गरुत्मान्दिवं गच्छ स्वः पत ॥४॥
विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा गायत्रं छन्दऽआरोह पृथिवीमनु
विक्रमस्व विष्णोः क्रमोऽस्यभिमातिहा त्रैष्टुभं छन्दऽआरोहान्त-
रिक्षमनु विक्रमस्व विष्णोः क्रमोऽस्यरातीयतो हन्ता जागतं
छन्दऽआरोह दिवमनु विक्रमस्व विष्णोः क्रमोऽसि शत्रूयतो
हन्तानुष्टुभं छन्दऽआरोह दिशोऽनु विक्रमस्व ॥५॥
अक्रन्ददग्नि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद् वीरुधः समञ्जन् ।
सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥६॥
अग्नेऽभ्यावर्त्तिन्नभि मा निवर्त्तस्वायुषा वर्चसा प्रजया धनेन ।
सन्या मेधया रय्या पोषेण ॥७॥
अग्नेऽअङ्गिरः शतं ते सन्त्वावृतः सहस्रं तऽउपावृतः ।
अधा पोषस्य पोषेण पुनर्नो नष्टमाकृधि पुनर्नो रयिमाकृधि ॥८॥
पुनरूर्जा निवर्त्तस्व पुनरग्नऽइषायुषा। पुनर्नः पाह्यꣳहसः ॥९॥
सह रय्या निवर्त्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया। विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि ॥१०॥

आ त्वाहार्षमन्तरभूर्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः ।
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत् ॥११॥
उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय ।
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम ॥१२॥
अग्रे बृहन्नुषसामूर्ध्वोऽअस्थान्निर्जगन्वान् तमसो ज्योतिषागात् ।
अग्निर्भानुना रुशता स्वङ्गऽआ जातो विश्वा सद्मान्यप्राः ॥१३॥
हꣳसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजाऽऋतजाऽअद्रिजाऽऋतं बृहत् ॥१४॥
सीद त्वं मातुरस्याऽउपस्थे विश्वान्यग्ने वयुनानि विद्वान् ।
मैनां तपसा मार्चिषाऽभिशोचीरन्तरस्याꣳशुक्रज्योतिर्विभाहि ॥१५॥
अन्तरग्ने रुचा त्वमुखायाः सदने स्वे ।
तस्यास्त्वꣳहरसा तपञ्जातवेदः शिवो भव ॥१६॥
शिवो भूत्वा मह्यमग्नेऽअथो सीद शिवस्त्वम् ।
शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः ॥१७॥
दिवस्परि प्रथमं जज्ञेऽअग्निरस्मद् द्वितीयं परि जातवेदाः ।
तृतीयमप्सु नृमणाऽअजस्रमिन्धानऽएनं जरते स्वाधीः ॥१८॥
विद्मा तेऽअग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्मा ते धाम विभृता पुरुत्रा ।
विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यतऽआजगन्थ ॥१९॥
समुद्रे त्वा नृमणाऽअप्स्वन्तर्नृचक्षाऽईधे दिवो अग्नऽऊधन् ।
तृतीये त्वा रजसि तस्थिवाꣳसमपामुपस्थे महिषाऽअवर्धन् ॥२०॥
अक्रन्ददग्नि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद् वीरुधः समञ्जन् ।
सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥२१॥
श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ।
वसुः सूनुः सहसोऽअप्सु राजा विभात्यग्रऽउषसामिधानः ॥२२॥

विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भऽआ रोदसीऽअपृणाज्जायमानः ।
वीडुं चिदद्रिमभिनत् परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च ॥२३॥
उशिक् पावको अरतिः सुमेधा मर्त्येष्वग्निरमृतो नि धायि ।
इयर्त्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन् ॥२४॥
दृशानो रुक्मऽउर्व्या व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः ।
अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौरजनयत्सुरेताः ॥२५॥
यस्तेऽअद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने ।
प्र तं नय प्रतरं वस्योऽअच्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ ॥२६॥
आ तं भज सौश्रवसेष्वग्नऽउक्थऽउक्थऽआभज शस्यमाने ।
प्रियः सूर्ये प्रियोऽअग्ना भवात्युज्जातेन भिनददुज्जनित्वैः ॥२७॥
त्वामग्ने यजमानाऽअनु द्यून् विश्वा वसु दधिरे वार्याणि ।
त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमन्तमुशिजो विवव्रुः ॥२८॥
अस्ताव्यग्निर्नराꣳसुशेवो वैश्वानरऽऋषिभिः सोमगोपाः ।
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ॥२९॥
समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन्हव्या जुहोतन ॥३०॥
उदु त्वा विश्वे देवाऽअग्ने भरन्तु चित्तिभिः ।
स नो भव शिवस्त्वꣳसुप्रतीको विभावसुः ॥३१॥
प्रेदग्ने ज्योतिष्मान् याहि शिवेभिरर्चिभिष्ट्वम् ।
बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिꣳसीस्तन्वा प्रजाः ॥३२॥
अक्रन्ददग्नि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद् वीरुधः समञ्जन् ।
सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥३३॥
प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः ।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ दीदाय दैव्योऽअतिथिः शिवो नः ॥३४॥
आपो देवीः प्रतिगृभ्णीत भस्मैतत्स्योने कृणुध्वꣳसुरभाऽउ लोके ।
तस्मै नमन्तां जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्रं बिभृताप्स्वेनत् ॥३५॥

अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनु रुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुनः ॥३६॥
गर्भोऽअस्योषधीनां गर्भो वनस्पतीनाम् ।
गर्भो विश्वस्य भूतस्याग्ने गर्भोऽअपामसि ॥३७॥
प्रसद्य भस्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने ।
सꣳसृज्य मातृभिष्ट्वं ज्योतिष्मान् पुनरासदः ॥३८॥
पुनरासद्य सदनमपश्च पृथिवीमग्ने ।
शेषे मातुर्यथोपस्थेऽन्तरस्याꣳशिवतमः ॥३९॥
पुनरूर्जा निवर्त्तस्व पुनरग्नऽइषायुषा । पुनर्नः पाह्यꣳहसः ॥४०॥
सह रय्या निवर्त्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया । विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि ॥४१॥
बोधा मेऽअस्य वचसो यविष्ठ मꣳहिष्ठस्य प्रभृतस्य स्वधावः ।
पीयति त्वोऽअनु त्वो गृणाति वन्दारुष्टे तन्वं वन्देऽअग्ने ॥४२॥
स बोधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन् ।
युयोध्यस्मद् द्वेषाꣳसि विश्वकर्मणे स्वाहा ॥४३॥
पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः ।
घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥४४॥
अपेत वीत वि च सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतनाः ।
अदाद्यमोऽवसानं पृथिव्याऽअक्रन्निमं पितरो लोकमस्मै ॥४५॥
संज्ञानमसि कामधरणं मयि ते कामधरणं भूयात् ।
अग्नेर्भस्मास्यग्नेः पुरीषमसि चित स्थ परिचितऽऊर्ध्वचितः श्रयध्वम् ॥४६॥
अयꣳसोऽअग्निर्यस्मिन्त्सोममिन्द्रः सुतं दधे जठरे वावशानः ।
सहस्रियं वाजमत्यं न सप्तिꣳससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः ॥४७॥
अग्ने यत्ते दिवि वर्चः पृथिव्यां यदोषधीष्वप्स्वा यजत्र ।
येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ त्वेषः स भानुरर्णवो नृचक्षाः ॥४८॥
अग्ने दिवोऽअर्णमच्छा जिगास्यच्छा देवाँ२॥ऽऊचिषे धिष्ण्या ये ।
या रोचने परस्तात् सूर्यस्य याश्चावस्तादुपतिष्ठन्तऽआपः ॥४९॥

पुरीष्यासोऽअग्नयः प्रावणेभिः सजोषसः ।
जुषन्तां यज्ञमद्रुहोऽनमीवाऽइषो महीः ॥५०॥
इडामग्ने पुरुदꣳसꣳसनिं गोः शश्वत्तमꣳहवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥५१॥
अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः ।
तं जानन्नग्नऽआ रोहाथा नो वर्धया रयिम् ॥५२॥
चिदसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ।
परिचिदसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥५३॥
लोकं पृण छिद्रं पृणाथो सीद ध्रुवा त्वम् ।
इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिरस्मिन् योनावसीषदन् ॥५४॥
ताऽअस्य सूददोहसः सोमꣳश्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ॥५५॥
इन्द्रं विश्वाऽअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमꣳरथीनां वाजानाꣳसत्पतिं पतिम् ॥५६॥
समितꣳसं कल्पेथाꣳसंप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ ।
इषमूर्जमभि संवसानौ ॥५७॥
सं वां मनाꣳसि सं व्रता समु चित्तान्याकरम् ।
अग्ने पुरीष्याधिपा भव त्वं नऽइषमूर्जं यजमानाय धेहि ॥५८॥
अग्ने त्वं पुरीष्यो रयिमान् पुष्टिमाँ२॥ऽअसि ।
शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः ॥५९॥
भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ ।
मा यज्ञꣳहिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः ॥६०॥
मातेव पुत्रं पृथिवी पुरीष्यमग्निꣳस्वे योनावभारुखा ।
तां विश्वैर्देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा वि मुञ्चतु ॥६१॥

असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य ।
अन्यमस्मदिच्छ सा तऽइत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥६२॥
नमः सु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽयस्मयं विचृता बन्धमेतम् ।
यमेन त्वं यम्या संविदानोत्तमे नाकेऽअधिरोहयैनम् ॥६३॥
यस्यास्ते घोरऽआसञ्जुहोम्येषां बन्धानामवसर्जनाय ।
यां त्वा जनो भूमिरिति प्रमन्दते निर्ऋतिं त्वाहं परिवेद विश्वतः ॥६४॥
यं ते देवी निर्ऋतिराबबन्ध पाशं ग्रीवास्वविचृत्यम् ।
तं ते विष्याम्यायुषो न मध्यादथैतं पितुमद्धि प्रसूतः ।
नमो भूत्यै येदं चकार ॥६५॥
निवेशनः सङ्गमनो वसूनां विश्वा रूपाभिचष्टे शचीभिः ।
देवऽइव सविता सत्यधर्मेन्द्रो न तस्थौ समरे पथीनाम् ॥६६॥
सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वितन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नया ॥६७॥
युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम् ।
गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नेदीयऽइत्सृण्यः पक्वमेयात् ॥६८॥
शुनꣳसु फाला विकृषन्तु भूमिꣳशुनं कीनाशाऽअभियन्तु वाहैः ।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पलाऽओषधीः कर्त्तनास्मे ॥६९॥
घृतेन सीता मधुना समज्यतां विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः ।
ऊर्जस्वती पयसा पिन्वमानास्मान्त्सीते पयसाभ्याववृत्स्व ॥७०॥
लाङ्गलं पवीरवत्सुशेवꣳसोमपित्सरु ।
तदुद्वपति गामविं प्रफर्व्यं च पीवरीं प्रस्थावद्रथवाहनम् ॥७१॥
कामं कामदुघे धुक्ष्व मित्राय वरुणाय च ।
इन्द्रायाश्विभ्यां पूष्णे प्रजाभ्यऽओषधीभ्यः ॥७२॥
विमुच्यध्वमघ्न्या देवयानाऽअगन्म तमसस्पारमस्य। ज्योतिरापाम ॥७३॥
सजूरब्दोऽअयवोभिः सजूरुषाऽअरुणीभिः। सजोषसावश्विना
दꣳसोभिः सजूः सूरऽएतशेन सजूर्वैश्वानरऽइडया घृतेन स्वाहा ॥७४॥

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा ।
मनै नु बभ्रूणामहꣳशतं धामानि सप्त च ॥७५॥
शतं वोऽअम्ब धामानि सहस्रमुत वो रुहः ।
अधा शतक्रत्वो यूयमिमं मेऽअगदं कृत ॥७६॥
ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्वाऽइव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्ण्वः ॥७७॥
ओषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरुप ब्रुवे ।
सनेयमश्वं गां वासऽआत्मानं तव पूरुष ॥७८॥
अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता ।
गोभाजऽइत् किलासथ यत् सनवथ पूरुषम् ॥७९॥
यत्रौषधीः समग्मत राजानः समिताविव ।
विप्रः सऽउच्यते भिषग्रक्षोहामीवचातनः ॥८०॥
अश्वावतीꣳसोमावतीमूर्जयन्तीमुदोजसम् ।
आवित्सि सर्वाऽओषधीरस्मा अरिष्टतातये ॥८१॥
उच्छुष्माऽओषधीनां गावो गोष्ठादिवेरते ।
धनꣳसनिष्यन्तीनामात्मानं तव पूरुष ॥८२॥
इष्कृतिर्नाम वो माताथो यूयꣳस्थ निष्कृतीः ।
सीराः पतत्रिणी स्थन यदामयति निष्कृथ ॥८३॥
अति विश्वाः परिष्ठा स्तेनऽइव व्रजमक्रमुः ।
ओषधीः प्राचुच्यवुर्यत्किं च तन्वो रपः ॥८४॥
यदिमा वाजयन्नहमोषधीर्हस्तऽआदधे ।
आत्मा यक्ष्मस्य नश्यति पुरा जीवगृभो यथा ॥८५॥
यस्यौषधीः प्रसर्पथाङ्गमङ्गं परुष्परुः ।
ततो यक्ष्मं विबाधध्वऽउग्रो मध्यमशीरिव ॥८६॥

साकं यक्ष्म प्रपत चाषेण किकिदीविना ।
साकं वातस्य ध्राज्या साकं नश्य निहाकया ॥८७॥
अन्या वोऽअन्यामवत्वन्यान्यस्याऽ उपावत ।
ताः सर्वाः संविदानाऽइदं मे प्रावता वचः ॥८८॥
याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳहसः ॥८९॥
मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत ।
अथो यमस्य पड्वीशात्सर्वस्माद् देवकिल्बिषात् ॥९०॥
अवपतन्तीरवदन्दिवऽओषधयस्परि ।
यं जीवमश्नवामहै न स रिष्याति पूरुषः ॥९१॥
याऽओषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः शतविचक्षणाः ।
तासामसि त्वमुत्तमारं कामाय शꣳहृदे ॥९२॥
याऽओषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताः पृथिवीमनु ।
बृहस्पतिप्रसूताऽअस्यै सन्दत्त वीर्यम् ॥९३॥
याश्चेदमुपशृण्वन्ति याश्च दूरं परागताः ।
सर्वाः सङ्गत्य वीरुधोऽस्यै सन्दत्त वीर्यम् ॥९४॥
मा वो रिषत् खनिता यस्मै चाहं खनामि वः ।
द्विपाच्चतुष्पादस्माकꣳसर्वमस्त्वनातुरम् ॥९५॥
ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा ।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तꣳराजन् पारयामसि ॥९६॥
नाशयित्री बलासस्यार्शसऽ उपचितामसि ।
अथो शतस्य यक्ष्माणां पाकारोरसि नाशनी ॥९७॥
त्वां गन्धर्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।
त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥९८॥

सहस्व मेऽअरातीः सहस्व पृतनायतः ।
सहस्व सर्वं पाप्मानꣳसहमानास्योषधे ॥९९॥
दीर्घायुस्तऽओषधे खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम् ।
अथो त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा विरोहतात् ॥१००॥
त्वमुत्तमास्योषधे तव वृक्षाऽ उपस्तयः ।
उपस्तिरस्तु सोऽस्माकं योऽअस्माँ२॥ऽअभिदासति ॥१०१॥
मा मा हिꣳसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा
दिवꣳसत्यधर्मा व्यानट् । यश्चापश्चन्द्राः प्रथमो जजान
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१०२॥
अभ्यावर्त्तस्व पृथिवि यज्ञेन पयसा सह ।
वपां तेऽअग्निरिषितोऽअरोहत् ॥१०३॥
अग्ने यत्ते शुक्रं यच्चन्द्रं यत्पूतं यच्च यज्ञियम् ।
तद्देवेभ्यो भरामसि ॥१०४॥
इषमूर्जमहमितऽआदमृतस्य योनिं महिषस्य धाराम् ।
आ मा गोषु विशत्वा तनूषु जहामि सेदिमनिराममीवाम् ॥१०५॥
अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्तेऽअर्चयो विभावसो ।
बृहद्भानो शवसा वाजमुक्थ्यं दधासि दाशुषे कवे ॥१०६॥
पावकवर्चाः शुक्रवर्चाऽअनूनवर्चाऽ उदियर्षि भानुना ।
पुत्रो मातरा विचरन्नुपावसि पृणक्षि रोदसीऽ उभे ॥१०७॥
ऊर्जो नपाज्जातवेदः सुशस्तिभिर्मन्दस्व धीतिभिर्हितः ।
त्वेऽइषः सन्दधुर्भूरिवर्पसश्चित्रोतयो वामजाताः ॥१०८॥
इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायोऽअमर्त्य ।
स दर्शतस्य वपुषो विराजसि पृणक्षि सानसिं क्रतुम् ॥१०९॥
इष्कर्त्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तꣳराधसो महः ।
रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिꣳरयिम् ॥११०॥

ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निꣳसुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।
श्रुत्कर्णꣳसप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥१११॥
आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ।
भवा वाजस्य सङ्गथे ॥११२॥
सं ते पयाꣳसि समु यन्तु वाजाः सं वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः ।
आप्यायमानोऽअमृताय सोम दिवि श्रवाꣳस्युत्तमानि धिष्व ॥११३॥
आप्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वेभिरꣳशुभिः।
भवा नः सप्रथस्तमः सखा वृधे ॥११४॥
आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् ।
अग्ने त्वां कामया गिरा ॥११५॥
तुभ्यं ताऽअङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक् ।
अग्ने कामाय येमिरे ॥११६॥
अग्निः प्रियेषु धामसु कामो भूतस्य भव्यस्य।
सम्राडेको विराजति ॥११७॥

इति द्वादशोऽध्यायः॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—वत्सारः १-३। हिरण्यगर्भः ४-८। वामदेवः ९-१४। त्रिशिराः १५-१९। अग्निः २०, २१। इन्द्राग्नी २२-२५। सविता २६। गोतमः २७-३५। भारद्वाजः ३६। विरूपः ३७-५१। उशनाः ५२-५८॥

देवता—अग्निः १, २, ९-१६, १८, १९, २२, ३६-४५, ४७-५२। आदित्यः ३। प्रजापतिः ४, १७, २४, ३०, ५५-५८। ईश्वरः ५। हिरण्यगर्भः ६,७। सूर्यः ८, ४६। पत्नी २०, २१। बृहस्पतिः २३। ऋतवः २५। क्षत्रपतिः २६। विश्वेदेवाः २७-२९। वरुणः ३१। द्यावापृथिव्यौ ३२। विष्णुः ३३। जातवेदाः ३४, ३५। आपः ५३। प्राणाः ५४॥

छन्दः--आर्चीपङ्क्तिः १। विराट्त्रिष्टुप् २। निचृत्त्रिष्टुप् ३, ५, ११, ४२-४४, ४६। त्रिष्टुप् ४, ३१, ३८, ४१, ४५। भुरिगुष्णिक् ६। अनुष्टुप् ७, १७, २०, २३। निचृदनुष्टुप् ८, २१, २६। भुरिक्पङ्क्तिः ९, १०। भुरिगार्षीपङ्क्तिः १२। निचृदतिजगती १३। भुरिगनुष्टुप् १४, २२। निचृदार्षीत्रिष्टुप् १५। स्वराडार्ष्यनुष्टुप् १६। प्रस्तारपङ्क्तिः १८। भुरिगतिजगती १९। निचृद्धृतिः २४। भुरिगतिजगती[क], भुरिग्ब्राह्मीबृहती[र] २५। निचृद्गायत्री २७, २९, ३३, ३६, ३७, ५२। गायत्री २८, ३२। आर्षीपङ्क्तिः ३०। भुरिक्त्रिष्टुप् ३४। निचृद्बृहती ३५, ३९। निचृदुष्णिक् ४०। विराड्ब्राह्मीपङ्क्तिः ४७। निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः ४८। कृतिः ४९। भुरिक्कृतिः ५०, ५१। भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः[उ], ब्राह्मीजगती[क], निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः[र] ५३। स्वराड्-ब्राह्मीजगती ५४। निचृदतिधृतिः ५५, ५६। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ५७। विराडाकृतिः ५८॥

स्वरः—पञ्चमः १, ९, १०, १२, १८, ३०, ४७, ४८, ५८। धैवतः २-५, ११, १५, ३१, ३४, ३८, ४१-४६, ५७। ऋषभः ६, २४, ४०। गान्धारः ७, ८, १४, १६, १७, २०-२३, २६। निषादः १३, १९, ४९-५१, ५४। निषादः[क], मध्यमः[र] २५। षड्जः २७-२९, ३२, ३३, ३६, ३७, ५२, ५५, ५६। मध्यमः ३५, ३९। पञ्चमः[उ,र], निषादः[क] ५३॥

मयि गृह्णाम्यग्रेऽअग्निꣳरायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ।
मामु देवताः सचन्ताम् ॥१॥
अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः समुद्रमभितः पिन्वमानम् ।
वर्धमानो महाँ२॥ऽआ च पुष्करे दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथस्व ॥२॥
ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेनऽआवः ।
स बुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥३॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥४॥
द्रप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः।
समानं योनिमनु संचरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः ॥५॥
नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु ।
येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥६॥
याऽइषवो यातुधानानां ये वा वनस्पतीँ१॥ऽरनु ।
ये वावटेषु शेरते तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥७॥
ये वामी रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु ।
येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥८॥
कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ२॥ऽइभेन।
तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥९॥
तव भ्रमासऽआशुया पतन्त्यनुस्पृश धृषता शोशुचानः ।
तपूꣳष्यग्ने जुह्वा पतङ्गानसन्दितो विसृज विष्वगुल्काः ॥१०॥
प्रति स्पशो विसृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशोऽअस्या अदब्धः।
यो नो दूरेऽअघशꣳसो योऽअन्त्यग्ने माकिष्टे व्यथिरादधर्षीत्॥११॥
उदग्ने तिष्ठ प्रत्यातनुष्व न्यमित्राँ२॥ऽओषतात्तिग्महेते ।
यो नोऽअरातिꣳसमिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम्॥१२॥
ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने ।
अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्रमृणीहि शत्रून्।
अग्नेष्ट्वा तेजसा सादयामि ॥१३॥
अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ।
अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति। इन्द्रस्य त्वौजसा सादयामि ॥१४॥
भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः।
दिवि मूर्द्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम्॥१५॥

ध्रुवासि धरुणास्तृता विश्वकर्मणा ।
मा त्वा समुद्रऽउद्वधीन्मा सुपर्णोऽव्यथमाना पृथिवीं दृꣳह ॥१६॥
प्रजापतिष्ट्वा सादयत्वपां पृष्ठे समुद्रस्येमन् ।
व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं प्रथस्व पृथिव्यसि ॥१७॥
भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳह पृथिवीं मा हिꣳसीः ॥१८॥
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय।
अग्निष्ट्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया
देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥१९॥
काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषःपरुषस्परि ।
एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥२०॥
या शतेन प्रतनोषि सहस्रेण विरोहसि ।
तस्यास्ते देवीष्टके विधेम हविषा वयम् ॥२१॥
यास्तेऽअग्ने सूर्ये रुचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः ।
ताभिर्नोऽअद्य सर्वाभी रुचे जनाय नस्कृधि ॥२२॥
या वो देवाः सूर्ये रुचो गोष्वश्वेषु या रुचः ।
इन्द्राग्नी ताभिः सर्वाभी रुचं नो धत्त बृहस्पते ॥२३॥
विराड् ज्योतिरधारयत् स्वराड् ज्योतिरधारयत् ।
प्रजापतिष्ट्वा सादयतु पृष्ठे पृथिव्या ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
अग्निष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥२४॥
कमधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां
द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम
ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। खयेऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे।
वासन्तिकावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु
तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥२५॥

अषाढासि सहमाना सहस्वारातीः सहस्व पृतनायतः ।
सहस्रवीर्यासि सा मा जिन्व ॥२६॥
मधु वाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः ।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥२७॥
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳरजः ।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥२८॥
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ२॥ऽअस्तु सूर्यः ।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥२९॥
अपां गम्भन्त्सीद मा त्वा सूर्योऽभिताप्सीन्माग्निर्वैश्वानरः ।
अच्छिन्नपत्राः प्रजाऽअनुवीक्षस्वानु त्वा दिव्या वृष्टिः सचताम् ॥३०॥
त्रीन्त्समुद्रान्त्समसृपत् स्वर्गानपां पतिर्वृषभऽइष्टकानाम् ।
पुरीषं वसानः सुकृतस्य लोके तत्र गच्छ यत्र पूर्वे परेताः ॥३१॥
मही द्यौः पृथिवी च नऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम् ।
पिपृतां नो भरीमभिः ॥३२॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे ।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥३३॥
ध्रुवासि धरुणेतो जज्ञे प्रथममेभ्यो योनिभ्योऽअधि जातवेदाः ।
स गायत्र्या त्रिष्टुभानुष्टुभा च देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ॥३४॥
इषे राये रमस्व सहसे द्युम्नऽऊर्जेऽअपत्याय ।
सम्राडसि स्वराडसि सारस्वतौ त्वोत्सौ प्रावताम् ॥३५॥
अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः ।
अरं वहन्ति मन्यवे ॥३६॥
युक्ष्वा हि देवहूतमाँ२॥ऽअश्वाँ२॥ऽअग्ने रथीरिव ।
नि होता पूर्व्यः सदः ॥३७॥

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेनाऽअन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः ।
घृतस्य धाराऽअभिचाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्येऽअग्नेः ॥३८॥
ऋचे त्वा रुचे त्वा भासे त्वा ज्योतिषे त्वा ।
अभूदिदं विश्वस्य भुवनस्य वाजिनमग्नेर्वैश्वानरस्य च ॥३९॥
अग्निर्ज्योतिषा ज्योतिष्मान् रुक्मो वर्चसा वर्चस्वान् ।
सहस्रदाऽअसि सहस्राय त्वा ॥४०॥
आदित्यं गर्भं पयसा समङ्ग्धि सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम् ।
परिवृङ्ग्धि हरसा माभिमꣳस्थाः शतायुषं कृणुहि चीयमानः ॥४१॥
वातस्य जूतिं वरुणस्य नाभिमश्वं जज्ञानꣳसरिरस्य मध्ये ।
शिशुं नदीनाꣳहरिमद्रिबुध्नमग्ने मा हिꣳसीः परमे व्योमन् ॥४२॥
अजस्रमिन्दुमरुषं भुरण्युमग्निमीडे पूर्वचित्तिं नमोभिः ।
स पर्वभिर्ऋतुशः कल्पमानो गां मा हिꣳसीरदितिं विराजम् ॥४३॥
वरूत्रीं त्वष्टुर्वरुणस्य नाभिमविं जज्ञानाꣳरजसः परस्मात् ।
महीꣳसाहस्रीमसुरस्य मायामग्ने मा हिꣳसीः परमे व्योमन् ॥४४॥
योऽअग्निरग्नेरध्यजायत शोकात्पृथिव्याऽउत वा दिवस्परि ।
येन प्रजा विश्वकर्मा जजान तमग्ने हेडः परि ते वृणक्तु ॥४५॥
चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳसूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥४६॥
इमं मा हिꣳसीर्द्विपादं पशुꣳसहस्राक्षो मेधाय चीयमानः ।
मयुं पशुं मेधमग्ने जुषस्व तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद ।
मयुं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥४७॥
इमं मा हिꣳसीरेकशफं पशुं कनिक्रदं वाजिनं वाजिनेषु ।
गौरमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद ।
गौरं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥४८॥

इमꣳ साहस्रꣳ शतधारमुत्सं व्यच्यमानꣳ सरिरस्य मध्ये ।
घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हिꣳसीः परमे व्योमन् ।
गवयमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद ।
गवयं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥४९॥
इममूर्णायुं वरुणस्य नाभिं त्वचं पशूनां द्विपदां चतुष्पदाम् ।
त्वष्टुः प्रजानां प्रथमं जनित्रमग्ने मा हिꣳसीः परमे व्योमन् ।
उष्ट्रमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद ।
उष्ट्रं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥५०॥
अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकात्सोऽअपश्यज्जनितारमग्रे ।
तेन देवा देवतामग्रमायँस्तेन रोहमायन्नुप मेध्यासः ।
शरभमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद ।
शरभं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥५१॥
त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः । रक्षा तोकमुत त्मना ॥५२॥
[उ]अपां त्वेमन्त्सादयाम्यपां त्वोद्मन्त्सादयाम्यपां त्वा भस्मन्त्सादयाम्यपां
त्वा ज्योतिषि सादयाम्यपां त्वायने सादयाम्यर्णवे त्वा सदने सादयामि
समुद्रे त्वा सदने सादयामि [क]सरिरे त्वा सदने सादयाम्यपां त्वा
क्षये सादयाम्यपां त्वा सधिषि सादयाम्यपां त्वा सदने सादयाम्यपां
त्वा सधस्थे सादयाम्यपां त्वा योनौ सादयाम्यपां त्वा पुरीषे
सादयाम्यपां त्वा पाथसि सादयामि [ग]गायत्रेण त्वा छन्दसा सादयामि
त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा सादयामि जागतेन त्वा छन्दसा सादयाम्यानुष्टुभेन
त्वा छन्दसा सादयामि पाङ्क्तेन त्वा छन्दसा सादयामि ॥५३॥
अयं पुरो भुवस्तस्य प्राणो भौवायनो वसन्तः प्राणायनो गायत्री
वासन्ती गायत्र्यै गायत्रं गायत्रादुपाꣳशुरुपाꣳशोस्त्रिवृत्त्रिवृतो रथन्तरं
वसिष्ठऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया प्राणं गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥५४॥

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य मनो वैश्वकर्मणं ग्रीष्मो मानसस्त्रिष्टुब्ग्रैष्मी
त्रिष्टुभः स्वारꣳ स्वारादन्तर्यामोऽन्तर्यामात्पञ्चदशः पञ्चदशाद् बृहद्
भरद्वाजऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥५५॥
अयं पश्चाद् विश्वव्यचास्तस्य चक्षुर्वैश्वव्यचसं वर्षाश्चाक्षुष्यो जगती
वार्षी जगत्याऽऋक्सममृक्समाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशः सप्तदशाद्वैरूपं
जमदग्निर्ऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥५६॥
इदमुत्तरात् स्वस्तस्य श्रोत्रꣳ सौवꣳ शरच्छ्रौत्र्यनुष्टुप् शारद्यनुष्टुभऽ
ऐडमैडान्मन्थी मन्थिनऽएकविꣳशऽएकविꣳशाद् वैराजं विश्वामित्रऽ
ऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया श्रोत्रं गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥५७॥
इयमुपरि मतिस्तस्यै वाङ्मात्या हेमन्तो वाच्यः पङ्क्तिर्हैमन्ती
पङ्क्त्यै निधनवन्निधनवतऽआग्रयणऽआग्रयणात् त्रिणवत्रयस्त्रिꣳशौ
त्रिणवत्रयस्त्रिꣳशाभ्याꣳ शाक्वररैवते विश्वकर्मऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया
त्वया वाचं गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥५८॥

इति त्रयोदशोऽध्यायः॥

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—उशनाः १-६। विश्वेदेवाः ७, ९, ११, १४, १६, १७। विश्वदेवः ८, १०, १३, १५, १८-३१। विश्वकर्मा १२॥

देवता—अश्विनौ १-५। ग्रीष्मर्तुः ६। वस्वादयो मन्त्रोक्ताः ७। दम्पती ८। प्रजापत्यादयः ९। विद्वांसः १०। इन्द्राग्नी ११। वायुः १२, १४। दिशः १३। ऋतवः १५-१७, २७। छन्दांसि १८। पृथिव्यादयः १९। अग्न्यादयः २०। विदुषी २१, २२। यज्ञः २३। मेधाविनः २४। वस्वादयो लिङ्गोक्ताः २५। ऋभवः २६। ईश्वरः २८, २९। जगदीश्वरः ३०। प्रजापतिः ३१॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १। निचृद्ब्राह्मीबृहती २। विराड्ब्राह्मीबृहती ३। भुरिग्ब्राह्मीबृहती ४। भुरिक्शक्वरी ५। निचृदुत्कृतिः ६। भुरिक्प्रकृतिः[उ], स्वराट्पङ्क्तिः[क], निचृदाकृतिः[र] ७। भुरिग्जगती ८। निचृद्ब्राह्मीपङ्क्तिः[क], शक्वरी[र] ९। निचृदष्टिः १०। भुरिगनुष्टुप् ११। भुरिग्विकृतिः १२। विराट्पङ्क्तिः १३। स्वराड्ब्राह्मीबृहती १४। स्वराडुत्कृतिः १५। उत्कृतिः १६। स्वराड्ब्राह्म्यनुष्टुप् १७। भुरिगतिजगती १८। आर्षीजगती १९। भुरिग्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २०। निचृदनुष्टुप् २१। निचृदुष्णिक् २२। भुरिग्ब्राह्मीपङ्क्तिः[क], भुरिगतिजगती[र] २३। भुरिग्विकृतिः २४। निचृदभिकृतिः २५। निचृदतिजगती २६। भुरिगतिजगती[क], भुरिग्ब्राह्मीबृहती[र] २७। निचृद्विकृतिः २८। आर्षीत्रिष्टुप्[क], ब्राह्मीजगती[र] २९। स्वराडब्राह्मीजगती[क], ब्राह्मीपङ्क्तिः[र] ३०। निचृदतिधृतिः ३१॥

स्वरः—धैवतः १, ५, २०। मध्यमः २-४, १०, १२, १४, २४, २८। षड्जः ६, १५, १६, ३१। धैवतः[उ], पञ्चमः[क, र] ७। निषादः ८, १८, १९, २६। पञ्चमः[क], धैवतः[र] ९। गान्धारः ११, १७, २१। पञ्चमः १३। ऋषभः २२, २५। पञ्चमः[क], निषादः[र] २३। निषादः[क], मध्यमः[र] २७। धैवतः[क], निषादः[र] २९। निषादः[क], पञ्चमः[र] ३०॥

ध्रुवक्षितिर्ध्रुवयोनिर्ध्रुवासि ध्रुवं योनिमासीद साधुया ।
उख्यस्य केतुं प्रथमं जुषाणाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥१॥
कुलायिनी घृतवती पुरन्धिः स्योने सीद सदने पृथिव्याः ।
अभि त्वा रुद्रा वसवो गृणन्त्विमा ब्रह्म पीपिहि
सौभगायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥२॥
स्वैर्दक्षैर्दक्षपितेह सीद देवानांꣳसुम्ने बृहते रणाय ।
पितेवैधि सूनवऽआ सुशेवा स्वावेशा तन्वा
संविशस्वाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥३॥

पृथिव्याः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु देवाः ।
स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणा
यजस्वाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥४॥
अदित्यास्त्वा पृष्ठे सादयाम्यन्तरिक्षस्य धर्त्रीं विष्टम्भनीं
दिशामधिपत्नीं भुवनानाम् । ऊर्मिर्द्रप्सोऽअपामसि
विश्वकर्मा तऽऋषिरश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥५॥
शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी
कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः ।
येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे । ग्रैष्मावृतूऽअभिकल्पमानाऽ
इन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥६॥
[उ]सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्देवैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा
वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः
सजूर्वसुभिः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू
सादयतामिह त्वा [क]सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजू रुद्रैः सजूर्देवैर्वयो-
नाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा [र]सजूर्ऋतुभिः
सजूर्विधाभिः सजूरादित्यैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू
सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्विश्वैर्देवैः सजूर्देवैर्वयो-
नाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥७॥
प्राणम्मे पाह्यपानम्मे पाहि व्यानम्मे पाहि चक्षुर्मऽउर्व्या
विभाहि श्रोत्रम्मे श्लोकय । अपः पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव
चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय ॥८॥
[क]मूर्धा वयः प्रजापतिश्छन्दः क्षत्रं वयो मयन्दं छन्दो विष्टम्भो
वयोऽधिपतिश्छन्दो विश्वकर्मा वयः परमेष्ठी छन्दो बस्तो वयो
विवलं छन्दो वृष्णिर्वयो विशालं छन्दः [र]पुरुषो वयस्तन्द्रं छन्दो
व्याघ्रो वयोऽनाधृष्टं छन्दः सिꣳहो वयश्छदिश्छन्दः पष्ठवाड् वयो
बृहती छन्दऽउक्षा वयः ककुप् छन्दऽऋषभो वयः सतोबृहती छन्दः ॥९॥

अनड्वान्वयः पङ्क्तिश्छन्दो धेनुर्वयो जगती छन्दस्त्र्यविर्वयस्त्रिष्टुप्
छन्दो दित्यवाड् वयो विराट् छन्दः पञ्चाविर्वयो गायत्री
छन्दस्त्रिवत्सो वयऽ उष्णिक् छन्दस्तुर्यवाड् वयोऽनुष्टुप् छन्दः ॥१०॥

इन्द्राग्नीऽअव्यथमानामिष्टकां दृꣳहतं युवम् ।
पृष्ठेन द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षं च विबाधसे ॥११॥

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीमन्तरिक्षं
यच्छान्तरिक्षं दृꣳहान्तरिक्षं मा हिꣳसीः। विश्वस्मै प्राणायापानाय
व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय। वायुष्ट्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या
छर्दिषा शन्तमेन तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥१२॥

राज्ञ्यसि प्राची दिग्विराडसि दक्षिणा दिक् सम्राडसि प्रतीची
दिक् स्वराडस्युदीची दिगधिपत्न्यसि बृहती दिक् ॥१३॥

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
वायुष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥१४॥

नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां
द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम
ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे।
वार्षिकावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया
देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥१५॥

इषश्चोर्जश्च शारदावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी
कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः।
येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे। शारदावृतूऽअभिकल्पमानाऽ
इन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्॥१६॥

आयुर्मे पाहि प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि
चक्षुर्मे पाहि श्रोत्रं मे पाहि वाचम्मे पिन्व मनो मे
जिन्वात्मानम्मे पाहि ज्योतिर्मे यच्छ ॥१७॥

मा छन्दः प्रमा छन्दः प्रतिमा छन्दोऽअस्त्रीवयश्छन्दः
पङ्क्तिश्छन्दऽउष्णिक् छन्दो बृहती छन्दोऽनुष्टुप् छन्दो विराट्
छन्दो गायत्री छन्दस्त्रिष्टुप् छन्दो जगती छन्दः ॥१८॥

पृथिवी छन्दोऽन्तरिक्षं छन्दो द्यौश्छन्दः समाश्छन्दो नक्षत्राणि
छन्दो वाक् छन्दो मनश्छन्दः कृषिश्छन्दो हिरण्यं छन्दो
गौश्छन्दोऽजाच्छन्दोऽश्वश्छन्दः ॥१९॥

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो
देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवा
देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥२०॥

मूर्द्धासि राड् ध्रुवासि धरुणा धर्त्र्यसि धरणी ।
आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा ॥२१॥

यन्त्री राड् यन्त्र्यसि यमनी ध्रुवासि धरित्री ।
इषे त्वोर्जे त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा ॥२२॥

[क]आशुस्त्रिवृद्भान्तः पञ्चदशो व्योमा सप्तदशो धरुणऽएकविꣳशः
प्रतूर्तिरष्टादशस्तपो नवदशोऽभीवर्त्तः सविꣳशो वर्चो द्वाविꣳशः
सम्भरणस्त्रयोविꣳशो योनिश्चतुर्विꣳशो गर्भाः पञ्चविꣳशऽ
ओजस्त्रिणवः क्रतुरेकत्रिꣳशः प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिꣳशो ब्रध्नस्य विष्टपं
चतुस्त्रिꣳशो नाकः षट्त्रिꣳशो विवर्त्तोऽष्टाचत्वारिꣳशो धर्त्रं चतुष्टोमः॥२३॥

अग्नेर्भागोऽसि दीक्षायाऽआधिपत्यं ब्रह्म स्पृतं त्रिवृत्स्तोमऽइन्द्रस्य
भागोऽसि विष्णोराधिपत्यं क्षत्रꣳस्पृतं पञ्चदश स्तोमो नृचक्षसां
भागोऽसि धातुराधिपत्यं जनित्रꣳस्पृतꣳसप्तदश स्तोमो मित्रस्य
भागोऽसि वरुणस्याधिपत्यं दिवो वृष्टिर्वात स्पृतऽएकविꣳश स्तोमः॥२४॥

वसूनां भागोऽसि रुद्राणामाधिपत्यं चतुष्पात् स्पृतं चतुर्विंश
स्तोमऽआदित्यानां भागोऽसि मरुतामाधिपत्यं गर्भा स्पृताः
पञ्चविंश स्तोमोऽदित्यै भागोऽसि पूष्णऽआधिपत्यमोज
स्पृतं त्रिणव स्तोमो देवस्य सवितुर्भागोऽसि बृहस्पतेराधिपत्यꣳ
समीचीर्दिश स्पृताश्चतुष्टोम स्तोमः ॥२५॥
यवानां भागोऽस्ययवानामाधिपत्यं प्रजा स्पृताश्चतुश्चत्वारिꣳश
स्तोमऽऋभूणां भागोऽसि विश्वेषां देवानामाधिपत्यं भूतꣳस्पृतं
त्रयस्त्रिꣳश स्तोमः ॥२६॥
[क]सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां
द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम
ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। [र]येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे।
हैमन्तिकावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया
देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥२७॥
एकयास्तुवत प्रजाऽअधीयन्त प्रजापतिरधिपतिरासीत्तिसृभिरस्तुवत
ब्रह्मासृज्यत ब्रह्मणस्पतिरधिपतिरासीत् पञ्चभिरस्तुवत
भूतान्यसृज्यन्त भूतानां पतिरधिपतिरासीत् सप्तभिरस्तुवत
सप्त ऋषयोऽसृज्यन्त धाताधिपतिरासीत् ॥२८॥
[क]नवभिरस्तुवत पितरोऽसृज्यन्तादितिरधिपत्न्यासीदेकादशभिर-
स्तुवतऽऋतवोऽसृज्यन्तार्त्तवाऽअधिपतयऽआसंस्त्रयोदशभिरस्तुवत
मासाऽअसृज्यन्त संवत्सरोऽधिपतिरासीत् पञ्चदशभिरस्तुवत
क्षत्रमसृज्यतेन्द्रोऽधिपतिरासीत्सप्तदशभिरस्तुवत ग्राम्याः पशवोऽ
सृज्यन्त बृहस्पतिरधिपतिरासीत् ॥२९॥

[क]नवदशभिरस्तुवत शूद्रार्यावसृज्येतामहोरात्रेऽअधिपत्नीऽआस्तामे-
कविꣳशत्यास्तुवतैकशफाः पशवोऽसृज्यन्त वरुणोऽधिपतिरासीत्
त्रयोविꣳशत्यास्तुवत क्षुद्राः पशवोऽसृज्यन्त पूषाधिपतिरासीत्
[र]पञ्चविꣳशत्यास्तुवतारण्याः पशवोऽसृज्यन्त वायुरधिपतिरासीत्
सप्तविꣳशत्यास्तुवत द्यावापृथिवी व्यैतां वसवो रुद्राऽआदित्याऽ
अनुव्यायँस्तऽएवाधिपतयऽआसन् ॥३०॥
नवविꣳशत्यास्तुवत वनस्पतयोऽसृज्यन्त सोमोऽधिपतिरासीदे-
कत्रिꣳशतास्तुवत प्रजाऽअसृज्यन्त यवाश्चायवाश्चाधिपतयऽआसंस्त्रय-
स्त्रिꣳशतास्तुवत भूतान्यशाम्यन् प्रजापतिः परमेष्ठ्यधिपतिरासीत् ॥३१॥

इति चतुर्दशोऽध्यायः॥

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—परमेष्ठी १-५९। प्रियमेधा ६०। मधुच्छन्दाः ६१, ६५। वसिष्ठः ६२-६४॥

देवता—अग्निः १, २, २०-५६, ६२। दम्पती ३। विद्वांसः ४-७। प्रजापतिः ८, ९। वसवः १०। रुद्राः ११। आदित्याः १२। मरुतः १३। विश्वेदेवाः १४। वसन्तर्तुः १५। ग्रीष्मर्तुः १६। वर्षर्तुः १७। शरदृतुः १८। हेमन्तर्तुः १९। शिशिरर्तुः ५७। विदुषी ५८, ६३। इन्द्राग्नी ५९। आपः ६०। इन्द्रः ६१। परमात्मा ६४। विद्वान् ६५॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १। भुरिक्त्रिष्टुप् २। ब्राह्मीत्रिष्टुप् ३, ७। भुरिगाकृतिः ४। निचृदभिकृतिः ५। विराडभिकृतिः ६। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् ८। विराड्ब्राह्मीजगती ९। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप्[क] ब्राह्मीबृहती[र] १०। स्वराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप्[क] ब्राह्मीबृहती[र] ११, १३। भुरिग्ब्राह्मीजगती[क], ब्राह्मीबृहती[र] १२। ब्राह्मीजगती[क], ब्राह्मीत्रिष्टुप्[र] १४। विकृतिः १५। निचृत्प्रकृतिः १६। कृतिः १७। भुरिगतिधृतिः १८। निचृत्कृतिः १९। निचृद्गायत्री २०-२२। निचृदार्षीत्रिष्टुप् २३, ५२। निचृत्त्रिष्टुप् २४, २५। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् २६, ५०। निचृदार्षीजगती २७। विराडार्षीजगती २८। विराडनुष्टुप् २९-३१, ५९, ६०, ६५। विराड्बृहती ३२। निचृद्बृहती ३३। आर्ष्यनुष्टुप् ३४। उष्णिक् ३५, ३८। निचृदुष्णिक् ३६, ३७, ३९, ४०। निचृत्पङ्क्तिः ४१, ४३। आर्षीपङ्क्तिः ४२। आर्षीगायत्री ४४। भुरिगार्षीगायत्री ४५, ४६। विराड्ब्राह्मीत्रिष्टुप् ४७। स्वराड्ब्राह्मीबृहती ४८। आर्षीत्रिष्टुप् ४९, ५४। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् ५१। भुरिगार्षीपङ्क्तिः ५३। निचृदनुष्टुप् ५५, ५६, ६१। स्वराडुत्कृतिः ५७। ब्राह्मीबृहती ५८। विराट्त्रिष्टुप् ६२, ६३। आकृतिः ६४॥

स्वरः—धैवतः १-३, ७, १६, २३-२६, ४७, ४९-५२, ५४, ६२, ६३। पञ्चमः ४, ४१-४३, ५३, ६४। ऋषभः ५, ६, ३५-४०। गान्धारः ८, २९-३१, ३४, ५५, ५६, ५९-६१, ६५। निषादः ९, १७, १९, २७, २८। धैवतः[क], मध्यमः[र] १०, ११, १३। निषादः[क], मध्यमः[र] १२। निषादः[क], धैवतः[र] १४। मध्यमः १५, ३२, ३३, ४८, ५८। षड्जः १८, २०-२२, ४४-४६, ५७॥

अग्ने जातान् प्रणुदा नः सपत्नान् प्रत्यजातान्नुद जातवेदः ।
अधि नो ब्रूहि सुमनाऽअहेडँस्तव स्याम शर्मँस्त्रिवरूथऽउद्भौ ॥१॥
सहसा जातान् प्रणुदा नः सपत्नान् प्रत्यजातान् जातवेदो नुदस्व।
अधि नो ब्रूहि सुमनस्यमानो वयꣳस्याम प्रणुदा नः सपत्नान्॥२॥
षोडशी स्तोमऽओजो द्रविणं चतुश्चत्वारिꣳश स्तोमो वर्चो द्रविणम्।
अग्नेः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु देवाः।
स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणायजस्व ॥३॥

एवश्छन्दो वरिवश्छन्दः शम्भूश्छन्दः परिभूश्छन्दऽआच्छच्छन्दो मनश्छन्दो
व्यचश्छन्दः सिन्धुश्छन्दः समुद्रश्छन्दः सरिरं छन्दः ककुप्छन्दस्त्रिककुप्
छन्दः काव्यं छन्दोऽअङ्कुपं छन्दोऽक्षरपङ्क्तिश्छन्दः पदपङ्क्तिश्छन्दो
विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः क्षुरश्छन्दो भ्रजश्छन्दः ॥४॥
आच्छच्छन्दः प्रच्छच्छन्दः संयच्छन्दो वियच्छन्दो बृहच्छन्दो रथन्तरञ्छन्दो
निकायश्छन्दो विवधश्छन्दो गिरश्छन्दो भ्रजश्छन्दः सꣳस्तुप् छन्दोऽनुष्टुप्
छन्दऽएवश्छन्दो वरिवश्छन्दो वयश्छन्दो वयस्कृच्छन्दो विष्पर्द्धाश्छन्दो
विशालं छन्दश्छदिश्छन्दो दूरोहणं छन्दस्तन्द्रं छन्दोऽअङ्काङ्कं छन्दः॥५॥
रश्मिना सत्याय सत्यं जिन्व प्रेतिना धर्मणा धर्मं जिन्वान्वित्या दिवा दिवं
जिन्व सन्धिनान्तरिक्षेणान्तरिक्षं जिन्व प्रतिधिना पृथिव्या पृथिवीं जिन्व
विष्टम्भेन वृष्ट्या वृष्टिं जिन्व प्रवयाऽह्नाहर्जिन्वानुया रात्र्या रात्रीं
जिन्वोशिजा वसुभ्यो वसूञ्जिन्व प्रकेतेनादित्येभ्यऽआदित्याञ्जिन्व॥६॥
तन्तुना रायस्पोषेण रायस्पोषं जिन्व सꣳसर्पेण श्रुताय
श्रुतं जिन्वैडेनौषधीभिरोषधीर्जिन्वोत्तमेन तनूभिस्तनूर्जिन्व
वयोधसाधीतेनाधीतं जिन्वाभिजिता तेजसा तेजो जिन्व ॥७॥
प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदस्यनुपदे त्वा
सम्पदसि सम्पदे त्वा तेजोऽसि तेजसे त्वा ॥८॥
त्रिवृदसि त्रिवृते त्वा प्रवृदसि प्रवृते त्वा विवृदसि विवृते त्वा
सवृदसि सवृते त्वाक्रमोऽस्याक्रमाय त्वा संक्रमोऽसि संक्रमाय
त्वोत्क्रमोऽस्युत्क्रमाय त्वोत्क्रान्तिरस्युत्क्रान्त्यै त्वाधिपतिनोर्जोर्जं जिन्व॥९॥
[क]राज्ञ्यसि प्राची दिग्वसवस्ते देवाऽअधिपतयोऽग्निर्हेतीनां प्रतिधर्त्ता
त्रिवृत्त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयत्वाज्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु रथन्तरꣳ
साम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा [र]प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया
वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना
नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु ॥१०॥

[क]विराडसि दक्षिणा दिग्रुद्रास्ते देवाऽअधिपतयऽइन्द्रो हेतीनां प्रतिधर्त्ता पञ्चदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयतु प्रऽउगमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु बृहत्साम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा [र]प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु ॥११॥

[क]सम्राडसि प्रतीची दिगादित्यास्ते देवाऽअधिपतयो वरुणो हेतीनां प्रतिधर्त्ता सप्तदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयतु मरुत्वतीयमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु वैरूपꣳसाम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा [र]प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु ॥१२॥

[क]स्वराडस्युदीची दिङ् मरुतस्ते देवाऽअधिपतयः सोमो हेतीनां प्रतिधर्त्तैकविꣳशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयतु निष्केवल्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु वैराजꣳसाम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा [र]प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु ॥१३॥

[क]अधिपत्न्यसि बृहती दिग्विश्वे ते देवाऽअधिपतयो बृहस्पतिर्हेतीनां प्रतिधर्त्ता त्रिणवत्रयस्त्रिꣳशौ त्वा स्तोमौ पृथिव्याꣳश्रयतां वैश्वदेवाग्निमारुतेऽउक्थेऽअव्यथायै स्तभ्नीताꣳशाक्वररैवते सामनी [र]प्रतिष्ठित्याऽ अन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु ॥१४॥

अयं पुरो हरिकेशः सूर्यरश्मिस्तस्य रथगृत्सश्च रथौजाश्च सेनानीग्रामण्यौ। पुञ्जिकस्थला च क्रतुस्थला चाप्सरसौ दङ्क्ष्णवः पशवो हेतिः पौरुषेयो वधः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥१५॥

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य रथस्वनश्च रथेचित्रश्च सेनानीग्रामण्यौ। मेनका च सहजन्या चाप्सरसौ यातुधाना हेती रक्षाꣳसि प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥१६॥

अयं पश्चाद् विश्वव्यचास्तस्य रथप्रोतश्चासमरथश्च सेनानीग्रामण्यौ। प्रम्लोचन्ती चानुम्लोचन्ती चाप्सरसौ व्याघ्रा हेतिः सर्पाः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥१७॥

अयमुत्तरात् संयद्वसुस्तस्य तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च सेनानीग्रामण्यौ। विश्वाची च घृताची चाप्सरसावापो हेतिर्वातः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥१८॥

अयमुपर्यर्वाग्वसुस्तस्य सेनजिच्च सुषेणश्च सेनानीग्रामण्यौ। उर्वशी च पूर्वचित्तिश्चाप्सरसाववस्फूर्जन् हेतिर्विद्युत्प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥१९॥

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति॥२०॥

अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्धा कवी रयीणाम् ॥२१॥

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥२२॥

भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः । दिवि मूर्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम् ॥२३॥

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् । यह्वाऽइव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥२४॥

अवोचाम कवये मेध्याय वचो वन्दारु वृषभाय वृष्णे । गविष्ठिरो नमसा स्तोममग्नौ दिवीव रुक्ममुरुव्यञ्चमश्रेत् ॥२५॥

अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठोऽअध्वरेष्वीड्यः ।
यमप्नवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे ॥२६॥
जनस्य गोपाऽअजनिष्ट जागृविरग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे ।
घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा द्युमद्विभाति भरतेभ्यः शुचिः॥२७॥
त्वामग्नेऽअङ्गिरसो गुहा हितमन्वविन्दञ्छिश्रियाणं वनेवने ।
स जायसे मथ्यमानः सहो महत् त्वामाहुः सहसस्पुत्रमङ्गिरः ॥२८॥
सखायः सं वः सम्यञ्चमिषꣳस्तोमं चाग्नये ।
वर्षिष्ठाय क्षितीनामूर्जो नप्त्रे सहस्वते ॥२९॥
सꣳसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्यऽआ ।
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्याभर ॥३०॥
त्वां चित्रश्रवस्तम हवन्ते विक्षु जन्तवः ।
शोचिष्केशं पुरुप्रियाग्ने हव्याय वोढवे ॥३१॥
एना वोऽअग्निं नमसोर्जो नपातमाहुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिꣳस्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥३२॥
विश्वस्य दूतममृतं विश्वस्य दूतममृतम् ।
स योजतेऽअरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः ॥३३॥
स दुद्रवत् स्वाहुतः स दुद्रवत् स्वाहुतः ।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवꣳराधो जनानाम् ॥३४॥
अग्ने वाजस्य गोमतऽईशानः सहसो यहो ।
अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः ॥३५॥
सऽइधानो वसुष्कविरग्निरीडेन्यो गिरा ।
रेवदस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि ॥३६॥
क्षपो राजन्नुत त्मनाग्ने वस्तोरुतोषसः ।
स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ॥३७॥

भद्रो नोऽअग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रोऽअध्वरः।
भद्राऽउत प्रशस्तयः ॥३८॥
भद्राऽउत प्रशस्तयो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये ।
येना समत्सु सासहः ॥३९॥
येना समत्सु सासहोऽव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धताम् ।
वनेमा तेऽअभिष्टिभिः ॥४०॥
अग्निं तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः ।
अस्तमर्वन्तऽआशवोऽस्तं नित्यासो वाजिनऽइषꣳस्तोतृभ्यऽआ भर ॥४१॥
सोऽअग्निर्यो वसुर्गृणे सं यमायन्ति धेनवः ।
समर्वन्तो रघुद्रुवः सꣳसुजातासः सूरयऽइषꣳस्तोतृभ्यऽआ भर ॥४२॥
उभे सुश्चन्द्र सर्पिषो दर्वी श्रीणीषऽआसनि ।
उतो नऽउत्पुपूर्याऽउक्थेषु शवसस्पतऽइषꣳस्तोतृभ्यऽआ भर ॥४३॥
अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रꣳहृदिस्पृशम्।
ऋध्यामा तऽओहैः ॥४४॥
अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः ।
रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ ॥४५॥
एभिर्नोऽअर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वर्ण ज्योतिः।
अग्ने विश्वेभिः सुमनाऽअनीकैः ॥४६॥
अग्निꣳहोतारं मन्ये दास्वन्तं वसुꣳसूनुꣳसहसो जातवेदसं विप्रं न
जातवेदसम्। यऽऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा।
घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि शोचिषाजुह्वानस्य सर्पिषः ॥४७॥
अग्ने त्वं नोऽअन्तमऽउत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः ।
वसुरग्निर्वसुश्रवाऽअच्छा नक्षि द्युमत्तमꣳरयिन्दाः ।
तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥४८॥

येनऽऋषयस्तपसा सत्रमायन्निन्धानाऽअग्निꣳस्वराभरन्तः ।
तस्मिन्नहं निदधे नाकेऽअग्निं यमाहुर्मनव स्तीर्णबर्हिषम् ॥४९॥
तं पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यैः ।
नाकं गृभ्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठेऽअधि रोचने दिवः ॥५०॥
आ वाचो मध्यमरुहद् भुरण्युरयमग्निः सत्पतिश्चेकितानः ।
पृष्ठे पृथिव्या निहितो दविद्युतदधस्पदं कृणुतां ये पृतन्यवः ॥५१॥
अयमग्निर्वीरतमो वयोधाः सहस्रियो द्योततामप्रयुच्छन् ।
विभ्राजमानः सरिरस्य मध्यऽउप प्र याहि दिव्यानि धाम ॥५२॥
सम्प्रच्यवध्वमुप सम्प्रयाताग्ने पथो देवयानान् कृणुध्वम् ।
पुनः कृण्वाना पितरा युवानान्वाताꣳसीत् त्वयि तन्तुमेतम् ॥५३॥
उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयं च ।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥५४॥
येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम् ।
तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥५५॥
अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः ।
तं जानन्नग्नऽआ रोहाथा नो वर्धया रयिम् ॥५६॥
तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां
द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम
ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे।
शैशिरावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया
देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥५७॥
परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
सूर्यस्तेऽधिपतिस्तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥५८॥

लोकं पृण छिद्रं पृणाथो सीद ध्रुवा त्वम् ।
इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिरस्मिन् योनावसीषदन् ॥५९॥
ताऽअस्य सूददोहसः सोमꣳश्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वारोचने दिवः ॥६०॥
इन्द्रं विश्वाऽअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमꣳरथीनां वाजानाꣳसत्पतिं पतिम् ॥६१॥
प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ।
आदस्य वातोऽअनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति॥६२॥
आयोष्ट्वा सदने सादयाम्यवतश्छायायाꣳसमुद्रस्य हृदये ।
रश्मीवतीं भास्वतीमा या द्यां भास्या पृथिवीमोर्वन्तरिक्षम् ॥६३॥
परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं दिवं
यच्छ दिवं दृꣳह दिवं मा हिꣳसीः। विश्वस्मै प्राणायापानाय
व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय। सूर्यस्त्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या
छर्दिषा शन्तमेन तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ॥६४॥
सहस्रस्य प्रमासि सहस्रस्य प्रतिमासि सहस्रस्योन्मासि
साहस्रोऽसि सहस्राय त्वा ॥६५॥

इति पञ्चदशोऽध्यायः॥

अथ षोडशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—परमेष्ठी वा कुत्सः १-३। परमेष्ठी ४। बृहस्पतिः ५। प्रजापतिः ६-१४, ३४। कुत्सः १५-३३, ३५-३९। परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः ४०-६६॥

देवता—रुद्रः १-४, ६-१७, १९, २९। एकरुद्रः ५। रुद्राः १८, २०-२८, ३०-५५, ५७-६६। बहुरुद्राः ५६॥

छन्दः—आर्षीगायत्री १। स्वराडार्ष्यनुष्टुप् २। विराडार्ष्यनुष्टुप् ३, ५४, ६२। निचृदार्ष्यनुष्टुप् ४, ८, १२, १३, ५३, ५६-५८, ६०, ६१। भुरिगार्षीबृहती ५, ४७। निचृदार्षीपङ्क्तिः ६। विराडार्षीपङ्क्तिः ७। भुरिगार्ष्युष्णिक् ९, १४, ५५। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् १०, ६३। निचृदनुष्टुप् ११। स्वराडार्ष्युष्णिक् १४। निचृदार्षीजगती १५, १६। निचृदतिधृतिः १७, २१। निचृदष्टिः १८, २२। विराडतिधृतिः १९। अतिधृतिः २०। निचृदतिजगती २३। शक्वरी २४। भुरिक्शक्वरी २५। भुरिगतिजगती २६, २९। निचृच्छक्वरी २७। आर्षीजगती २८, ४८। विराडार्षीत्रिष्टुप् ३०। स्वराडार्षीपङ्क्तिः ३१, ३९। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् ३२, ३४-३६। आर्षीत्रिष्टुप् ३३, ४४, ५०। निचृदार्षीत्रिष्टुप् ३७, ४२, ४५। भुरिगार्षीपङ्क्तिः ३८। अतिशक्वरी ४०। स्वराडार्षीबृहती ४१। जगती ४३। स्वराट्प्रकृतिः ४६। आर्ष्यनुष्टुप् ४९, ५२, ५९। निचृदार्षीयवमध्यात्रिष्टुप् ५१। निचृद्धृतिः ६४। धृतिः ६५, ६६॥

स्वरः—षड्जः १, १७, १९-२१। गान्धारः २-४, ८, १०-१३, ४९, ५२-५४, ५६-६३। मध्यमः ५, १८, २२, ४१, ४७। पञ्चमः ६, ७, ३१, ३८-४०। ऋषभः ९, १४, ५५, ६४-६६। निषादः १५, १६, २३, २६, २८, २९, ४३, ४८। धैवतः २४, २५, २७, ३०, ३२-३७, ४२, ४४-४६, ५०, ५१॥

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ॥१॥
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥२॥
यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।
शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिꣳसीः पुरुषं जगत् ॥३॥
शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि ।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳसुमनाऽअसत् ॥४॥
अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहीꣳश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परा सुव ॥५॥

असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः ।
ये चैनꣳरुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳहेडऽईमहे ॥६॥
असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः ।
उतैनं गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७॥
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो येऽअस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नमः ॥८॥
प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम् ।
याश्च ते हस्तऽइषवः परा ता भगवो वप ॥९॥
विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ२॥ऽउत।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥१०॥
या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज ॥११॥
परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः ।
अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहि तम् ॥१२॥
अवतत्य धनुष्ट्वꣳसहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव॥१३॥
नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥१४॥
मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्भकं मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽउक्षितम्।
मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः॥१५॥
मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः।
मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वा हवामहे॥१६॥
नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशां च पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो
हरिकेशेभ्यः पशूनां पतये नमो नमः शष्पिञ्जराय त्विषीमते
पथीनां पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानां पतये नमः॥१७॥

नमो बभ्लुशाय व्याधिनेऽन्नानां पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगतां पतये नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणां पतये नमो नमः सूतायाहन्त्यै वनानां पतये नमः ॥१८॥

नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनां पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पतये नमो नमऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनां पतये नमः॥१९॥

नमः कृत्स्नायतया धावते सत्वनां पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिनऽआव्याधिनीनां पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानां पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानां पतये नमः॥२०॥

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघांꣳसद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तं चरद्भ्यो विकृन्तानां पतये नमः॥२१॥

नमऽउष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नमऽआयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमः ॥२२॥

नमो विसृजद्भ्यो विध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः शयानेभ्यऽआसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमः ॥२३॥

नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो नमऽआव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नमऽउगणाभ्यस्तृꣳहतीभ्यश्च वो नमः ॥२४॥

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥२५॥

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमो नमः क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्च वो नमः ॥२६॥

नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्म्मारेभ्यश्च वो नमो नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः ॥२७॥

नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च॥२८॥

नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च॥२९॥

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च ॥३०॥

नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नमऽऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ॥३१॥

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥३२॥

नमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमऽउर्वर्याय च खल्याय च ॥३३॥

नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च ॥३४॥

नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ॥३५॥

नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च ॥३६॥

नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः
कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ॥३७॥
नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्र्याय चातप्याय च नमो
मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च ॥३८॥
नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च
नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च ॥३९॥
नमः शङ्गवे च पशुपतये च नमऽउग्राय च भीमाय च
नमोऽग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च
नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ॥४०॥
नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥४१॥
नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च
नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च ॥४२॥
नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च नमः किꣳशिलाय च क्षयणाय च
नमः कपर्दिने च पुलस्तये च नमऽइरिण्याय च प्रपथ्याय च ॥४३॥
नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो
हृदय्याय च निवेष्प्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च ॥४४॥
नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमः पाꣳसव्याय च रजस्याय च
नमो लोप्याय चोलप्याय च नमऽऊर्व्याय च सूर्व्याय च ॥४५॥
नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च
नमऽआखिदते च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो
नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानाꣳहृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो
नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः ॥४६॥
द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्र नीललोहित ।
आसां प्रजानामेषां पशूनां मा भेर्मा रोङ् मो च नः किं चनाममत् ॥४७॥

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः ।
यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् ॥४८॥
या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी ।
शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ॥४९॥
परि नो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः ।
अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड ॥५०॥
मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव । परमे वृक्षऽआयुधं
निधाय कृत्तिं वसानऽआचर पिनाकम्बिभ्रदा गहि ॥५१॥
विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः ।
यास्ते सहस्रꣳहेतयोऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः ॥५२॥
सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ।
तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ॥५३॥
असंख्याता सहस्राणि ये रुद्राऽअधि भूम्याम् ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५४॥
अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवाऽअधि ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५५॥
नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवꣳरुद्राऽउपश्रिताः ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५६॥
नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वाऽअधः क्षमाचराः ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५७॥
ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५८॥
ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥५९॥

ये पथां पथिरक्षयऽऐलबृदाऽआयुर्युधः ।
तेषांᳬसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥६०॥
ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ।
तेषांᳬसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥६१॥
येऽन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ।
तेषांᳬसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥६२॥
यऽएतावन्तश्च भूयांᳬसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे।
तेषांᳬसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥६३॥

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः ।
तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः।
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥६४॥
नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो येऽन्तरिक्षे येषां वातऽइषवः ।
तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः।
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥६५॥
नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवः ।
तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः।
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥६६॥

इति षोडशोऽध्यायः॥

अथ सप्तदशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—मेधातिथिः १-७, ९। वसुयुः ८। भारद्वाजः १०, १६। लोपामुद्रा ११-१५। भुवनपुत्रो विश्वकर्मा १७-३२। अप्रतिरथः ३३-५८, ६०। विश्वावसुः ५९। मधुच्छन्दाः सुतजेता ६१। विधृतिः ६२-६९। कुत्सः ७०-७३। कण्वः ७४। गृत्समदः ७५, ८८। वसिष्ठः ७६, ७८। परमेष्ठी ७७। सप्तर्षयः ७९-८७। वामदेवः ८९-९९॥

देवता—मरुतः १, ४७, ८०-८४, ८६। अग्निः २-१२, १५, १६, ५०, ५२, ५३, ५५, ५६, ५८, ६५-७३, ७५-७७, ७९, ८७-९०। प्राणः १३, १४। विश्वकर्मा १७-३२, ७८। इन्द्रः ३३-४४, ५१, ६१, ६३। इषुः ४५। योद्धारः ४६। इन्द्रबृहस्पत्यादयः ४८। सोमवरुणदेवाः ४९। दिक् ५४। यज्ञः ५७, ६२। आदित्याः ५९, ६०। इन्द्राग्नी ६४। सविता ७४। चातुर्मास्या मरुतः ८५। यज्ञपुरुषः ९१-९९॥

छन्दः—भुरिगतिशक्वरी १। निचृद्विकृतिः २। विराडार्षीपङ्क्तिः ३, १५, ५६। भुरिगार्षीगायत्री ४, ५। आर्षीत्रिष्टुप् ६, २१, २५, २९, ३०, ३३, ३५-३७, ४१, ४९, ५८, ५९, ७०, ७३, ७५, ८७, ९२, ९५, ९८। आर्षीबृहती ७। आर्षीगायत्री ८, ७७, ८१, ८२। निचृदार्षीगायत्री ९, १६। निचृदार्षीजगती १०, १३, ८४। भुरिगार्षीबृहती ११। निचृद्गायत्री १२। आर्षीजगती १४, ७९। निचृदार्षीत्रिष्टुप् १७, २२, २४, २७, ३९, ४३, ४७, ६०, ६६, ७४, ८८, ८९, ९३, ९४, ९६, ९७। भुरिगार्षीपङ्क्तिः १८, ३१, ५५, ६९, ७१। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् १९, २३, २६, २८, ३८। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् २०, ३४, ५४, ९९। स्वराडार्षीपङ्क्तिः ३२। विराडार्षीत्रिष्टुप् ४०, ४२, ४४, ९०, ९१। आर्ष्यनुष्टुप् ४५, ५१, ६४। विराडार्ष्यनुष्टुप् ४६, ५०, ५३, ६२, ६३, ६५। पङ्क्तिः ४८। निचृदार्ष्यनुष्टुप् ५२, ६१, ६८। निचृदार्षीबृहती ५७। पिपीलिकामध्याबृहती ६७। निचृदार्षीपङ्क्तिः ७२। आर्ष्युष्णिक् ७६, ८०। विराडतिजगती ७८। भुरिगार्ष्युष्णिक् ८३। स्वराडार्षीगायत्री ८५। निचृच्छक्वरी ८६॥

स्वरः—पञ्चमः १, ३, १५, १८, ३१, ३२, ४८, ५५, ५६, ६९, ७१, ७२। मध्यमः २, ७, ११, ५७, ६७। षड्जः ४, ५, ८, ९, १२, १६, ७७, ८१, ८२, ८५। धैवतः ६, १७, १९-३०, ३३-४४, ४७, ४९, ५४, ५८-६०, ६६, ७०, ७३-७५, ८६-९९। निषादः १०, १३, १४, ७८, ७९, ८४। गान्धारः ४५, ४६, ५०-५३, ६१-६५, ६८। ऋषभः ७६, ८०, ८३॥

अश्मन्नूर्जं पर्वते शिश्रियाणामद्भ्यऽओषधीभ्यो वनस्पतिभ्योऽअधि
सम्भृतं पयः। तां नऽइषमूर्जं धत्त मरुतः सᳬरराणाऽअश्मँस्ते क्षुन्
मयि तऽऊर्ग्यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥१॥

इमा मेऽअग्नऽइष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं
च शतं च सहस्रं च सहस्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च
नियुतं च प्रयुतं चार्बुदं च न्यर्बुदं च समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च
परार्द्धश्चैता मेऽअग्नऽइष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रामुष्मिँल्लोके ॥२॥
ऋतव स्थऽऋतावृधऽऋतुष्ठा स्थऽऋतावृधः ।
घृतश्च्युतो मधुश्च्युतो विराजो नाम कामदुघाऽअक्षीयमाणाः ॥३॥
समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥४॥
हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥५॥
उप ज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा । अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि
ताभिरागहि सेमं नो यज्ञं पावकवर्णꣳशिवं कृधि ॥६॥
अपामिदं न्ययनꣳसमुद्रस्य निवेशनम् ।
अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥७॥
अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया । आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥८॥
स नः पावक दीदिवोऽग्ने देवाँ२॥ऽइहावह । उप यज्ञꣳहविश्च नः ॥९॥
पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुचऽउषसो न भानुना ।
तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रणऽआ यो घृणे न ततृषाणोऽअजरः ॥१०॥
नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे ।
अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥११॥
नृषदे वेडप्सुषदे वेड् बर्हिषदे वेड् वनसदे वेट् स्वर्विदे वेट् ॥१२॥
ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियानाꣳसंवत्सरीणमुप भागमासते ।
अहुतादो हविषो यज्ञेऽअस्मिन्त्स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥१३॥
ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुरऽएतारोऽअस्य ।
येभ्यो नऽऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्याऽअधि स्नुषु ॥१४॥
प्राणदाऽअपानदा व्यानदा वर्चोदा वरिवोदाः ।
अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥१५॥

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वं न्यत्रिणम् । अग्निर्नो वनते रयिम् ॥१६॥
यऽइमा विश्वा भुवनानि जुह्वदृषिर्होता न्यसीदत्पिता नः ।
सऽआशिषा द्रविणमिच्छमानः प्रथमच्छदवराँ२॥ऽआविवेश ॥१७॥
किꣳस्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित्कथासीत् ।
यतो भूमिं जनयन्विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षाः ॥१८॥
विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवऽएकः ॥१९॥
किꣳस्विद्वनं कऽउ स वृक्षऽआस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन् ॥२०॥
या ते धामानि परमाणि यावमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा ।
शिक्षा सखिभ्यो हविषि स्वधावः स्वयं यजस्व तन्वं वृधानः ॥२१॥
विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्वयं यजस्व पृथिवीमुत द्याम् ।
मुह्यन्त्वन्येऽअभितः सपत्नाऽइहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ॥२२॥
वाचस्पतिं विश्वकर्माणमूतये मनोजुवं वाजेऽअद्या हुवेम ।
स नो विश्वानि हवनानि जोषद्विश्वशम्भूरवसे साधुकर्मा ॥२३॥
विश्वकर्मन् हविषा वर्द्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम् ।
तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत् ॥२४॥
चक्षुषः पिता मनसा हि धीरो घृतमेनेऽअजनन्नम्नमाने ।
यदेदन्ताऽअददृहन्त पूर्वऽआदिद् द्यावापृथिवीऽअप्रथेताम् ॥२५॥
विश्वकर्म्मा विमनाऽआद्विहाया धाता विधाता परमोत सन्दृक् ।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्रा सप्तऽऋषीन् परऽएकमाहुः ॥२६॥
यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यो देवानां नामधाऽएकऽएव तꣳसम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ॥२७॥
तऽआयजन्त द्रविणꣳसमस्माऽऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना ।
असूर्त्ते सूर्त्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि ॥२८॥

परो दिवा परऽएना पृथिव्या परो देवेभिरसुरैर्यदस्ति ।
कꣳस्विद् गर्भं प्रथमं दध्रऽआपो यत्र देवाः समपश्यन्त पूर्वे ॥२९॥
तमिद् गर्भं प्रथमं दध्रऽआपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे ।
अजस्य नाभावध्येकमर्पितं यस्मिन्विश्वानि भुवनानि तस्थुः ॥३०॥
न तं विदाथ यऽइमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव ।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृपऽउक्थशासश्चरन्ति ॥३१॥
विश्वकर्मा ह्यजनिष्ट देवऽआदिद् गन्धर्वोऽअभवद् द्वितीयः ।
तृतीयः पिता जनितौषधीनामपां गर्भं व्यदधात्पुरुत्रा ॥३२॥
आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ।
संक्रन्दनोऽनिमिषऽएकवीरः शतꣳसेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः ॥३३॥
संक्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना ।
तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा ॥३४॥
सऽइषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी सꣳस्रष्टा स युधऽइन्द्रो गणेन ।
सꣳसृष्टजित् सोमपा बाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥३५॥
बृहस्पते परिदीया रथेन रक्षोहामित्राँ२॥ऽअपबाधमानः ।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम् ॥३६॥
बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमानऽउग्रः ।
अभिवीरोऽअभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमातिष्ठ गोवित् ॥३७॥
गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा ।
इमꣳसजाताऽअनु वीरयध्वमिन्द्रꣳसखायोऽअनु सꣳरभध्वम् ॥३८॥
अभि गोत्राणि सहसा गाहमानोऽदयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः ।
दुश्च्यवनः पृतनाषाडयुध्योऽस्माकꣳसेना अवतु प्र युत्सु ॥३९॥
इन्द्रऽआसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुरऽएतु सोमः ।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥४०॥

इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञऽआदित्यानां मरुताꣳशर्द्धऽउग्रम् ।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात् ॥४१॥
उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्वनां मामकानां मनाꣳसि ।
उद् वृत्रहन्वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥४२॥
अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं याऽइषवस्ता जयन्तु ।
अस्माकं वीराऽउत्तरे भवन्त्वस्माँ२॥ऽउ देवाऽअवता हवेषु ॥४३॥
अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥४४॥
अवसृष्टा परापत शरव्ये ब्रह्मसꣳशिते ।
गच्छामित्रान् प्रपद्यस्व मामीषां कञ्चनोच्छिषः ॥४५॥
प्रेता जयता नरऽइन्द्रो वः शर्म यच्छतु ।
उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ ॥४६॥
असौ या सेना मरुतः परेषामभ्यैति नऽओजसा स्पर्द्धमाना ।
तां गूहत तमसापव्रतेन यथामीऽअन्योऽअन्यन्न जानन् ॥४७॥
यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखाऽइव ।
तन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥४८॥
मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥४९॥
उदेनमुत्तरां नयाग्ने घृतेनाहुत ।
रायस्पोषेण सꣳसृज प्रजया च बहुं कृधि ॥५०॥
इन्द्रेमं प्रतरां नय सजातानामसद्वशी ।
समेनं वर्चसा सृज देवानां भागदाऽअसत् ॥५१॥
यस्य कुर्मो गृहे हविस्तमग्ने वर्द्धया त्वम् ।
तस्मै देवाऽअधि ब्रुवन्नयं च ब्रह्मणस्पतिः ॥५२॥

उद् त्वा विश्वे देवाऽअग्ने भरन्तु चित्तिभिः ।
स नो भव शिवस्त्वꣳसुप्रतीको विभावसुः ॥५३॥
पञ्च दिशो दैवीर्यज्ञमवन्तु देवीरपामतिं दुर्मतिं बाधमानाः ।
रायस्पोषे यज्ञपतिमाभजन्ती रायस्पोषेऽअधि यज्ञोऽअस्थात् ॥५४॥
समिद्धेऽअग्नावधि मामहानऽउक्थपत्रऽईड्यो गृभीतः ।
तप्तं घर्मं परिगृह्यायजन्तोर्जा यद्यज्ञमयजन्त देवाः ॥५५॥
दैव्याय धर्त्रे जोष्ट्रे देवश्रीः श्रीमनाः शतपयाः ।
परिगृह्य देवा यज्ञमायन् देवा देवेभ्योऽअध्वर्यन्तोऽअस्थुः ॥५६॥
वीतꣳहविः शमितꣳशमिता यजध्यै तुरीयो यज्ञो यत्र हव्यमेति ।
ततो वाकाऽआशिषो नो जुषन्ताम् ॥५७॥
सूर्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविता ज्योतिरुदयाँ२॥ऽअजस्रम् ।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः ॥५८॥
विमानऽएष दिवो मध्यऽआस्तऽआपप्रिवान्रोदसीऽअन्तरिक्षम् ।
स विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरन्तरा पूर्वमपरं च केतुम् ॥५९॥
उक्षा समुद्रोऽअरुणः सुपर्णः पूर्वस्य योनिं पितुराविवेश ।
मध्ये दिवो निहितः पृश्निरश्मा विचक्रमे रजसस्पात्यन्तौ ॥६०॥
इन्द्रं विश्वाऽअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमꣳरथीनां वाजानाꣳसत्पतिं पतिम् ॥६१॥
देवहूर्यज्ञऽआ च वक्षत्सुम्नहूर्यज्ञऽआ च वक्षत् ।
यक्षदग्निर्देवो देवाँ२॥ऽआ च वक्षत् ॥६२॥
वाजस्य मा प्रसवऽउद्ग्राभेणोदग्रभीत् ।
अधा सपत्नानिन्द्रो मे निग्राभेणाधराँ२॥ऽअकः ॥६३॥
उद्ग्राभं च निग्राभं च ब्रह्म देवाऽअवीवृधन् ।
अधा सपत्नानिन्द्राग्नी मे विषूचीनान्व्यस्यताम् ॥६४॥

क्रमध्वमग्निना नाकमुख्यꣳहस्तेषु बिभ्रतः ।
दिवस्पृष्ठꣳस्वर्गत्वा मिश्रा देवेभिराध्वम् ॥६५॥
प्राचीमनु प्रदिशं प्रेहि विद्वानग्नेरग्ने पुरोऽअग्निर्भवेह ।
विश्वाऽआशा दीद्यानो विभाह्यूर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥६६॥
पृथिव्याऽअहमुदन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम् ।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योतिरगामहम् ॥६७॥
स्वर्यन्तो नापेक्षन्तऽआ द्याꣳरोहन्ति रोदसी ।
यज्ञं ये विश्वतोधारꣳसुविद्वाꣳसो वितेनिरे ॥६८॥
अग्ने प्रेहि प्रथमो देवयतां चक्षुर्देवानामुत मर्त्यानाम् ।
इयक्षमाणा भृगुभिः सजोषाः स्वर्यन्तु यजमानाः स्वस्ति ॥६९॥
नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकꣳसमीची ।
द्यावाक्षामा रुक्मोऽअन्तर्विभाति देवाऽअग्निं धारयन् द्रविणोदाः ॥७०॥
अग्ने सहस्राक्ष शतमूर्द्धञ्छतं ते प्राणाः सहस्रं व्यानाः ।
त्वꣳसाहस्रस्य रायऽईशिषे तस्मै ते विधेम वाजाय स्वाहा ॥७१॥
सुपर्णोऽसि गरुत्मान् पृष्ठे पृथिव्याः सीद ।
भासान्तरिक्षमापृण ज्योतिषा दिवमुत्तभान तेजसा दिशऽउद्दृꣳह ॥७२॥
आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तादग्ने स्वं योनिमासीद साधुया ।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॥७३॥
ताꣳसवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम् ।
यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनाꣳसहस्रधारां पयसा महीं गाम् ॥७४॥
विधेम ते परमे जन्मन्नग्ने विधेम स्तोमैरवरे सधस्थे ।
यस्माद्योनेरुदारिथा यजे तं प्र त्वे हवीꣳषि जुहुरे समिद्धे ॥७५॥
प्रेद्धोऽअग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ ।
त्वाꣳशश्वन्तऽउपयन्ति वाजाः ॥७६॥

अग्ने तमद्याश्वन्न स्तोमैः क्रतुन्न भद्रꣳहृदिस्पृशम्। ऋध्यामा तऽओहैः ॥७७॥
चित्तिं जुहोमि मनसा घृतेन यथा देवाऽइहागमन्वीतिहोत्राऽऋतावृधः।
पत्ये विश्वस्य भूमनो जुहोमि विश्वकर्मणे विश्वाहादाभ्यꣳहविः ॥७८॥
सप्त तेऽअग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि।
सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥७९॥
शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्माँश्च ।
शुक्रश्चऽऋतपाश्चात्यꣳहाः ॥८०॥
ईदृङ् चान्यादृङ् च सदृङ् च प्रतिसदृङ् च ।
मितश्च सम्मितश्च सभराः ॥८१॥
ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च। धर्त्ता च विधर्त्ता च विधारयः ॥८२॥
ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च ।
अन्तिमित्रश्च दूरेऽअमित्रश्च गणः ॥८३॥
ईदृक्षासऽएतादृक्षासऽऊ षु णः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षासऽएतन
मितासश्च सम्मितासो नोऽअद्य सभरसो मरुतो यज्ञेऽअस्मिन् ॥८४॥
स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च ।
क्रीडी च शाकी चोज्जेषी ॥८५॥
इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन्यथेन्द्रं दैवीर्विशो
मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन्। एवमिमं यजमानं दैवीश्च
विशो मानुषीश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ॥८६॥
इमꣳस्तनमूर्जस्वन्तं धयापां प्रपीनमग्ने सरिरस्य मध्ये ।
उत्सं जुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳसदनमाविशस्व ॥८७॥
घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम ।
अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ॥८८॥
समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ२॥ऽउदारदुपाꣳशुना सममृतत्वमानट् ।
घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥८९॥

वयं नाम प्रब्रवामा घृतस्यास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः ।
उप ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुःशृङ्गोऽवमीद् गौरऽएतत् ॥९०॥
चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ२॥ऽआविवेश ॥९१॥
त्रिधा हितं पणिभिर्गुह्यमानं गवि देवासो घृतमन्वविन्दन् ।
इन्द्रऽएकꣳसूर्यऽएकञ्जजान वेनादेकꣳस्वधया निष्टतक्षुः ॥९२॥
एताऽअर्षन्ति हृद्यात्समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे ।
घृतस्य धाराऽअभिचाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्यऽआसाम् ॥९३॥
सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेनाऽअन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः।
एतेऽअर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगाऽइव क्षिपणोरीषमाणाः ॥९४॥
सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ।
घृतस्य धाराऽअरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥९५॥
अभिप्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासोऽअग्निम्।
घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥९६॥
कन्याऽइव वहतुमेतवाऽउऽअञ्ज्यञ्जानाऽअभिचाकशीमि ।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धाराऽअभि तत्पवन्ते ॥९७॥
अभ्यर्षत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ।
इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥९८॥
धामन्ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि ।
अपामनीके समिथे यऽआभृतस्तमश्याम मधुमन्तं तऽऊर्मिम् ॥९९॥

इति सप्तदशोऽध्यायः॥

अथाष्टादशोऽध्यायः

—:o:—

ऋषिः—देवाः १-४४। शुनःशेपः ४५-५३। गालवः ५४-५७, ६१। विश्वकर्मा ५८-६०, ६४, ६५। देवश्रवदेववातौ ६२, ६६, ६७। विश्वामित्रः ६३, ७२। इन्द्रः ६८। इन्द्रविश्वामित्रौ ६९। शासः ७०। जयः ७१। कुत्सः ७३। भरद्वाजः ७४। उत्कीलः ७५, ७६। उशनाः ७७॥

देवता—अग्निः १, ४६, ५१, ५२, ५७, ५८, ६६, ६७, ७२-७५। प्रजापतिः २-७, ४४, ४५, ५९-६१। आत्मा ८-१०। श्रीमदात्मा ११। धान्यदात्मा १२। रत्नवान्धनवानात्मा १३। अग्न्यादियुक्तात्मा १४। धनादियुक्तात्मा १५। अग्न्यादिविद्याविदात्मा १६। मित्रैश्वर्यसहितात्मा १७। राजैश्वर्यादियुक्तात्मा १८। पदार्थविदात्मा १९। यज्ञानुष्ठानात्मा २०, २९। यज्ञाङ्गवानात्मा २१। यज्ञवानात्मा २२। कालविद्याविदात्मा २३। विषमाङ्कगणितविद्याविदात्मा २४। समाङ्कगणितविद्याविदात्मा २५। पशुविद्याविदात्मा २६। पशुपालनविद्याविदात्मा २७। संग्रामादिविदात्मा २८। राज्यवानात्मा ३०। विश्वेदेवाः ३१, ७६, ७७। अन्नवान् विद्वान् ३२। अन्नपतिः ३३, ३४। रसविद्याविद्विद्वान् ३५, ३६। सम्राड्राजा ३७। ऋतुविद्याविद्विद्वान् ३८। सूर्यः ३९, ५०। चन्द्रमाः ४०। वातः ४१। यज्ञः ४२, ५६, ६३-६५। विश्वकर्मा ४३। बृहस्पतिः ४७-४९। इन्दुः ५३-५५। इन्द्रः ६८-७१। विश्वकर्माग्निर्वा ६२॥

छन्दः—शक्वरी १, ९। भुरिगतिजगती २। भुरिक्शक्वरी ३, ११, १८, २२। निचृदत्यष्टिः ४, १९। स्वराट्शक्वरी ५, ८। भुरिगतिशक्वरी ६, १२, १३। भुरिगतिजगती ७। निचृच्छक्वरी १०। भुरिगष्टिः १४। निचृदार्षीपङ्क्तिः १५। निचृदतिशक्वरी १६। स्वराट्शक्वरी १७। स्वराडतिधृतिः २०। विराड्धृतिः २१। पङ्क्तिः २३। संकृतिः[क] विराट्संकृतिः[र] २४। भुरिक्पङ्क्तिः[क], आकृतिः[र] २५। ब्राह्मीबृहती २६। भुरिगार्षीपङ्क्तिः २७, ४४। भुरिगाकृतिः[क], आर्चीबृहती[र] २८। स्वराड्विकृतिः[क], ब्राह्म्युष्णिक्[र] २९। स्वराड्जगती ३०। निचृदार्षीत्रिष्टुप् ३१, ४९, ५९, ६०। निचृदार्ष्यनुष्टुप् ३२, ६२। त्रिष्टुप् ३३, ३४। विराडार्ष्यनुष्टुप् ३५। आर्ष्यनुष्टुप् ३६, ४७। आर्षीपङ्क्तिः ३७, ५३। विराडार्षीत्रिष्टुप् ३८, ४१, ४२। भुरिगार्षीत्रिष्टुप् ३९। निचृदार्षीजगती ४०, ५८। विराडार्षीजगती ४३, ५२। अष्टिः ४५। भुरिगार्ष्यनुष्टुप् ४६, ४८। भुरिगार्ष्युष्णिक् ५०, ५४। स्वराडार्षीत्रिष्टुप् ५१। आर्षीजगती ५५, ६७। आर्ष्युष्णिक् ५६। निचृदार्षीगायत्री ५७। आर्षीत्रिष्टुप् ६१, ६९, ७१, ७३, ७५। निचृदनुष्टुप् ६३, ६४, ७०, ७६। विराडनुष्टुप् ६५। निचृत्त्रिष्टुप् ६६, ७४। निचृद्गायत्री ६८, ७७। आर्षीगायत्री ७२॥

स्वरः—धैवतः १, ३, ५, ८-११, १७, १८, २२, ३१, ३३, ३४, ३८, ३९, ४१, ४२, ४९, ५१, ५९-६१, ६६, ६९, ७१, ७३-७५। निषादः २, ७, ३०, ४०, ४३, ५२, ५५, ५८, ६७। गान्धारः ४, १९, २४, ३२, ३५, ३६, ४६-४८, ६२-६५, ७०,

७६। पञ्चमः ६, १२, १३, १५, १६, २३, २५, २७, ३७, ४४, ५३। मध्यमः १४, २६, ४५। षड्जः २०, ५७, ६८, ७२, ७७। ऋषभः २१, ५०, ५४, ५६। पञ्चमः[क], मध्यमः[र] २८। मध्यमः[क], ऋषभः[र] २९॥

वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च
मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च
मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१॥
प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च
मऽआधीतं च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च
मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२॥
ओजश्च मे सहश्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च
मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूᳪषि च
मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥३॥
ज्यैष्ठ्यं च मऽआधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मेऽमश्च
मेऽम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे
प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च
मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥४॥
सत्यं च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनं च मे विश्वं च
मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातं च मे जनिष्यमाणं
च मे सूक्तं च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥५॥
ऋतं च मेऽमृतं च मेऽयक्ष्मं च मेऽनामयच्च मे जीवातुश्च
मे दीर्घायुत्वं च मेऽनमित्रं च मेऽभयं च मे सुखं च मे शयनं
च मे सूषाश्च मे सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥६॥
यन्ता च मे धर्ता च मे क्षेमश्च मे धृतिश्च मे विश्वं च
मे महश्च मे संविच्च मे ज्ञात्रं च मे सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरं
च मे लयश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥७॥

शं च मे मयश्च मे प्रियं च मेऽनुकामश्च मे कामश्च
मे सौमनसश्च मे भगश्च मे द्रविणं च मे भद्रं च
मे श्रेयश्च मे वसीयश्च मे यशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥८॥
ऊर्क् च मे सूनृता च मे पयश्च मे रसश्च मे घृतं च
मे मधु च मे सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे कृषिश्च मे वृष्टिश्च
मे जैत्रं च मऽऔद्भिद्यं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥९॥
रयिश्च मे रायश्च मे पुष्टं च मे पुष्टिश्च मे विभु च
मे प्रभु च मे पूर्णं च मे पूर्णतरं च मे कुयवं च मेऽक्षितं च
मेऽन्नं च मेऽक्षुच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१०॥
वित्तं च मे वेद्यं च मे भूतं च मे भविष्यच्च मे सुगं च
मे सुपथ्यं च मऽऋद्धंऽच मऽऋद्धिश्च मे क्लृप्तं च
मे क्लृप्तिश्च मे मतिश्च मे सुमतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥११॥
व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च
मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च
मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१२॥
अश्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च
मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यं च मेऽयश्च मे श्यामं च
मे लोहञ्च मे सीसं च मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१३॥
अग्निश्च मऽआपश्च मे वीरुधश्च मऽओषधयश्च मे कृष्टपच्याश्च
मेऽकृष्टपच्याश्च मे ग्राम्याश्च मे पशवऽआरण्याश्च मे वित्तञ्च
मे वित्तिश्च मे भूतञ्च मे भूतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१४॥
वसु च मे वसतिश्च मे कर्म च मे शक्तिश्च मेऽर्थश्च
मऽएमश्च मऽइत्या च मे गतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१५॥
अग्निश्च मऽइन्द्रश्च मे सोमश्च मऽइन्द्रश्च मे सविता च
मऽइन्द्रश्च मे सरस्वती च मऽइन्द्रश्च मे पूषा च मऽइन्द्रश्च
मे बृहस्पतिश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१६॥

मित्रश्च मऽइन्द्रश्च मे वरुणश्च मऽइन्द्रश्च मे धाता च
मऽइन्द्रश्च मे त्वष्टा च मऽइन्द्रश्च मे मरुतश्च मऽइन्द्रश्च
मे विश्वे च मे देवाऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१७॥
पृथिवी च मऽइन्द्रश्च मेऽन्तरिक्षं च मऽइन्द्रश्च मे द्यौश्च
मऽइन्द्रश्च मे समाश्च मऽइन्द्रश्च मे नक्षत्राणि च मऽइन्द्रश्च
मे दिशश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१८॥
अꣳशुश्च मे रश्मिश्च मेऽदाभ्यश्च मेऽधिपतिश्च मऽ उपाꣳ
शुश्च मेऽन्तर्यामश्च मऽऐन्द्रवायवश्च मे मैत्रावरुणश्च
मऽआश्विनश्च मे प्रतिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी
च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१९॥
आग्रयणश्च मे वैश्वदेवश्च मे ध्रुवश्च मे वैश्वानरश्च
मऽऐन्द्राग्नश्च मे महावैश्वदेवश्च मे मरुत्वतीयाश्च मे
निष्केवल्यश्च मे सावित्रश्च मे सारस्वतश्च मे पात्नीवतश्च
मे हारियोजनश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२०॥
स्रुचश्च मे चमसाश्च मे वायव्यानि च मे द्रोणकलशश्च
मे ग्रावाणश्च मेऽधिषवणे च मे पूतभृच्च मऽआधवनीयश्च
मे वेदिश्च मे बर्हिश्च मेऽवभृथश्च मे स्वगाकारश्च
मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२१॥
अग्निश्च मे घर्मश्च मेऽर्कश्च मे सूर्यश्च मे प्राणश्च
मेऽश्वमेधश्च मे पृथिवी च मेऽदितिश्च मे दितिश्च
मे द्यौश्च मेऽङ्गुलयः शक्वरयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२२॥
व्रतं च मऽऋतवश्च मे तपश्च मे संवत्सरश्च मेऽहोरात्रेऽऊर्वष्ठीवे
बृहद्रथन्तरे च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२३॥

[क] एका च मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च
मे सप्त च मे सप्त च मे नव च मे नव च मऽएकादश च
मऽएकादश च मे त्रयोदश च मे त्रयोदश च मे पञ्चदश च
मे पञ्चदश च मे सप्तदश च मे सप्तदश च मे नवदश च
मे नवदश च मऽ [र] एकविꣳशतिश्च मऽएकविꣳशतिश्च
मे त्रयोविꣳशतिश्च मे त्रयोविꣳशतिश्च मे पञ्चविꣳशतिश्च
मे पञ्चविꣳशतिश्च मे सप्तविꣳशतिश्च मे सप्तविꣳशतिश्च
मे नवविꣳशतिश्च मे नवविꣳशतिश्च मऽएकत्रिꣳशच्च
मऽएकत्रिꣳशच्च मे त्रयस्त्रिꣳशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२४॥
[क] चतस्रश्च मेऽष्टौ च मेऽष्टौ च मे द्वादश च मे द्वादश च
मे षोडश च मे षोडश च मे विꣳशतिश्च मे विꣳशतिश्च मे
[र] चतुर्विꣳशतिश्च मे चतुर्विꣳशतिश्च मेऽष्टाविꣳशतिश्च मेऽष्टाविꣳ
शतिश्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳ
शच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च
मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च मेऽष्टाचत्वारिꣳशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२५॥
त्र्यविश्च मे त्र्यवी च मे दित्यवाट् च मे दित्यौही च मे
पञ्चाविश्च मे पञ्चावी च मे त्रिवत्सश्च मे त्रिवत्सा च मे
तुर्यवाट् च मे तुर्यौही च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२६॥
पष्ठवाट् च मे पष्ठौही च मऽउक्षा च मे वशा च मऽऋषभश्च
मे वेहच्च मेऽनड्वाँश्च मे धेनुश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२७॥
[क] वाजाय स्वाहा प्रसवाय स्वाहापिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा वसवे
स्वाहाहर्पतये स्वाहाह्ने मुग्धाय स्वाहा मुग्धाय वैनꣳशिनाय स्वाहा
विनꣳशिन आन्त्यायनाय स्वाहान्त्याय भौवनाय स्वाहा भुवनस्य
पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा। [र] इयं ते राण्मित्राय
यन्तासि यमनऽऊर्जे त्वा वृष्ट्यै त्वा प्रजानां त्वाधिपत्याय ॥२८॥

[क] आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳ
श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा
यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताꣳ
स्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् ।
[र] स्तोमश्च यजुश्चऽऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च ।
स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम प्रजापतेः प्रजाऽअभूम वेट् स्वाहा ॥२९॥
वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे। यस्यामिदं
विश्वं भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत् ॥३०॥
विश्वेऽअद्य मरुतो विश्वऽऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः ।
विश्वे नो देवाऽअवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजोऽअस्मे ॥३१॥
वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः ।
वाजो नो विश्वैर्देवैर्धनसाताविहावतु ॥३२॥
वाजो नोऽअद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवाँ२॥ऽऋतुभिः कल्पयाति ।
वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वाऽआशा वाजपतिर्जयेयम् ॥३३॥
वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्द्धयाति ।
वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वाऽआशा वाजपतिर्भवेयम् ॥३४॥
सं मा सृजामि पयसा पृथिव्याः सं मा सृजाम्यद्भिरोषधीभिः ।
सोऽहं वाजꣳसनेयमग्ने ॥३५॥
पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः ।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥३६॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥३७॥
ऋताषाडृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥३८॥
सꣳहितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरसऽआयुवो नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥३९॥

सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥४०॥
इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वस्तस्यापोऽअप्सरसऽऊर्जो नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥४१॥
भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणाऽअप्सरस स्तावा नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥४२॥
प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वस्तस्यऽऋक्सामान्यप्सरसऽएष्टयो नाम ।
स नऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥४३॥
स नो भुवनस्य पते प्रजापते यस्य तऽउपरि गृहा यस्य वेह ।
अस्मै ब्रह्मणेऽस्मै क्षत्राय महि शर्म यच्छ स्वाहा ॥४४॥
समुद्रोऽसि नभस्वानार्द्रदानुः शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा
मारुतोऽसि मरुतां गणः शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा-
वस्यूरसि दुवस्वाञ्छम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा ॥४५॥
यास्तेऽअग्ने सूर्ये रुचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः ।
ताभिर्नोऽअद्य सर्वाभी रुचे जनाय नस्कृधि ॥४६॥
या वो देवाः सूर्ये रुचो गोष्वश्वेषु या रुचः ।
इन्द्राग्नी ताभिः सर्वाभी रुचं नो धत्त बृहस्पते ॥४७॥
रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳराजसु नस्कृधि ।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥४८॥
तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ।
अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा नऽआयुः प्रमोषीः ॥४९॥
स्वर्ण घर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्ण शुक्रः स्वाहा
स्वर्ण ज्योतिः स्वाहा स्वर्ण सूर्यः स्वाहा ॥५०॥
अग्निं युनज्मि शवसा घृतेन दिव्यꣳसुपर्णं वयसा बृहन्तम् ।
तेन वयं गमेम ब्रध्नस्य विष्टपꣳस्वो रुहाणाऽअधि नाकमुत्तमम् ॥५१॥

इमौ ते पक्षावजरौ पतत्रिणौ याभ्याꣳरक्षाꣳस्यपहꣳस्यग्ने ।
ताभ्यां पतेम सुकृतामु लोकं यत्रऽऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः ॥५२॥
इन्दुर्दक्षः श्येनऽऋतावा हिरण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः ।
महान्त्सधस्थे ध्रुवऽआ निषत्तो नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः ॥५३॥
दिवो मूर्द्धासि पृथिव्या नाभिरूर्गपामोषधीनाम् ।
विश्वायुः शर्म सप्रथा नमस्पथे ॥५४॥
विश्वस्य मूर्द्धन्नधि तिष्ठसि श्रितः समुद्रे ते हृदयमप्स्वायुरपो
दत्तोदधिं भिन्त । दिवस्पर्जन्यादन्तरिक्षात्पृथिव्यास्ततो नो वृष्ट्याव ॥५५॥
इष्टो यज्ञो भृगुभिराशीर्दा वसुभिः ।
तस्य नऽइष्टस्य प्रीतस्य द्रविणेहागमेः ॥५६॥
इष्टोऽअग्निराहुतः पिपर्त्तु नऽइष्टꣳहविः। स्वगेदं देवेभ्यो नमः ॥५७॥
यदाकूतात्समसुस्रोद्धृदो वा मनसो वा सम्भृतं चक्षुषो वा ।
तदनु प्रेत सुकृतामु लोकं यत्रऽऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः ॥५८॥
एतꣳसधस्थ परि ते ददामि यमावहाच्छेवधिं जातवेदाः ।
अन्वागन्ता यज्ञपतिर्वोऽअत्र तꣳस्म जानीत परमे व्योमन् ॥५९॥
एतं जानाथ परमे व्योमन्देवाः सधस्था विद रूपमस्य ।
यदागच्छात्पथिभिर्देवयानैरिष्टापूर्त्ते कृणवाथाविरस्मै ॥६०॥
उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयं च ।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥६१॥
येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम् ।
तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥६२॥
प्रस्तरेण परिधिना स्रुचा वेद्या च बर्हिषा ।
ऋचेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥६३॥
यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्त्तं याश्च दक्षिणाः ।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥६४॥

यत्र धाराऽअनपेता मधोर्घृतस्य च याः ।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥६५॥
अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं मऽआसन् ।
अर्कस्त्रिधातू रजसो विमानोऽजस्रो घर्मो हविरस्मि नाम ॥६६॥
ऋचो नामास्मि यजूꣳषि नामास्मि सामानि नामास्मि ।
येऽअग्नयः पाञ्चजन्याऽअस्यां पृथिव्यामधि ।
तेषामसि त्वमुत्तमः प्र नो जीवातवे सुव ॥६७॥
वार्त्रहत्याय शवसे पृतनाषाह्याय च । इन्द्र त्वावर्तयामसि ॥६८॥
सहदानुम्पुरुहूत क्षियन्तमहस्तमिन्द्र सम्पिणक् कुणारुम् ।
अभि वृत्रं वर्द्धमानं पियारुमपादमिन्द्र तवसा जघन्थ ॥६९॥
वि नऽइन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः ।
योऽअस्माँ२॥ऽअभिदासत्यधरं गमया तमः ॥७०॥
मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावतऽआजगन्था परस्याः ।
सृकꣳसꣳशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून्ताढि वि मृधो नुदस्व ॥७१॥
वैश्वानरो नऽ ऊतयऽआ प्रयातु परावतः । अग्निर्नः सुष्टुतीरुप ॥७२॥
पृष्टो दिवि पृष्टोऽअग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वाऽओषधीराविवेश ।
वैश्वानरः सहसा पृष्टोऽअग्निः स नो दिवा स रिषस्पातु नक्तम् ॥७३॥
अश्याम तं काममग्ने तवोतीऽअश्याम रयिꣳरयिवः सुवीरम् ।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते ॥७४॥
वयं तेऽअद्य ररिमा हि काममुत्तानहस्ता नमसोपसद्य ।
यजिष्ठेन मनसा यक्षि देवानस्रेधता मन्मना विप्रोऽअग्ने ॥७५॥
धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः ।
सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे ॥७६॥
त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः । रक्षा तोकमुत त्मना ॥७७॥

इत्यष्टादशोऽध्यायः॥

अथैकोनविंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—प्रजापतिः १। भारद्वाजः २, ३। आभूतिः ४-९। हैमवर्चिः १०-३५। प्रजापतिः ३६, ३७। वैखानसः ३८-४८। शङ्खः ४९-९५॥

देवता—सोमः १-५, ८-१०, १५, २१, २३, २५, ३४, ३५, ५४, ७२, ७४, ८४। इन्द्रः ६, ७, ३२, ३३, ३८, ७१, ७६, ९१। अग्निः ११, ४०, ४१, ४८, ६४-६६। विद्वांसः १२, ३९। यज्ञः १३, १६, १७, १९, २२, २६-२८, ३०, ३१। अतिथ्यादयो लिङ्गोक्ताः १४। गृहपतिः १८। यजमानः २०। विद्वान् २४। इडा २९। पितरः ३६, ४५, ४७, ४९-५३, ५५-६३, ६७-७०, ८७। सरस्वती ३७, ८३, ८८, ९०, ९४। पवित्रकर्त्ता ४२। सविता ४३, ८०, ८५, ८६। विश्वेदेवाः ४४। श्रीः ४६। अङ्गिरसः ७३। प्रजापतिः ७५, ७७-७९। वरुणः ८१। अश्विनौ ८२, ८९, ९३, ९५। आत्मा ९२॥

छन्दः—निचृच्छक्वरी १, ९। स्वराडनुष्टुप् २। भुरिक्त्रिष्टुप् ३, ७, ७२, ७८, ८०, ८१, ८३, ८५, ८९, ९१। आर्षीगायत्री ४। निचृज्जगती ५, ५९, ९५। विराट्प्रकृतिः ६। निचृत्पङ्क्तिः ८। आर्ष्युष्णिक् १०। शक्वरी ११। भुरिगनुष्टुप् १२, १६, २५, २७। अनुष्टुप् १३-१५, १७, २१-२३, २६, २८, ३०, ३१, ३९, ४६, ६५। निचृदनुष्टुप् १८, १९, २४, २९, ४५, ७०। भुरिगुष्णिक् २०। निचृत्त्रिष्टुप् ३२, ६२, ६६, ७३, ८४। त्रिष्टुप् ३३, ३४, ५३, ५६, ६१, ६९, ७४, ८२, ८६, ९२, ९३। विराट्त्रिष्टुप् ३५, ४४, ४९, ५०, ६०, ६३। निचृदष्टिः ३६, ४८। भुरिगष्टिः ३७। गायत्री ३८, ४२, ७१। निचृद्गायत्री ४०, ४१, ४३। स्वराट्पङ्क्तिः ४७, ५२, ६७, ६८। भुरिक्पङ्क्तिः ५१, ५४, ५५, ८७, ९०। निचृत्पङ्क्तिः ५७। विराट्पङ्क्तिः ५८, ९४। विराडनुष्टुप् ६४। भुरिगतिजगती ७५, ७९। भुरिगतिशक्वरी ७६। अतिशक्वरी ७७। स्वराट्त्रिष्टुप् ८८॥

स्वरः—धैवतः १, ३, ६, ७, ९, ११, ३२-३५, ४४, ४९, ५०, ५३, ५६, ६०-६३, ६६, ६९, ७२-७४, ७८, ८०-८६, ८८, ८९, ९१-९३। गान्धारः २, १२-१९, २१-३१, ३९, ४५, ४६, ६४, ६५, ७०। षड्जः ४, ३८, ४०-४३, ७१। निषादः ५, ५९, ७५, ७९, ९५। पञ्चमः ८, ४७, ५१, ५२, ५४, ५५, ५७, ५८, ६७, ६८, ७६, ७७, ८७, ९०, ९४। ऋषभः १०, २०। मध्यमः ३६, ३७, ४८॥

स्वाद्वीं त्वा स्वादुना तीव्रां तीव्रेणामृताममृतेन ।
मधुमतीं मधुमता सृजामि सꣳसोमेन ।
सोमोऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व ॥१॥
परीतो षिञ्चता सुतꣳसोमो यऽउत्तमꣳहविः ।
दधन्वा यो नर्यो अप्स्वन्तरासुषाव सोममद्रिभिः ॥२॥

वायोः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ् सोमोऽअतिद्रुतः । इन्द्रस्य युज्यः सखा ।
वायोः पूतः पवित्रेण प्राङ् सोमोऽअतिद्रुतः । इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥३॥
पुनाति ते परिस्रुतꣳसोमꣳसूर्यस्य दुहिता । वारेण शश्वता तना ॥४॥
ब्रह्म क्षत्रं पवते तेजऽइन्द्रियꣳसुरया सोमः सुतऽआसुतो मदाय ।
शुक्रेण देव देवताः पिपृग्धि रसेनान्नं यजमानाय धेहि ॥५॥
कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमऽउक्तिं यजन्ति ।
उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णऽ
एष ते योनिस्तेजसे त्वा वीर्याय त्वा बलाय त्वा ॥६॥
नाना हि वां देवहितꣳसदस्कृतं मा सꣳसृक्षाथां
परमे व्योमन्। सुरा त्वमसि शुष्मिणी सोमऽएष मा
मा हिꣳसीः स्वां योनिमाविशन्ती ॥७॥
उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः सारस्वतं वीर्यमैन्द्रं बलम् ।
एष ते योनिर्मोदाय त्वानन्दाय त्वा महसे त्वा ॥८॥
तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि
बलमसि बलं मयि धेह्योजोऽस्योजो मयि धेहि
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥९॥

या व्याघ्रं विषूचिकोभौ वृकं च रक्षति ।
श्येनं पतत्रिणꣳसिꣳहꣳसेमं पात्वꣳहसः ॥१०॥
यदापिपेष मातरं पुत्रः प्रमुदितो धयन् ।
एतत्तदग्नेऽअनृणो भवाम्यहतौ पितरौ मया ।
सम्पृच स्थ सं मा भद्रेण पृङ्क्त विपृच स्थ
वि मा पाप्मना पृङ्क्त ॥११॥
देवा यज्ञमतन्वत भेषजं भिषजाश्विना ।
वाचा सरस्वती भिषगिन्द्रायेन्द्रियाणि दधतः ॥१२॥

दीक्षायै रूपꣳशष्पाणि प्रायणीयस्य तोक्मानि ।
क्रयस्य रूपꣳसोमस्य लाजाः सोमाꣳशवो मधु ॥१३॥
आतिथ्यरूपं मासरं महावीरस्य नग्नहुः ।
रूपमुपसदामेतत्तिस्रो रात्रीः सुरासुता ॥१४॥
सोमस्य रूपं क्रीतस्य परिस्रुत्परिषिच्यते ।
अश्विभ्यां दुग्धं भेषजमिन्द्रायैन्द्रꣳसरस्वत्या ॥१५॥
आसन्दी रूपꣳराजासन्द्यै वेद्यै कुम्भी सुराधानी ।
अन्तरऽउत्तरवेद्या रूपं कारोतरो भिषक् ॥१६॥
वेद्या वेदिः समाप्यते बर्हिषा बर्हिरिन्द्रियम् ।
यूपेन यूपऽआप्यते प्रणीतोऽअग्निरग्निना ॥१७॥
हविर्धानं यदश्विनाग्नीध्रं यत्सरस्वती ।
इन्द्रायैन्द्रꣳसदस्कृतं पत्नीशालं गार्हपत्यः ॥१८॥
प्रैषेभिः प्रैषानाप्नोत्याप्रीभिराप्रीर्यज्ञस्य ।
प्रयाजेभिरनुयाजान्वषट्कारेभिराहुतीः ॥१९॥
पशुभिः पशूनाप्नोति पुरोडाशैर्हवीꣳष्या ।
छन्दोभिः सामिधेनीर्याज्याभिर्वषट्कारान् ॥२०॥
धानाः करम्भः सक्तवः परीवापः पयो दधि ।
सोमस्य रूपꣳहविषऽआमिक्षा वाजिनं मधु ॥२१॥
धानानाꣳरूपं कुवलं परीवापस्य गोधूमाः ।
सक्तूनाꣳरूपं बदरमुपवाकाः करम्भस्य ॥२२॥
पयसो रूपं यद्यवा दध्नो रूपं कर्कन्धूनि ।
सोमस्य रूपं वाजिनꣳसौम्यस्य रूपमामिक्षा ॥२३॥
आश्रावयेति स्तोत्रियाः प्रत्याश्रावोऽअनुरूपः ।
यजेति धाय्यारूपं प्रगाथा येयजामहाः ॥२४॥

अर्धऽऋचैरुक्थानाꣳरूपं पदैराप्नोति निविदः ।
प्रणवैः शस्त्राणाꣳरूपं पयसा सोमऽआप्यते ॥२५॥
अश्विभ्यां प्रातः सवनमिन्द्रेणैन्द्रं माध्यन्दिनम् ।
वैश्वदेवᳪसरस्वत्या तृतीयमाप्तᳪसवनम् ॥२६॥
वायव्यैर्वायव्यान्याप्नोति सतेन द्रोणकलशम् ।
कुम्भीभ्यामम्भृणौ सुते स्थालीभिः स्थालीराप्नोति ॥२७॥
यजुर्भिराप्यन्ते ग्रहा ग्रहैः स्तोमाश्च विष्टुतीः ।
छन्दोभिरुक्थाशस्त्राणि साम्नावभृथऽआप्यते ॥२८॥
इडाभिर्भक्षानाप्नोति सूक्तवाकेनाशिषः ।
शंयुना पत्नीसंयाजान्त्समिष्टयजुषा सꣳस्थाम् ॥२९॥
व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥३०॥
एतावद्रूपं यज्ञस्य यद्देवैर्ब्रह्मणा कृतम् ।
तदेतत्सर्वमाप्नोति यज्ञे सौत्रामणी सुते ॥३१॥
सुरावन्तं बर्हिषदᳪसुवीरं यज्ञᳪहिन्वन्ति महिषा नमोभिः ।
दधानाः सोमं दिवि देवतासु मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः ॥३२॥
यस्ते रसः सम्भृतऽओषधीषु सोमस्य शुष्मः सुरया सुतस्य ।
तेन जिन्व यजमानं मदेन सरस्वतीमश्विनाविन्द्रमग्निम् ॥३३॥
यमश्विना नमुचेरासुरादधि सरस्वत्यसुनोदिन्द्रियाय ।
इमं तᳪशुक्रं मधुमन्तमिन्दुᳪसोमᳪराजानमिह भक्षयामि ॥३४॥
यदत्र रिप्तᳪरसिनः सुतस्य यदिन्द्रोऽअपिबच्छचीभिः ।
अहं तदस्य मनसा शिवेन सोमᳪराजानमिह भक्षयामि ॥३५॥
पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः
स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । अक्षन्
पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥३६॥

पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु
प्रपितामहाः । पवित्रेण शतायुषा । पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु
प्रपितामहाः । पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै ॥३७॥
अग्नऽआयूꣳषि पवसऽआ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥३८॥
पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः ।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥३९॥
पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीद्यत् । अग्ने क्रत्वा क्रतूँ१॥ऽरनु ॥४०॥
यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा । ब्रह्म तेन पुनातु मा ॥४१॥
पवमानः सोऽअद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः । यः पोता स पुनातु मा ॥४२॥
उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च । मां पुनीहि विश्वतः ॥४३॥
वैश्वदेवी पुनती देव्यागाद्यस्यामिमा बह्व्यस्तन्वो वीतपृष्ठाः ।
तया मदन्तः सधमादेषु वयꣳस्याम पतयो रयीणाम् ॥४४॥
ये समानाः समनसः पितरो यमराज्ये ।
तेषां लोकः स्वधा नमो यज्ञो देवेषु कल्पताम् ॥४५॥
ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः ।
तेषाꣳश्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतᳪसमाः ॥४६॥
द्वे सृतीऽअशृणवं पितृणामहं देवानामुत मर्त्यानाम् ।
ताभ्यामिदं विश्वमेजत्समेति यदन्तरा पितरं मातरं च ॥४७॥
इदᳪहविः प्रजननं मेऽअस्तु दशवीरᳪसर्वगणꣳस्वस्तये ।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि ।
अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतोऽअस्मासु धत्त ॥४८॥
उदीरतामवरऽउत्परासऽउन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः ।
असुं यऽईयुरवृकाऽऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥४९॥

अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वाऽअथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ।
तेषां वयꣳसुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥५०॥
ये नः पूर्वे पितरः सोम्यासोऽनूहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः ।
तेभिर्यमः सꣳरराणो हवीꣳष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥५१॥
त्वꣳसोम प्रचिकितो मनीषा त्वꣳरजिष्ठमनु नेषि पन्थाम् ।
तव प्रणीती पितरो नऽइन्दो देवेषु रत्नमभजन्त धीराः ॥५२॥
त्वया हि नः पितरः सोम पूर्वे कर्माणि चक्रुः पवमान धीराः ।
वन्वन्नवातः परिधीँ१॥ऽरपोर्णु वीरेभिरश्वैर्मघवा भवा नः ॥५३॥
त्वꣳसोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवीऽआ ततन्थ ।
तस्मै तऽइन्दो हविषा विधेम वयꣳस्याम पतयो रयीणाम् ॥५४॥
बर्हिषदः पितरऽऊत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम् ।
तऽआगतावसा शन्तमेनाथा नः शंयोररपो दधात ॥५५॥
आहं पितॄन्त्सुविदत्राँ२॥ऽअवित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्तऽइहागमिष्ठाः ॥५६॥
उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
तऽआगमन्तु तऽइह श्रुवन्त्वधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५७॥
आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः ।
अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५८॥
अग्निष्वात्ताः पितरऽएह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः ।
अत्ता हवीꣳषि प्रयतानि बर्हिष्यथा रयिꣳसर्ववीरं दधातन ॥५९॥
येऽअग्निष्वात्ता येऽअनग्निष्वात्ता मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।
तेभ्यः स्वराडसुनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयाति ॥६०॥
अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे नाराशꣳसे सोमपीथं यऽआशुः ।
ते नो विप्रासः सुहवा भवन्तु वयꣳस्याम पतयो रयीणाम् ॥६१॥

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभिगृणीत विश्वे ।
मा हिꣳसिष्ट पितरः केनचिन्नो यद्वऽआगः पुरुषता कराम ॥६२॥
आसीनासोऽअरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय ।
पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्रयच्छत तऽइहोर्जं दधात ॥६३॥
यमग्ने कव्यवाहन त्वं चिन्मन्यसे रयिम् ।
तन्नो गीर्भिः श्रवाय्यं देवत्रा पनया युजम् ॥६४॥
योऽअग्निः कव्यवाहनः पितॄन्यक्षदृतावृधः ।
प्रेदु हव्यानि वोचति देवेभ्यश्च पितृभ्यऽआ ॥६५॥
त्वमग्नऽईडितः कव्यवाहनावाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वी ।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया तेऽअक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवीꣳषि ॥६६॥
ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च विद्म याँ२॥ऽउ च न प्रविद्म ।
त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञꣳसुकृतं जुषस्व ॥६७॥
इदं पितृभ्यो नमोऽअस्त्वद्य ये पूर्वासो यऽउपरासऽईयुः ।
ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनꣳसुवृजनासु विक्षु ॥६८॥
अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासोऽअग्नऽऋतमाशुषाणाः ।
शुचीदयन्दीधितिमुक्थशासः क्षामा भिन्दन्तोऽअरुणीरपव्रन् ॥६९॥
उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि ।
उशन्नुशतऽआवह पितॄन्हविषेऽअत्तवे ॥७०॥
अपां फेनेन नमुचेः शिरऽइन्द्रोदवर्तयः । विश्वा यदजय स्पृधः ॥७१॥
सोमो राजामृतꣳसुतऽऋजीषेणाजहान्मृत्युम् ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं
पयोऽमृतं मधु ॥७२॥
अद्भ्यः क्षीरं व्यपिबत् क्रुङ्ङाङ्गिरसो धिया ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं
पयोऽमृतं मधु ॥७३॥

सोममद्भ्यो व्यपिबच्छन्दसा हꣳसः शुचिषत् ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं
पयोऽमृतं मधु ॥७४॥
अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रं पयः सोमं
प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽ
इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥७५॥
रेतो मूत्रं विजहाति योनिं प्रविशदिन्द्रियम् ।
गर्भो जरायुणावृतऽउल्बं जहाति जन्मना ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं
पयोऽमृतं मधु ॥७६॥
दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्सत्यानृते प्रजापतिः ।
अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धाꣳसत्ये प्रजापतिः ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं
पयोऽमृतं मधु ॥७७॥
वेदेन रूपे व्यपिबत्सुतासुतौ प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं
विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥७८॥
दृष्ट्वा परिस्रुतो रसꣳशुक्रेण शुक्रं व्यपिबत् पयः सोमं प्रजापतिः ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥७९॥
सीसेन तन्त्रं मनसा मनीषिणऽऊर्णासूत्रेण कवयो वयन्ति ।
अश्विना यज्ञꣳसविता सरस्वतीन्द्रस्य रूपं वरुणो भिषज्यन् ॥८०॥
तदस्य रूपममृतꣳशचीभिस्तिस्रो दधुर्देवताः सꣳरराणाः ।
लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोक्मभिस्त्वगस्य माꣳसमभवन्न लाजाः ॥८१॥
तदश्विना भिषजा रुद्रवर्तनी सरस्वती वयति पेशोऽअन्तरम् ।
अस्थि मज्जानं मासरैः कारोतरेण दधतो गवां त्वचि ॥८२॥
सरस्वती मनसा पेशलं वसु नासत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः ।
रसं परिस्रुता न रोहितं नग्नहुर्धीरस्तसरं न वेम ॥८३॥

पयसा शुक्रममृतं जनित्रꣳसुरया मूत्राज्जनयन्त रेतः ।
अपामतिं दुर्मतिं बाधमानाऽऊवध्यं वातꣳसब्वं तदारात् ॥८४॥
इन्द्रः सुत्रामा हृदयेन सत्यं पुरोडाशेन सविता जजान ।
यकृत् क्लोमानं वरुणो भिषज्यन् मतस्ने वायव्यैर्न मिनाति पित्तम् ॥८५॥
आन्त्राणि स्थालीर्मधु पिन्वमाना गुदाः पात्राणि सुदुघा न धेनुः ।
श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शचीभिरासन्दी नाभिरुदरं न माता ॥८६॥
कुम्भो वनिष्ठुर्जनिता शचीभिर्यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भोऽअन्तः ।
प्लाशिर्व्यक्तः शतधारऽउत्सो दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः ॥८७॥
मुखꣳसदस्य शिरऽइत् सतेन जिह्वा पवित्रमश्विनासन्त्सरस्वती ।
चप्पं न पायुर्भिषगस्य वालो वस्तिर्न शेपो हरसा तरस्वी ॥८८॥
अश्विभ्यां चक्षुरमृतं ग्रहाभ्यां छागेन तेजो हविषा शृतेन ।
पक्ष्माणि गोधूमैः कुवलैरुतानि पेशो न शुक्रमसितं वसाते ॥८९॥
अविर्न मेषो नसि वीर्याय प्राणस्य पन्थाऽअमृतो ग्रहाभ्याम् ।
सरस्वत्युपवाकैर्व्यानं नस्यानि बर्हिर्बदरैर्जजान ॥९०॥
इन्द्रस्य रूपमृषभो बलाय कर्णाभ्याꣳश्रोत्रममृतं ग्रहाभ्याम् ।
यवा न बर्हिर्भ्रुवि केसराणि कर्कन्धु जज्ञे मधु सारघं मुखात् ॥९१॥
आत्मन्नुपस्थे न वृकस्य लोम मुखे श्मश्रूणि न व्याघ्रलोम ।
केशा न शीर्षन्यशसे श्रियै शिखा सिꣳहस्य लोम त्विषिरिन्द्रियाणि ॥९२॥
अङ्गान्यात्मन् भिषजा तदश्विनात्मानमङ्गैः समधात् सरस्वती ।
इन्द्रस्य रूपꣳशतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः ॥९३॥
सरस्वती योन्यां गर्भमन्तरश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति ।
अपाꣳरसेन वरुणो न साम्नेन्द्रꣳश्रियै जनयन्नप्सु राजा ॥९४॥
तेजः पशूनाꣳहविरिन्द्रियावत् परिस्रुता पयसा सारघं मधु ।
अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरस्वत्या सुतासुताभ्याममृतः सोमऽइन्दुः ॥९५॥

इत्येकोनविंशोऽध्यायः॥

अथ विंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—प्रजापतिः १, २, ४-२०, २२, २३, २७, २८, ३१, ३४, ३५। अश्विनौ ३। प्रस्कण्वः २१। आश्वतराश्विः २४-२६। विश्वामित्रः २९, ५३। नृमेधपुरुषमेधौ ३०। कौण्डिन्यः ३२। काक्षीवत्सुकीर्तिः ३३। आङ्गिरसः ३६-४६। वामदेवः ४७-४९। गर्गः ५०-५२। वसिष्ठः ५४। विदर्भिः ५५-८०। गृत्समदः ८१-८३। मधुच्छन्दाः ८४-९०॥

देवता—सभेशः १-३, ९, १०। सभापतिः ४-६, ८। राजा ७। उपदेशकाः ११। विश्वेदेवाः १२। अध्यापकोपदेशकौ १३। अग्निः १४, २२, २४-२६, ७८, ७९। वायुः १५। सूर्यः १६, २१। लिङ्गोक्ताः १७, ३४, ३५। वरुणः १८। आपः १९, २०। समित् २३। सोमः २७, ३३। इन्द्रः २८-३१, ३६, ३८-४०, ४७-५४, ८७-८९। परमात्मा ३२। तनूनपात् ३७। उषासानक्ता ४१। दैव्याध्यापकोपदेशकौ ४२। तिस्रो दैव्यः ४३। त्वष्टा ४४। वनस्पतिः ४५। स्वाहाकृतयः ४६। अश्विसरस्वतीन्द्राः ५५-६९, ७३-७७, ८०, ९०। इन्द्रसवितृवरुणाः ७०-७२। अश्विनौ ८१-८३। सरस्वती ८४-८६॥

छन्दः—द्विपदाविराड्गायत्री १। भुरिगुष्णिक् २, २८। निचृदतिधृतिः ३। निचृदार्षीगायत्री ४। अनुष्टुप् ५, ६, १३, २५, ३४, ५५, ५७, ५९-६२, ६४, ६५, ६८, ७०-७२, ७५। निचृद्गायत्री ७, ८३, ८५, ८७। निचृदनुष्टुप् ८, १४-१६, २४, २६, ५८, ६६, ६९, ७३, ७४, ९०। निचृज्जगती ९। स्वराट्शक्वरी१०। पङ्क्तिः ११, २२, ३२, ४९। निचृत्प्रकृतिः १२। भुरिक्त्रिष्टुप् १७, ४०। भुरिगत्यष्टिः १८। निचृदतिजगती १९। भुरिगनुष्टुप् २०, ६७। विराडनुष्टुप् २१, २७, ५६, ६३, ७६, ८०। स्वराडतिशक्वरी २३। गायत्री २९, ३१, ८४, ८६, ८८, ८९। बृहती ३०। विराट्त्रिष्टुप् ३३, ५०। निचृदुपरिष्टाद्बृहती ३५। त्रिष्टुप् ३६-३८, ४१-४३, ४५, ४६। निचृत्त्रिष्टुप् ३९, ४४, ४८। भुरिक्पङ्क्तिः ४७, ५१, ५२, ५४, ७७, ७९। निचृद्बृहती ५३। जगती ७८। आर्च्युष्णिक् ८१। विराड्गायत्री ८२॥

स्वरः—षड्जः १, ३, ४, ७, २९, ३१, ८२-८९। ऋषभः २, २८, ८१। गान्धारः ५, ६, ८, १३-१६, १८, २०, २१, २४-२७, ३४, ५५-७६, ८०, ९०। निषादः ९, १९, ७८। धैवतः १०, १२, १७, ३३, ३६-४६, ४८, ५०। पञ्चमः ११, २२, २३, ३२, ४७, ४९, ५१, ५२, ५४, ७७, ७९। मध्यमः ३०, ३५, ५३॥

क्षत्रस्य योनिरसि क्षत्रस्य नाभिरसि। मा त्वा हिꣳसीन्मा मा हिꣳसीः ॥१॥
निषसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा ।
साम्राज्याय सुक्रतुः। मृत्योः पाहि विद्योत्पाहि ॥२॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभि षिञ्चामि सरस्वत्यै
भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै
यशसेऽभिषिञ्चामि ॥३॥
कोऽसि कतमोऽसि कस्मै त्वा काय त्वा। सुश्लोक सुमङ्गल सत्यराजन् ॥४॥
शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि ।
राजा मे प्राणोऽअमृतꣳसम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम् ॥५॥
जिह्वा मे भद्रं वाङ् महो मनो मन्युः स्वराड् भामः ।
मोदाः प्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानि मित्रं मे सहः ॥६॥
बाहू मे बलमिन्द्रियꣳहस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो मम ॥७॥
पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदरमꣳसौ ग्रीवाश्च श्रोणी ।
ऊरूऽअरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वतः ॥८॥
नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत् ।
आनन्दनन्दावाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः ।
जङ्घाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः ॥९॥
प्रति क्षत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे प्रत्यश्वेषु प्रतितिष्ठामि गोषु।
प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन् प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि
पुष्टे प्रति द्यावापृथिव्योः प्रतितिष्ठामि यज्ञे ॥१०॥
त्रया देवाऽएकादश त्रयस्त्रिꣳशाः सुराधसः ।
बृहस्पतिपुरोहिता देवस्य सवितुः सवे। देवा देवैरवन्तु मा ॥११॥
प्रथमा द्वितीयैर्द्वितीयास्तृतीयैस्तृतीयाः सत्येन सत्यं यज्ञेन
यज्ञो यजुर्भिर्यजूꣳषि सामभिः सामान्यृग्भिर्ऋचः पुरोऽनु-
वाक्याभिः पुरोऽनुवाक्या याज्याभिर्याज्या वषट्कारैर्वषट्-
काराऽआहुतिभिराहुतयो मे कामान्त्समर्धयन्तु भूः स्वाहा ॥१२॥
लोमानि प्रयतिर्मम त्वङ् मऽआनतिरागतिः ।
माꣳसं मऽउपनतिर्वस्वस्थि मज्जा मऽआनतिः ॥१३॥

यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् ।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः ॥१४॥
यदि दिवा यदि नक्तमेनाꣳसि चकृमा वयम् ।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः ॥१५॥
यदि जाग्रद्यदि स्वप्नऽएनाꣳसि चकृमा वयम् ।
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः ॥१६॥
यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यदर्ये
यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधि धर्मणि तस्यावयजनमसि ॥१७॥
यदापोऽअघ्न्याऽइति वरुणेति शपामहे ततो वरुण नो मुञ्च ।
अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः ।
अव देवैर्देवकृतमेनोऽयक्ष्यव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि ॥१८॥
समुद्रे ते हृदयमप्स्वन्तः सं त्वा विशन्त्वोषधीरुतापः ।
सुमित्रिया नऽआपऽ ओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु
योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥१९॥
द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव ।
पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः ॥२०॥
उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽ उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥२१॥
अपोऽअद्यान्वचारिषꣳरसेन समसृक्ष्महि ।
पयस्वानग्नऽआगमं तं मा सꣳसृज वर्चसा प्रजया च धनेन च ॥२२॥
एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ।
समाववर्ति पृथिवी समुषाः समु सूर्यः । समु विश्वमिदं जगत् ।
वैश्वानरज्योतिर्भूयासं विभून्कामान्व्यश्नवै भूः स्वाहा ॥२३॥
अभ्यादधामि समिधमग्ने व्रतपते त्वयि ।
व्रतं च श्रद्धां चोपैमीन्धे त्वा दीक्षितोऽअहम् ॥२४॥

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह ।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना ॥२५॥
यत्रेन्द्रश्च वायुश्च सम्यञ्चौ चरतः सह ।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र सेदिर्न विद्यते ॥२६॥
अꣳशुना ते अꣳशुः पृच्यतां परुषा परुः ।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः ॥२७॥
सिञ्चन्ति परिषिञ्चन्त्युत्सिञ्चन्ति पुनन्ति च ।
सुरायै बभ्र्वै मदे किन्त्वो वदति किन्त्वः ॥२८॥
धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ।
इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः ॥२९॥
बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥३०॥
अध्वर्योऽअद्रिभिः सुतꣳसोमं पवित्रऽआनय ।
पुनाहीन्द्राय पातवे ॥३१॥
यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोकाऽअधिश्रिताः ।
यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहं मयि गृह्णामि त्वामहम् ॥३२॥
उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णऽ
एष ते योनिरश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णे ॥३३॥
प्राणपा मेऽअपानपाश्चक्षुष्पाः श्रोत्रपाश्च मे ।
वाचो मे विश्वभेषजो मनसोऽसि विलायकः ॥३४॥
अश्विनकृतस्य ते सरस्वतिकृतस्येन्द्रेण सुत्राम्णा कृतस्य ।
उपहूतऽउपहूतस्य भक्षयामि ॥३५॥
समिद्धऽइन्द्रऽउषसामनीके पुरोरुचा पूर्वकृद्वावृधानः ।
त्रिभिर्देवैस्त्रिꣳशता वज्रबाहुर्जघान वृत्रं वि दुरो ववार ॥३६॥
नराशꣳसः प्रति शूरो मिमानस्तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धाम ।
गोभिर्वपावान्मधुना समञ्जन्हिरण्यैश्चन्द्री यजति प्रचेताः ॥३७॥

ईडितो देवैर्हरिवाँ२॥ऽअभिष्टिराजुह्वानो हविषा शर्द्धमानः ।
पुरन्दरो गोत्रभिद्वज्रबाहुरायातु यज्ञमुप नो जुषाणः ॥३८॥
जुषाणो बर्हिर्हरिवान्नऽइन्द्रः प्राचीनꣳसीदत्प्रदिशा पृथिव्याः ।
उरुप्रथाः प्रथमानꣳस्योनमादित्यैरक्तं वसुभिः सजोषाः ॥३९॥
इन्द्रं दुरः कवष्यो धावमाना वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः ।
द्वारो देवीरभितो विश्रयन्ताꣳसुवीरा वीरं प्रथमाना महोभिः ॥४०॥
उषासानक्ता बृहती बृहन्तं पयस्वती सुदुघे शूरमिन्द्रम् ।
तन्तुं ततं पेशसा संवयन्ती देवानां देवं यजतः सुरुक्मे ॥४१॥
दैव्या मिमाना मनुषः पुरुत्रा होताराविन्द्रं प्रथमा सुवाचा ।
मूर्द्धन्यज्ञस्य मधुना दधाना प्राचीनं ज्योतिर्हविषा वृधातः ॥४२॥
तिस्रो देवीर्हविषा वर्द्धमानाऽइन्द्रं जुषाणा जनयो न पत्नीः ।
अच्छिन्नं तन्तुं पयसा सरस्वतीडा देवी भारती विश्वतूर्त्तिः ॥४३॥
त्वष्टा दधच्छुष्ममिन्द्राय वृष्णेऽपाकोऽचिष्टुर्यशसे पुरूणि ।
वृषा यजन्वृषणं भूरिरेता मूर्द्धन्यज्ञस्य समनक्तु देवान् ॥४४॥
वनस्पतिरवसृष्टो न पाशैस्त्मन्या समञ्जञ्छमिता न देवः ।
इन्द्रस्य हव्यैर्जठरं पृणानः स्वदाति यज्ञं मधुना घृतेन ॥४५॥
स्तोकानामिन्दुं प्रति शूरऽइन्द्रो वृषायमाणो वृषभस्तुराषाट् ।
घृतप्रुषा मनसा मोदमानाः स्वाहा देवाऽअमृता मादयन्ताम् ॥४६॥
आयात्विन्द्रोऽवसऽउप नऽइह स्तुतः सधमादस्तु शूरः ।
वावृधानस्तविषीर्यस्य पूर्वीर्द्यौर्न क्षत्रमभिभूति पुष्यात् ॥४७॥
आ नऽइन्द्रो दूरादा नऽआसादभिष्टिकृदवसे यासदुग्रः ।
ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्रबाहुः सङ्गे समत्सु तुर्वणिः पृतन्यून् ॥४८॥
आ न इन्द्रो हरिभिर्यात्वच्छार्वाचीनोऽवसे राधसे च ।
तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमं यज्ञमनु नो वाजसातौ ॥४९॥
त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवेहवे सुहवꣳशूरमिन्द्रम् ।
ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥५०॥

इन्द्रः सुत्रामा स्ववाँ२॥ऽअवोभिः सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः ।
बाधतां द्वेषोऽअभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥५१॥
तस्य वयꣳ सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ२॥ऽइन्द्रोऽअस्मेऽआराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु ॥५२॥
आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः ।
मा त्वा के चिन्नियमन्विं न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ२॥ऽइहि ॥५३॥
एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासोऽअभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
स न स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५४॥
समिद्धोऽअग्निरश्विना तप्तो घर्मो विराट् सुतः ।
दुहे धेनुः सरस्वती सोमꣳशुक्रमिहेन्द्रियम् ॥५५॥
तनूपा भिषजा सुतेऽश्विनोभा सरस्वती ।
मध्वा रजाꣳसीन्द्रियमिन्द्राय पथिभिर्वहान् ॥५६॥
इन्द्रायेन्दुꣳसरस्वती नराशꣳसेन नग्नहुम् ।
अधातामश्विना मधु भेषजं भिषजा सुते ॥५७॥
आजुह्वाना सरस्वतीन्द्रायेन्द्रियाणि वीर्यम् ।
इडाभिरश्विनाविषꣳसमूर्जꣳसꣳरयिं दधुः ॥५८॥
अश्विना नमुचेः सुतꣳसोमꣳशुक्रं परिस्रुता ।
सरस्वती तमाभरद् बर्हिषेन्द्राय पातवे ॥५९॥
कवष्यो न व्यचस्वतीरश्विभ्यां न दुरो दिशः ।
इन्द्रो न रोदसीऽउभे दुहे कामान्त्सरस्वती ॥६०॥
उषासानक्तमश्विना दिवेन्द्रꣳसायमिन्द्रियैः ।
संजानाने सुपेशसा समञ्जाते सरस्वत्या ॥६१॥
पातं नोऽअश्विना दिवा पाहि नक्तꣳसरस्वति ।
दैव्या होतारा भिषजा पातमिन्द्रꣳसचा सुते ॥६२॥
तिस्रस्त्रेधा सरस्वत्यश्विना भारतीडा ।
तीव्रं परिस्रुता सोममिन्द्राय सुषुवुर्मदम् ॥६३॥

अश्विना भेषजं मधु भेषजं नः सरस्वती ।
इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियꣳरूपꣳरूपमधुः सुते ॥६४॥
ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः शशमानः परिस्रुता ।
कीलालमश्विभ्यां मधु दुहे धेनुः सरस्वती ॥६५॥
गोभिर्न सोममश्विना मासरेण परिस्रुता ।
समधातꣳसरस्वत्या स्वाहेन्द्रे सुतं मधु ॥६६॥
अश्विना हविरिन्द्रियं नमुचेर्धिया सरस्वती ।
आ शुक्रमासुराद्वसु मघमिन्द्राय जभ्रिरे ॥६७॥
यमश्विना सरस्वती हविषेन्द्रमवर्द्धयन् ।
स बिभेद वलं मघं नमुचावासुरे सचा ॥६८॥
तमिन्द्रं पशवः सचाश्विनोभा सरस्वती ।
दधानाऽअभ्यनूषत हविषा यज्ञऽइन्द्रियैः ॥६९॥
यऽइन्द्रऽइन्द्रियं दधुः सविता वरुणो भगः ।
स सुत्रामा हविष्पतिर्यजमानाय सश्चत ॥७०॥
सविता वरुणो दधद्यजमानाय दाशुषे ।
आदत्त नमुचेर्वसु सुत्रामा बलमिन्द्रियम् ॥७१॥
वरुणः क्षत्रमिन्द्रियं भगेन सविता श्रियम् ।
सुत्रामा यशसा बलं दधाना यज्ञमाशत ॥७२॥
अश्विना गोभिरिन्द्रियमश्वेभिर्वीर्यँ बलम् ।
हविषेन्द्रꣳसरस्वती यजमानमवर्द्धयन् ॥७३॥
ता नासत्या सुपेशसा हिरण्यवर्तनी नरा ।
सरस्वती हविष्मतीन्द्र कर्मसु नोऽवत ॥७४॥
ता भिषजा सुकर्मणा सा सुदुघा सरस्वती ।
स वृत्रहा शतक्रतुरिन्द्राय दधुरिन्द्रियम् ॥७५॥
युवꣳसुराममश्विना नमुचावासुरे सचा ।
विपिपानाः सरस्वतीन्द्रं कर्मस्वावत ॥७६॥

पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावथुः काव्यैर्दꣳसनाभिः ।
यत्सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥७७॥
यस्मिन्नश्वासऽऋषभासऽउक्षणो वशा मेषाऽअवसृष्टासऽआहुताः ।
कीलालपे सोमपृष्ठाय वेधसे हृदा मतिं जनय चारुमग्नये ॥७८॥
अहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्वीव सोमः ।
वाजसनिꣳरयिमस्मे सुवीरं प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम् ॥७९॥
अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वती वीर्यम् ।
वाचेन्द्रो बलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम् ॥८०॥
गोमदू षु णासत्याश्वावद्यातमश्विना । वर्त्ती रुद्रा नृपाय्यम् ॥८१॥
न यत्परो नान्तरऽआदधर्षद् वृषण्वसू । दुःशꣳसो मर्त्यो रिपुः ॥८२॥
ता नऽआ वोढमश्विना रयिं पिशङ्गसन्दृशम् । धिष्ण्या वरिवोविदम् ॥८३॥
पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥८४॥
चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् । यज्ञं दधे सरस्वती ॥८५॥
महोऽअर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना । धियो विश्वा विराजति ॥८६॥
इन्द्रायाहि चित्रभानो सुताऽइमे त्वायवः । अण्वीभिस्तना पूतासः ॥८७॥
इन्द्रायाहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः । उप ब्रह्माणि वाघतः ॥८८॥
इन्द्रायाहि तूतुजानऽउप ब्रह्माणि हरिवः । सुते दधिष्व नश्चनः ॥८९॥
अश्विना पिबतां मधु सरस्वत्या सजोषसा ।
इन्द्रः सुत्रामा वृत्रहा जुषन्ताꣳसोम्यं मधु ॥९०॥

इति विंशोऽध्यायः॥

अथोत्तरविंशतिः

अथैकविंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—शुनःशेपः १, २। वामदेवः ३-५। गयस्फानः ६। गयःप्लातः ७। विश्वामित्रः ८। वसिष्ठः ९। आत्रेयः १०, ११, २७। स्वस्त्यात्रेयः १२-२६, २८-६१॥

देवता—वरुणः १, २। अग्निवरुणौ ३, ४। आदित्याः ५। अदितिः ६। स्वर्ग्या नौः ७। मित्रावरुणौ ८। अग्निः ९, १२। ऋत्विजः १०। विद्वांसः ११, १३-१६, २२, २७, ४१, ४४। विश्वेदेवाः १७-२१, २४, २६, २८। रुद्राः २३। इन्द्रः २५। अग्न्यश्वीन्द्रसरस्वत्याद्या लिङ्गोक्ताः २९। अश्व्यादयो लिङ्गोक्ताः ३०। अश्व्यादयः ३१, ३३-४०, ४६, ४७, ४९-५८। सरस्वत्यादयः ३२, ४८। होत्रादयः ४२, ४३। यजमानर्त्विजः ४५। अग्न्यादयः ५९। लिङ्गोक्ताः ६०, ६१॥

छन्दः—निचृद्गायत्री १, ८। निचृत्त्रिष्टुप् २, ११। स्वराट्पङ्क्तिः ३, ४। त्रिष्टुप् ५, ९, ४८, ५०, ५१, ५४। भुरिक्त्रिष्टुप् ६। यवमध्यागायत्री ७। भुरिक्पङ्क्तिः १०। विराडनुष्टुप् १२, १४। अनुष्टुप् १३, १६, १९-२२, २४, २५। निचृदनुष्टुप् १५, १७, १८। भुरिगनुष्टुप् २३, २७, २८। विराड्बृहती २६। निचृदष्टिः २९, ३३, ३६। भुरिगत्यष्टिः ३०। अतिधृतिः ३१, ४१। विराडतिधृतिः ३२। निचृदतिधृतिः ३४। भुरिगष्टिः ३५। धृतिः ३७, ६०। भुरिक्कृतिः ३८। निचृदत्यष्टिः ३९, ५६। विराडत्यष्टिः[क], अत्यष्टिः[र] ४०। आर्च्युष्णिक्[क], विराडाकृतिः[र] ४२। याजुषीपङ्क्तिः[क], उत्कृतिः[र] ४३। याजुषीत्रिष्टुप्[क], स्वराडुत्कृतिः[र] ४४। भुरिक्प्राजापत्योष्णिक्[क], भुरिगभिकृतिः[र] ४५। उत्कृतिः[क], स्वराट्संकृतिः[र] ४६। भुरिगाकृतिः[क,र] ४७। ब्राह्म्युष्णिक् ४९। अतिजगती ५२। भुरिगतिजगती ५३। स्वराट्शक्वरी ५५। अतिशक्वरी ५७। अत्यष्टिः[क], निचृत्त्रिष्टुप्[र] ५८। अष्टिः ५९। भुरिग्विकृतिः ६१॥

स्वरः—षड्जः १, ७, ८, ३१, ३२, ३४, ३५, ४१, ४३[र], ४४[र], ४६[क]। धैवतः २, ५, ६, ९, ११, ४४[क], ४८, ५०, ५१, ५४, ५५, ५८[र]। पञ्चमः ३, ४, १०, ४२[र], ४३[क], ४७, ५७। गान्धारः १२-२५, २७, २८, ३०, ३९, ४०, ४६[र], ५६, ५८[क]। मध्यमः २६, २९, ३३, ३५, ३६, ५९, ६१। ऋषभः ३७, ४२[क], ४५, ४९, ५९, ६०। निषादः ३८, ५२, ५३॥

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके ॥१॥

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।

अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा नऽआयुः प्रमोषीः ॥२॥

त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः।

यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥३॥

स त्वं नोऽअग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ।

अवयक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳसुहवो नऽएधि ॥४॥

महीमू षु मातरꣳसुव्रतानामृतस्य पत्नीमवसे हुवेम।

तुविक्षत्रामजरन्तीमुरूचीꣳ सुशर्माणमदितिꣳसुप्रणीतिम् ॥५॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसꣳसुशर्माणमदितिꣳसुप्रणीतिम्।

दैवीं नावꣳस्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये ॥६॥

सुनावमारुहेयमस्रवन्तीमनागसम्। शतारित्राꣳस्वस्तये ॥७॥

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजाꣳसि सुक्रतू ॥८॥

प्र बाहवा सिसृतं जीवसे नऽआ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेन।

आ मा जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ॥९॥

शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः।

जम्भयन्तोऽहिं वृकꣳरक्षाꣳसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥१०॥

वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः।

अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥११॥

समिद्धोऽअग्निः समिधा सुसमिद्धो वरेण्यः।

गायत्री छन्दऽइन्द्रियं त्र्यविर्गौर्वयो दधुः ॥१२॥

तनूनपाच्छुचिव्रतस्तनूपाश्च सरस्वती।

उष्णिहा छन्दऽइन्द्रियं दित्यवाड् गौर्वयो दधुः ॥१३॥

इडाभिरग्निरीड्यः सोमो देवोऽअमर्त्यः।

अनुष्टुप् छन्दऽइन्द्रियं पञ्चाविर्गौर्वयो दधुः ॥१४॥

सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्त्स्तीर्णबर्हिरमर्त्यः।

बृहती छन्दऽइन्द्रियं त्रिवत्सो गौर्वयो दधुः ॥१५॥

दुरो देवीर्दिशो महीर्ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः ।
पङ्क्तिश्छन्दऽइहेन्द्रियं तुर्य्यवाड् गौर्वयो दधुः ॥१६॥
उषे यह्वी सुपेशसा विश्वे देवाऽअमर्त्याः ।
त्रिष्टुप् छन्दऽइहेन्द्रियं पष्ठवाड् गौर्वयो दधुः ॥१७॥
दैव्या होतारा भिषजेन्द्रेण सयुजा युजा ।
जगती छन्दऽइन्द्रियमनड्वान् गौर्वयो दधुः ॥१८॥
तिस्रऽइडा सरस्वती भारती मरुतो विशः ।
विराट् छन्दऽइहेन्द्रियं धेनुर्गौर्न वयो दधुः ॥१९॥
त्वष्टा तुरीपोऽअद्भुतऽइन्द्राग्नी पुष्टिवर्धना ।
द्विपदा छन्दऽइन्द्रियमुक्षा गौर्न वयो दधुः ॥२०॥
शमिता नो वनस्पतिः सविता प्रसुवन् भगम् ।
ककुप् छन्दऽइहेन्द्रियं वशा वेहद्वयो दधुः ॥२१॥
स्वाहा यज्ञं वरुणः सुक्षत्रो भेषजं करत् ।
अतिच्छन्दाऽइन्द्रियं बृहदृषभो गौर्वयो दधुः ॥२२॥
वसन्तेनऽऋतुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुताः ।
रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२३॥
ग्रीष्मेणऽऋतुना देवा रुद्राः पञ्चदशे स्तुताः ।
बृहता यशसा बलꣳहविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२४॥
वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुताः ।
वैरूपेण विशौजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२५॥
शारदेनऽऋतुना देवाऽएकविꣳशऽऋभव स्तुताः ।
वैराजेन श्रिया श्रियꣳहविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२६॥
हेमन्तेनऽऋतुना देवास्त्रिणवे मरुत स्तुताः ।
बलेन शक्वरीः सहो हविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२७॥
शैशिरेणऽऋतुना देवास्त्रयस्त्रिꣳशेऽमृता स्तुताः ।
सत्येन रेवतीः क्षत्रꣳहविरिन्द्रे वयो दधुः ॥२८॥

होता यक्षत्समिधाग्निमिडस्पदेऽश्विनेन्द्रꣳसरस्वतीमजो धूम्रो न
गोधूमैः कुवलैर्भेषजं मधु शष्पैर्न तेजऽइन्द्रियं पयः सोमः
परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥२९॥
होता यक्षत्तनूनपात्सरस्वतीमविर्मेषो न भेषजं पथा मधुमता
भरन्नश्विनेन्द्राय वीर्यꣳ बदरैरुपवाकाभिर्भेषजं तोक्मभिः पयः
सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३०॥
होता यक्षन्नराशꣳसं न नग्नहुं पतिꣳसुरया भेषजं मेषः सरस्वती
भिषग्रथो न चन्द्र्यश्विनोर्वपाऽइन्द्रस्य वीर्यꣳ बदरैरुपवाकाभिर्भेषजं
तोक्मभिः पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३१॥
होता यक्षदिडेडितऽआजुह्वानः सरस्वतीमिन्द्रं बलेन वर्धयन्नृषभेण
गवेन्द्रियमश्विनेन्द्राय भेषजं यवैः कर्कन्धुभिर्मधु लाजैर्न मासरं
पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३२॥
होता यक्षद् बर्हिरूर्णम्रदा भिषङ् नासत्या भिषजाश्विनाश्वा
शिशुमती भिषग्धेनुः सरस्वती भिषग्दुहऽइन्द्राय भेषजं पयः
सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३३॥
होता यक्षद्दुरो दिशः कवष्यो न व्यचस्वतीरश्विभ्यां न दुरो
दिशऽइन्द्रो न रोदसी दुघे दुहे धेनुः सरस्वत्यश्विनेन्द्राय भेषजꣳशुक्रं
न ज्योतिरिन्द्रियं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य
होतर्यज ॥३४॥
होता यक्षत्सुपेशसोषे नक्तं दिवाश्विना समञ्जाते सरस्वत्या
त्विषिमिन्द्रे न भेषजꣳश्येनो न रजसा हृदा श्रिया न मासरं पयः
सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३५॥
होता यक्षद्दैव्या होतारा भिषजाश्विनेन्द्रं न जागृवि दिवा नक्तं
न भेषजैः शूषꣳसरस्वती भिषक्सीसेन दुहऽइन्द्रियं पयः सोमः
परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३६॥

होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजं त्रयस्त्रिधातवोऽपसो रूपमिन्द्रे
हिरण्ययमश्विनेडा न भारती वाचा सरस्वती महऽइन्द्राय दुहऽ
इन्द्रियं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३७॥
होता यक्षत्सुरेतसमृषभं नर्यापसं त्वष्टारमिन्द्रमश्विना भिषजं
न सरस्वतीमोजो न जूतिरिन्द्रियं वृको न रभसो भिषग्यशः
सुरया भेषजꣳश्रिया न मासरं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु
व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३८॥
होता यक्षद्वनस्पतिꣳशमितारꣳशतक्रतुं भीमं न मन्युꣳराजानं व्याघ्रं
नमसाश्विना भामꣳसरस्वती भिषगिन्द्राय दुहऽइन्द्रियं पयः सोमः
परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३९॥
[क]होता यक्षदग्निꣳस्वाहाज्यस्य स्तोकानाꣳस्वाहा मेदसां पृथक्
स्वाहा छागमश्विभ्याꣳस्वाहा मेषꣳसरस्वत्यै स्वाहऽऋषभमिन्द्राय
सिꣳहाय सहसऽइन्द्रियꣳस्वाहाग्निं न भेषजꣳस्वाहा सोममिन्द्रियꣳ
[र]स्वाहेन्द्रꣳसुत्रामाणꣳसवितारं वरुणं भिषजां पतिꣳस्वाहा वनस्पतिं
प्रियं पाथो न भेषजꣳस्वाहा देवाऽआज्यपा जुषाणोऽअग्निर्भेषजं
पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥४०॥
होता यक्षदश्विनौ छागस्य वपाया मेदसो जुषेताꣳहविर्होतर्यज ।
होता यक्षत्सरस्वतीं मेषस्य वपाया मेदसो जुषताꣳहविर्होतर्यज ।
होता यक्षदिन्द्रमृषभस्य वपाया मेदसो जुषताꣳहविर्होतर्यज ॥४१॥
[क]होता यक्षदश्विनौ सरस्वतीमिन्द्रꣳसुत्रामाणमिमे सोमाः
[र]सुरामाणश्छागैर्न मेषैर्ऋषभैः सुताः शष्पैर्न तोक्मभिर्लाजैर्महस्वन्तो
मदा मासरेण परिष्कृताः शुक्राः पयस्वन्तोऽमृताः प्रस्थिता वो
मधुश्चुतस्तानश्विना सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा वृत्रहा जुषन्ताꣳसोम्यं
मधु पिबन्तु मदन्तु व्यन्तु होतर्यज ॥४२॥

[क]होता यक्षदश्विनौ छागस्य [र]हविषऽआत्तामद्य मध्यतो मेदऽउद्भृतं
पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घस्तां नूनं घासेऽअज्राणां
यवसप्रथमानाꣳ सुमत्क्षराणाꣳ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां
पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामतऽउत्सादतोऽङ्गा-
दङ्गादवत्तानां करतऽएवाश्विना जुषेताꣳ हविर्होतर्यज ॥४३॥
[क]होता यक्षत् सरस्वतीं मेषस्य [र]हविषऽआवयदद्य मध्यतो मेदऽ
उद्भृतं पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घसन्नूनं घासेऽअज्राणां
यवसप्रथमानाꣳ सुमत्क्षराणाꣳ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां
पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामतऽउत्सादतोऽङ्गादङ्गाद-
वत्तानां करदेवꣳसरस्वती जुषताꣳ हविर्होतर्यज ॥४४॥
[क]होता यक्षदिन्द्रमृषभस्य हविषऽ[र]आवयदद्य मध्यतो मेदऽउद्भृतं
पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घसन्नूनं घासेऽअज्राणां
यवसप्रथमानाꣳ सुमत्क्षराणाꣳ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां
पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामतऽउत्सादतोऽङ्गा-
दङ्गादवत्तानां करदेवमिन्द्रो जुषताꣳ हविर्होतर्यज ॥४५॥
[क]होता यक्षद्वनस्पतिमभि हि पिष्टतमया रभिष्ठया रशनयाधित ।
यत्राश्विनोश्छागस्य हविषः प्रिया धामानि यत्र सरस्वत्या
मेषस्य हविषः प्रिया धामानि यत्रेन्द्रस्यऽऋषभस्य हविषः प्रिया
धामानि यत्राग्नेः प्रिया धामानि यत्र सोमस्य प्रिया धामानि यत्रेन्द्रस्य
सुत्राम्णः प्रिया धामानि [र]यत्र सवितुः प्रिया धामानि यत्र वरुणस्य
प्रिया धामानि यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथाꣳसि यत्र देवानामाज्यपानां
प्रिया धामानि यत्राग्नेर्होतुः प्रिया धामानि तत्रैतान् प्रस्तुत्ये-
वोपस्तुत्येवोपावस्रक्षद्रभीयसऽइव कृत्वी करदेवं देवो
वनस्पतिर्जुषताꣳहविर्होतर्यज ॥४६॥

[क]होता यक्षदग्निꣳस्विष्टकृतमयाडग्निरश्विनोश्छागस्य हविषः
प्रिया धामान्ययाट् सरस्वत्या मेषस्य हविषः प्रिया धामान्य-
याडिन्द्रस्यऽऋषभस्य हविषः प्रिया धामान्ययाडग्नेः प्रिया धामान्ययाट्
सोमस्य प्रिया धामान्ययाडिन्द्रस्य सुत्राम्णः प्रिया धामान्ययाट्
सवितुः प्रिया धामान्ययाड् वरुणस्य प्रिया धामान्ययाड् वनस्पतेः
प्रिया पाथाꣳस्ययाड् देवानामाज्यपानां प्रिया धामानि यक्षदग्नेर्होतुः
प्रिया धामानि यक्षत् स्वं महिमानमायजतामेज्याऽ इषः कृणोतु
सोऽअध्वरा जातवेदा जुषताꣳहविर्होतर्यज ॥४७॥
देवं बर्हिः सरस्वती सुदेवमिन्द्रेऽअश्विना ।
तेजो न चक्षुरक्ष्योर्बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥४८॥
देवीर्द्वारोऽअश्विना भिषजेन्द्रे सरस्वती ।
प्राणं न वीर्यं नसि द्वारो दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥४९॥
देवीऽउषासावश्विना सुत्रामेन्द्रे सरस्वती ।
बलं न वाचमास्यऽउषाभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५०॥
देवी जोष्ट्री सरस्वत्यश्विनेन्द्रमवर्धयन्। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशो
जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५१॥
देवीऽऊर्जाहुती दुघे सुदुघेन्द्रे सरस्वत्यश्विना भिषजावतः । शुक्रं न
ज्योति स्तनयोराहुती धत्तऽइन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५२॥
देवा देवानां भिषजा होताराविन्द्रमश्विना । वषट्कारैः सरस्वती त्विषिं
न हृदये मतिꣳहोतृभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५३॥
देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरश्विनेडा सरस्वती ।
शूषं न मध्ये नाभ्यामिन्द्राय दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥५४॥
देवऽइन्द्रो नराशꣳसस्त्रिवरूथः सरस्वत्याश्विभ्यामीयते रथः ।
रेतो न रूपममृतं जनित्रमिन्द्राय त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि वसुवने
वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५५॥

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णोऽअश्विभ्याꣳसरस्वत्या सुपिप्पलऽ
इन्द्राय पच्यते मधु । ओजो न जूतिर्ऋषभो न भामं वनस्पतिर्नो
दधदिन्द्रियाणि वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५६॥
देवं बर्हिर्वारितीनामध्वरे स्तीर्णमश्विभ्यामूर्णम्रदाः सरस्वत्या स्योनमिन्द्र
ते सदः । ईशायै मन्युꣳराजानं बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसुवने
वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५७॥
[क]देवोऽअग्निः स्विष्टकृद्देवान्यक्षद्यथायथꣳहोताराविन्द्रमश्विना वाचा
वाचꣳसरस्वतीमग्निꣳसोमꣳस्विष्टकृत् स्विष्टऽइन्द्रः सुत्रामा सविता
वरुणो भिषगिष्टो देवो वनस्पतिः स्विष्टा देवाऽआज्यपाः
[र]स्विष्टोऽअग्निरग्निना होता होत्रे स्विष्टकृद्यशो न दधदिन्द्रिय-
मूर्जमपचितिꣳस्वधां वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥५८॥
अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशान्
बध्नन्नश्विभ्यां छागꣳसरस्वत्यै मेषमिन्द्रायऽऋषभꣳसुन्वन्नश्विभ्याꣳ
सरस्वत्याऽइन्द्राय सुत्राम्णे सुरासोमान् ॥५९॥
सूपस्थाऽअद्य देवो वनस्पतिरभवदश्विभ्यां छागेन सरस्वत्यै
मेषेणेन्द्रायऽऋषभेणाक्षꣳस्तान् मेदस्तः प्रति पचतागृभीषतावीवृधन्त
पुरोडाशैरपुरश्विना सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा सुरासोमान् ॥६०॥
त्वामद्यऽऋषऽआर्षेयऽऋषीणां नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्यऽआ
सङ्गतेभ्यऽएष मे देवेषु वसु वार्यायक्ष्यतऽइति ता या देवा देव
दानान्यदुस्तान्यस्माऽआ च शास्स्वा च गुरस्वेषितश्च होतरसि
भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकाय सूक्ता ब्रूहि ॥६१॥

इत्येकविंशोऽध्यायः॥

अथ द्वाविंशोऽध्यायः

—:0:—

ऋषिः—प्रजापतिः १, ३-८, ११-१४, १६, १९, २०, २२-३४। यज्ञपुरुषः २। विश्वामित्रः ९। मेधातिथिः १०। सुतम्भरः १५। विश्वरूपः १७। अरुणत्रसदस्यू १८। स्वस्त्यात्रेयः २१॥

देवता—सविता १, ९-१४। विद्वांसः २। अग्निः ३, १५-१७, १९। विश्वेदेवाः ४। इन्द्रादयः ५। अग्न्यादयः ६, २७। प्राणादयः ७, २३। प्रयत्नवन्तो जीवादयः ८। पवमानः १८। प्रजापत्यादयः २०। विद्वान् २१। लिङ्गोक्ताः २२, २९। दिशः २४। जलादयः २५। वातादयः २६। नक्षत्रादयः २८। वस्वादयः ३०। मासाः ३१। वाजादयः ३२। आयुरादयः ३३। यज्ञः ३४॥

छन्दः—निचृत्पङ्क्तिः १। निचृत्त्रिष्टुप् २। भुरिगनुष्टुप् ३। जगती ४, २७। अतिधृतिः ५। भुरिगतिजगती ६। निचृदत्यष्टिः[क], स्वराडत्यष्टिः[र] ७। भुरिग्धृतिः[क], भुरिगतिधृतिः[र] ८। निचृद्गायत्री ९, १३, १५, १६। गायत्री १०-१२, १७। पिपीलिकामध्यानिचृद्गायत्री १४। पिपीलिकामध्याविराडनुष्टुप् १८। विकृतिः १९। भुरिग्धृतिः[क], अतिधृतिः[र] २०। आर्ष्यनुष्टुप् २१। स्वराडुत्कृतिः २२। स्वराडनुष्टुप् २३। निचृदतिधृतिः २४। अष्टिः २५। स्वराडभिकृतिः २६। भुरिगष्टिः[क,र] २८। निचृदत्यष्टिः २९। कृतिः ३०। भुरिगत्यष्टिः ३१। अत्यष्टिः ३२। भुरिक्कृतिः[क], भुरिगतिधृतिः[र] ३३। भुरिगुष्णिक् ३४॥

स्वरः—पञ्चमः १। धैवतः २। गान्धारः ३, ७, १८, २१, २३, २९, ३१, ३२। निषादः ४, ६, २७, ३०। षड्जः ५, ९-१७, २२, २४। ऋषभः[क], षड्जः[र] ८। मध्यमः १९, २५, २८। ऋषभः[क], षड्जः[र] २०। ऋषभः २६, ३४। निषादः[क], षड्जः[र] ३३॥

तेजोऽसि शुक्रममृतमायुष्पाऽआयुर्मे पाहि ।
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यामाददे ॥१॥
इमामगृभ्णन् रशनामृतस्य पूर्वऽआयुषि विदथेषु कव्या ।
सा नोऽअस्मिन्त्सुतऽआबभूवऽऋतस्य सामन्त्सरमारपन्ती ॥२॥
अभिधाऽअसि भुवनमसि यन्तासि धर्त्ता ।
स त्वमग्निं वैश्वानरꣳसप्रथसं गच्छ स्वाहाकृतः ॥३॥
स्वगा त्वा देवेभ्यः प्रजापतये ब्रह्मन्नश्वं भन्त्स्यामि देवेभ्यः
प्रजापतये तेन राध्यासम्। तं बधान देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्नुहि ॥४॥

प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीन्द्राग्निभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि
वायवे त्वा जुष्टं प्रोक्षामि विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं
प्रोक्षामि सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि। योऽअर्वन्तं
जिघाꣳसति तमभ्यमीति वरुणः। परो मर्त्तः परः श्वा ॥५॥
अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहापां मोदाय स्वाहा सवित्रे
स्वाहा वायवे स्वाहा विष्णवे स्वाहेन्द्राय स्वाहा बृहस्पतये
स्वाहा मित्राय स्वाहा वरुणाय स्वाहा ॥६॥
[क]हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहावक्रन्दाय
स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा
निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते [र]स्वाहा-
सीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा-
कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा
सꣳहानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥७॥
[क]यते स्वाहा धावते स्वाहोद्द्रावाय स्वाहोद्द्रुताय स्वाहा शूकाराय
स्वाहा शूकृताय स्वाहा निषण्णाय स्वाहोत्थिताय स्वाहा जवाय
स्वाहा बलाय स्वाहा विवर्त्तमानाय स्वाहा विवृत्ताय स्वाहा
विधून्वानाय स्वाहा [र]विधूताय स्वाहा शुश्रूषमाणाय स्वाहा शृण्वते
स्वाहेक्षमाणाय स्वाहेक्षिताय स्वाहा वीक्षिताय स्वाहा निमेषाय
स्वाहा यदत्ति तस्मै स्वाहा यत्पिबति तस्मै स्वाहा यन्मूत्रं करोति
तस्मै स्वाहा कुर्वते स्वाहा कृताय स्वाहा ॥८॥
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥९॥
हिरण्यपाणिमूतये सवितारमुपह्वये। स चेत्ता देवता पदम् ॥१०॥
देवस्य चेततो महीं प्र सवितुर्हवामहे। सुमतिꣳसत्यराधसम् ॥११॥
सुष्टुतिꣳसुमतीवृधो रातिꣳसवितुरीमहे। प्र देवाय मतीविदे ॥१२॥
रातिꣳसत्पतिं महे सवितारमुप ह्वये। आसवं देववीतये ॥१३॥
देवस्य सवितुर्मतिमासवं विश्वदेव्यम्। धिया भगं मनामहे ॥१४॥

अग्निꣳस्तोमेन बोधय समिधानोऽअमर्त्यम्। हव्या देवेषु नो दधत् ॥१५॥
स हव्यवाडमर्त्यऽउशिग्दूतश्चनोहितः। अग्निर्धिया समृण्वति ॥१६॥
अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँ२॥ऽआ सादयादिह ॥१७॥
अजीजनो हि पवमान सूर्यं विधारे शक्मना पयः ।
गोजीरया रꣳहमाणः पुरन्ध्या ॥१८॥
विभूर्मात्रा प्रभूः पित्राश्वोऽसि हयोऽस्यत्योऽसि मयोऽस्यर्वासि
सप्तिरसि वाज्यसि वृषासि नृमणाऽअसि। ययुर्नामाऽसि शिशुर्नामा-
स्यादित्यानां पत्वान्विहि देवाऽआशापालाऽएतं देवेभ्योऽश्वं मेधाय
प्रोक्षितꣳरक्षतेह रन्तिरिह रमतामिह धृतिरिह स्वधृतिः स्वाहा ॥१९॥
[क]काय स्वाहा कस्मै स्वाहा कतमस्मै स्वाहा स्वाहाधिमाधीताय
स्वाहा मनः प्रजापतये स्वाहा चित्तं विज्ञातायादित्यै स्वाहादित्यै
मह्यै स्वाहादित्यै सुमृडीकायै स्वाहा सरस्वत्यै स्वाहा सरस्वत्यै
पावकायै स्वाहा [र]सरस्वत्यै बृहत्यै स्वाहा पूष्णे स्वाहा पूष्णे
प्रपथ्याय स्वाहा पूष्णे नरन्धिषाय स्वाहा त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रे
तुरीपाय स्वाहा त्वष्ट्रे पुरुरूपाय स्वाहा विष्णवे स्वाहा विष्णवे
निभूयपाय स्वाहा विष्णवे शिपिविष्टाय स्वाहा ॥२०॥
विश्वो देवस्य नेतुर्मर्तो वुरीत सख्यम् ।
विश्वो रायऽइषुध्यति द्युम्नं वृणीत पुष्यसे स्वाहा ॥२१॥
आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः
शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः
सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य
वीरो जायतां निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः
पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥२२॥
प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय
स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ॥२३॥

प्राच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा दक्षिणायै दिशे स्वाहार्वाच्यै
दिशे स्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे
स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोर्ध्वायै दिशे स्वहार्वाच्यै दिशे स्वाहावाच्यै
दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा ॥२४॥
अद्भ्यः स्वाहा वार्भ्यः स्वाहोदकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा स्रवन्तीभ्यः
स्वाहा स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा कूप्याभ्यः स्वाहा सूद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः
स्वाहार्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा ॥२५॥
वाताय स्वाहा धूमाय स्वाहाभ्राय स्वाहा मेघाय स्वाहा विद्योतमानाय
स्वाहा स्तनयते स्वाहावस्फूर्जते स्वाहा वर्षते स्वाहाववर्षते
स्वाहोग्रं वर्षते स्वाहा शीघ्रं वर्षते स्वाहोद्गृह्णते स्वाहोद्गृहीताय
स्वाहा प्रुष्णते स्वाहा शीकायते स्वाहा प्रुष्वाभ्यः स्वाहा ह्रादुनीभ्यः
स्वाहा नीहाराय स्वाहा ॥२६॥
अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेन्द्राय स्वाहा पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय
स्वाहा दिवे स्वाहा दिग्भ्यः स्वाहाशाभ्यः स्वाहोर्व्यै दिशे
स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा ॥२७॥
[क]नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नक्षत्रियेभ्यः स्वाहाहोरात्रेभ्यः स्वाहार्धमासेभ्यः
स्वाहा मासेभ्यः स्वाहऽऋतुभ्यः स्वाहार्त्तवेभ्यः स्वाहा संवत्सराय
स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याꣳस्वाहा चन्द्राय स्वाहा सूर्याय स्वाहा
[र]रश्मिभ्यः स्वाहा वसुभ्यः स्वाहा रुद्रेभ्यः स्वाहादित्येभ्यः स्वाहा
मरुद्भ्यः स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहा
शाखाभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा पुष्पेभ्यः स्वाहा फलेभ्यः
स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा ॥२८॥
पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहा दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा
चन्द्राय स्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहाद्भ्यः स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा
वनस्पतिभ्यः स्वाहा परिप्लवेभ्यः स्वाहा चराचरेभ्यः स्वाहा
सरीसृपेभ्यः स्वाहा ॥२९॥

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा
गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहाभिभुवे स्वाहाधिपतये स्वाहा
शूषाय स्वाहा सꣳसर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा
मलिम्लुचाय स्वाहा दिवा पतयते स्वाहा ॥३०॥
मधवे स्वाहा माधवाय स्वाहा शुक्राय स्वाहा शुचये स्वाहा नभसे
स्वाहा नभस्याय स्वाहेषाय स्वाहोर्जाय स्वाहा सहसे स्वाहा
सहस्याय स्वाहा तपसे स्वाहा तपस्याय स्वाहाꣳहसस्पतये स्वाहा ॥३१॥
वाजाय स्वाहा प्रसवाय स्वाहापिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा स्वः
स्वाहा मूर्ध्ने स्वाहा व्यश्नुविने स्वाहान्त्याय स्वाहान्त्याय भौवनाय
स्वाहा भुवनस्य पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ॥३२॥
[क]आयुर्यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा प्राणो यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहापानो
यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा व्यानो यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहोदानो यज्ञेन
कल्पताꣳस्वाहा समानो यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳ
स्वाहा श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा [र]वाग्यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा
मनो यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहात्मा यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा ब्रह्मा यज्ञेन
कल्पताꣳस्वाहा ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा स्वर्यज्ञेन कल्पताꣳ
स्वाहा पृष्ठं यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा यज्ञो यज्ञेन कल्पताꣳस्वाहा ॥३३॥
एकस्मै स्वाहा द्वाभ्याꣳस्वाहा शताय स्वाहैकशताय स्वाहा व्युष्ट्यै
स्वाहा स्वर्गाय स्वाहा ॥३४॥

इति द्वाविंशोऽध्यायः ॥

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—प्रजापतिः १-६५।

देवता—परमेश्वरः १-५, ५२। सूर्यः ६, १०। इन्द्रः ७। वाय्व्वादयः ८। जिज्ञासुः ९, ११, ४५, ४७। विद्युदादयः १२। ब्रह्मादयः १३, ४८। ब्रह्मा १४। विद्वान् १५। सविता १६। अग्न्यादयः १७। प्राणादयः १८। गणपतिः १९। राजप्रजे २०, २२, २३, ३१। न्यायाधीशः २१। भूमिसूर्यौ २४, २५। श्रीः २६, २७। प्रजापतिः २८। विद्वांसः २९, ३३। राजा ३०, ३२, ४३, ४४। प्रजा ३४, ३५, ४०, ४१। स्त्रियः ३६, ३७। सभासदः ३८। अध्यापकः ३९, ४२। सूर्यादयः ४६। प्रष्टृसमाधातारौ ४९। ईश्वरः ५०, ६४, ६५। पुरुषेश्वरः ५१। प्रष्टा ५३, ५५, ५७, ५९, ६१। समाधाता ५४, ५६, ६०, ६२, ६३। समिधा ५८॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १, ३, ६०। निचृदाकृतिः २। विकृतिः ४। गायत्री ५। विराड्गायत्री ६। निचृद्बृहती ७। निचृदत्यष्टिः ८। निचृदनुष्टुप् ९, १२, १४, २४, २८, ३०, ३४, ४५, ५४। अनुष्टुप् १०, ११, २५-२७, २९, ३१, ३२, ३७, ४०, ४१, ४३, ४६-४८, ५३, ५५। भुरिगतिजगती १३। विराडनुष्टुप् १५, २२, ६३। विराड्जगती १६, १८। अतिशक्वरी १७। शक्वरी १९। स्वराडनुष्टुप् २०। भुरिग्गायत्री २१, ३९। बृहती २३। उष्णिक् ३३, ४४। भुरिगुष्णिक् ३५, ३६, ४२। निचृत्त्रिष्टुप् ३८, ४९, ५०, ५७-५९, ६१। पङ्क्तिः ५१। विराट्त्रिष्टुप् ५२, ६२, ६५। स्वराडुष्णिक् ५६। विराडुष्णिक् ६४॥

स्वरः—धैवतः १, ३, १९, ३८, ४९, ५०, ५२, ५७-६२, ६५। पञ्चमः २, १७, ५१। मध्यमः ४, ७, २३। षड्जः ५, ६, २१, ३९। गान्धारः ८-१२. १४, १५, २०, २२, २४-३२, ३४, ३७, ४०, ४१, ४३, ४५-४८, ५३-५५, ६३। निषादः १३, १६, १८। ऋषभः ३३, ३५, ३६, ४२, ४४, ५६, ६४॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१॥
उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिः सूर्यस्ते
महिमा । यस्तेऽहन्त्संवत्सरे महिमा सम्बभूव यस्ते वायावन्तरिक्षे
महिमा सम्बभूव यस्ते दिवि सूर्ये महिमा सम्बभूव तस्मै ते महिम्ने
प्रजापतये स्वाहा देवेभ्यः ॥२॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव ।
यऽईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥
उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिश्चन्द्रमास्ते
महिमा । यस्ते रात्रौ संवत्सरे महिमा सम्बभूव यस्ते पृथिव्यामग्नौ
महिमा सम्बभूव यस्ते नक्षत्रेषु चन्द्रमसि महिमा सम्बभूव तस्मै
ते महिम्ने प्रजापतये देवेभ्यः स्वाहा ॥४॥
युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः । रोचन्ते रोचना दिवि ॥५॥
युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे । शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥६॥
यद्वातोऽअपोऽअगनीगन्प्रियामिन्द्रस्य तन्वम् ।
एतꣳस्तोतरनेन पथा पुनरश्वमावर्त्तयासि नः ॥७॥
वसवस्त्वाञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसा रुद्रास्त्वाञ्जन्तु त्रैष्टुभेन
छन्दसादित्यास्त्वाञ्जन्तु जागतेन छन्दसा । भूर्भुवः स्वर्लाजी३॥ ञ्छा-
ची३॥ न्यव्ये गव्यऽएतदन्नमत्त देवाऽएतदन्नमद्धि प्रजापते ॥८॥

कः स्विदेकाकी चरति कऽउ स्विज्जायते पुनः ।
किꣳस्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत् ॥९॥
सूर्यऽएकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः ।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत् ॥१०॥
का स्विदासीत्पूर्वचित्तिः किꣳस्विदासीद् बृहद्वयः ।
का स्विदासीत्पिलिप्पिला का स्विदासीत्पिशङ्गिला ॥११॥
द्यौरासीत्पूर्वचित्तिरश्वऽआसीद् बृहद्वयः ।
अविरासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासीत्पिशङ्गिला ॥१२॥

वायुष्ट्वा पचतैरवत्वसितग्रीवश्छागैर्न्यग्रोधश्चमसैः शल्मलिर्वृद्ध्या । एष
स्य राथ्यो वृषा पड्भिश्चतुर्भिरेदगन्ब्रह्मा कृष्णश्च नोऽवतु नमोऽग्नये ॥१३॥
सꣳशितो रश्मिना रथः सꣳशितो रश्मिना हयः ।
सꣳशितो अप्स्वप्सुजा ब्रह्मा सोमपुरोगवः ॥१४॥

स्वयं वाजिँस्तन्वं कल्पयस्व स्वयं यजस्व स्वयं जुषस्व ।
महिमा तेऽन्येन न सन्नशे ॥१५॥
न वाऽउऽएतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ२॥ऽइदेषि पथिभिः सुगेभिः ।
यत्रासते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु ॥१६॥
अग्निः पशुरासीत्तेनायजन्त सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्नग्निः स ते
लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैताऽअपः । वायुः पशुरासीत्तेनायजन्त
सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्वायुः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि
पिबैताऽअपः। सूर्यः पशुरासीत्तेनायजन्त सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्त्सूर्यः
स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैताऽअपः ॥१७॥

प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा ।
अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥१८॥
गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ
हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳहवामहे वसो मम ।
आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ॥१९॥
ताऽउभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयाव स्वर्गे लोके
प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु ॥२०॥
उत्सक्थ्याऽअव गुदं धेहि समञ्जिं चारया वृषन् ।
य स्त्रीणां जीवभोजनः ॥२१॥
यकासकौ शकुन्तिकाहलगिति वञ्चति ।
आहन्ति गभे पसो निगल्गलीति धारका ॥२२॥
यकोऽसकौ शकुन्तकऽआहलगिति वञ्चति ।
विवक्षतऽइव ते मुखमध्वर्यो मा नस्त्वमभि भाषथाः ॥२३॥
माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य रोहतः ।
प्रतिलामीति ते पिता गभे मुष्टिमतꣳसयत् ॥२४॥

माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य क्रीडतः ।
विवक्षतऽइव ते मुखं ब्रह्मन्मा त्वं वदो बहु ॥२५॥
ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रापय गिरौ भारꣳहरन्निव ।
अथास्यै मध्यमेधताꣳशीते वाते पुनन्निव ॥२६॥
ऊर्ध्वमेनमुच्छ्रयताद् गिरौ भारꣳहरन्निव ।
अथास्य मध्यमेजतु शीते वाते पुनन्निव ॥२७॥
यदस्याऽअꣳहुभेद्याः कृधु स्थूलमुपातसत् ।
मुष्काविदस्याऽएजतो गोशफे शकुलाविव ॥२८॥
यद्देवासो ललामगुं प्र विष्टीमिनमाविषुः ।
सक्थ्ना देदिश्यते नारी सत्यस्याक्षिभुवो यथा ॥२९॥
यद्धरिणो यवमत्ति न पुष्टं पशु मन्यते ।
शूद्रा यदर्यजारा न पोषाय धनायति ॥३०॥
यद्धरिणो यवमत्ति न पुष्टं बहु मन्यते ।
शूद्रो यदर्यायै जारो न पोषमनुमन्यते ॥३१॥
दधिक्राव्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत्प्र णऽआयूꣳषि तारिषत् ॥३२॥
गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह ।
बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ॥३३॥
द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षट्पदाः ।
विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ॥३४॥
महानाम्न्यो रेवत्यो विश्वा आशाः प्रभूवरीः ।
मैघीर्विद्युतो वाचः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ॥३५॥
नार्यस्ते पत्न्यो लोम विचिन्वन्तु मनीषया ।
देवानां पत्न्यो दिशः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ॥३६॥

रजता हरिणीः सीसा युजो युज्यन्ते कर्मभिः ।
अश्वस्य वाजिनस्त्वचि सिमाः शम्यन्तु शम्यन्तीः ॥३७॥
कुविदङ्ग यवमन्तो यवञ्चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय ।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमऽउक्तिं यजन्ति ॥३८॥
कस्त्वाच्छ्यति कस्त्वा विशास्ति कस्ते गात्राणि शम्यति ।
कऽउ ते शमिता कविः ॥३९॥
ऋतवस्तऽऋतुथा पर्व शमितारो विशासतु ।
संवत्सरस्य तेजसा शमीभिः शम्यन्तु त्वा ॥४०॥
अर्द्धमासाः परूꣳषि ते मासाऽआच्छ्यन्तु शम्यन्तः ।
अहोरात्राणि मरुतो विलिष्टꣳसूदयन्तु ते ॥४१॥
दैव्याऽअध्वर्यवस्त्वाच्छ्यन्तु वि च शासतु ।
गात्राणि पर्वशस्ते सिमाः कृण्वन्तु शम्यन्तीः ॥४२॥
द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते ।
सूर्यस्ते नक्षत्रैः सह लोकं कृणोतु साधुया ॥४३॥
शं ते परेभ्यो गात्रेभ्यः शमस्त्ववरेभ्यः ।
शमस्थभ्यो मज्जभ्यः शम्वस्तु तन्वै तव ॥४४॥
कः स्विदेकाकी चरति कऽउ स्विज्जायते पुनः ।
किꣳस्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत् ॥४५॥
सूर्यऽएकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः ।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत् ॥४६॥
किꣳस्वित्सूर्यसमं ज्योतिः किꣳसमुद्रसमꣳसरः ।
किꣳस्वित्पृथिव्यै वर्षीयः कस्य मात्रा न विद्यते ॥४७॥
ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमꣳसरः ।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ॥४८॥

पृच्छामि त्वा चितये देवसख यदि त्वमत्र मनसा जगन्थ ।
येषु विष्णुस्त्रिषु पदेष्वेष्टस्तेषु विश्वं भुवनमाविवेशा३ ॥४९॥
अपि तेषु त्रिषु पदेष्वस्मि येषु विश्वं भुवनमाविवेश ।
सद्यः पर्येमि पृथिवीमुत द्यामेकेनाङ्गेन दिवोऽअस्य पृष्ठम् ॥५०॥
केष्वन्तः पुरुषऽआ विवेश कान्यन्तः पुरुषेऽअर्पितानि ।
एतद् ब्रह्मन्नुपवल्हामसि त्वा किꣳस्विन्नः प्रतिवोचास्यत्र ॥५१॥
पञ्चस्वन्तः पुरुषऽआविवेश तान्यन्तः पुरुषेऽअर्पितानि ।
एतत्त्वात्र प्रतिमन्वानोऽअस्मि न मायया भवस्युत्तरो मत् ॥५२॥
का स्विदासीत्पूर्वचित्तिः किꣳस्विदासीद् बृहद्वयः ।
का स्विदासीत्पिलिप्पिला का स्विदासीत्पिशङ्गिला ॥५३॥
द्यौरासीत्पूर्वचित्तिरश्वऽआसीद् बृहद्वयः ।
अविरासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासीत्पिशङ्गिला ॥५४॥
काऽईमरे पिशङ्गिला काऽईं कुरुपिशङ्गिला ।
कऽईमास्कन्दमर्षति कऽईं पन्थां विसर्पति ॥५५॥
अजारे पिशङ्गिला श्वावित्कुरुपिशङ्गिला ।
शशऽआस्कन्दमर्षत्यहिः पन्थां विसर्पति ॥५६॥
कत्यस्य विष्ठाः कत्यक्षराणि कति होमासः कतिधा समिद्धः ।
यज्ञस्य त्वा विदथा पृच्छमत्र कति होतारऽऋतुशो यजन्ति ॥५७॥
षडस्य विष्ठाः शतमक्षराण्यशीतिर्होमाः समिधो ह तिस्रः ।
यज्ञस्य ते विदथा प्रब्रवीमि सप्त होतारऽऋतुशो यजन्ति ॥५८॥
कोऽअस्य वेद भुवनस्य नाभिं को द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षम् ।
कः सूर्यस्य वेद बृहतो जनित्रं को वेद चन्द्रमसं यतोजाः ॥५९॥
वेदाहमस्य भुवनस्य नाभिं वेद द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षम् ।
वेद सूर्यस्य बृहतो जनित्रमथो वेद चन्द्रमसं यतोजाः ॥६०॥

पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः ।
पृच्छामि त्वा वृष्णोऽअश्वस्य रेतः पृच्छामि वाचः परमं व्योम ॥६१॥
इयं वेदिः परोऽअन्तः पृथिव्याऽअयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः ।
अयꣳसोमो वृष्णोऽअश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम ॥६२॥
सुभूः स्वयम्भूः प्रथमोऽन्तर्महत्यर्णवे ।
दधे ह गर्भमृत्वियं यतो जातः प्रजापतिः ॥६३॥
होता यक्षत्प्रजापतिꣳसोमस्य महिम्नः । जुषतां पिबतु सोमꣳहोतर्यज ॥६४॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयꣳस्याम पतयो रयीणाम् ॥६५॥

इति त्रयोविंशोऽध्यायः॥

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—प्रजापतिः १-४०।

देवता—प्रजापतिः १। सोमादयः २। अश्व्यादयः ३। मारुतादयः ४। विश्वेदेवाः ५। अग्न्यादयः ६, ९, १२, १४, १६, २३, ३४। इन्द्रादयः ७, १५। इन्द्राग्न्यादयः ८, १७। अन्तरिक्षादयः १०। वसन्तादयः ११, २०। विराजादयः १३। पितरः १८। वायुः १९। वरुणः २१। सोमादयः २२, २४, ३२। कालावयवाः २५। भूम्यादयः २६। वस्वादयः २७। ईशानादयः २८। प्रजापत्यादयः २९-३१। मित्रादयः ३३। चन्द्रादयः ३५। अश्विन्यादयः ३६। अर्धमासादयः ३७। वर्षादयः ३८। आदित्यादयः ३९। विश्वेदेवादयः ४०॥

छन्दः—भुरिक्संकृतिः १। निचृत्संकृतिः २। निचृदतिजगती ३। विराडतिधृतिः ४। निचृद्बृहती ५, २७। विराट्पङ्क्तिः ६। अतिजगती ७। विराड्बृहती ८, ११। निचृत्पङ्क्तिः ९। विराड्गायत्री १०। स्वराडनुष्टुप् १२। निचृदनुष्टुप् १३। भुरिगतिजगती १४, १८। विराडुष्णिक् १५। शक्वरी १६, ४०। भुरिग्गायत्री १७। त्रिपाद्गायत्री १९। विराड्जगती २०। बृहती २१, २८। विराड्बृहती २२। पङ्क्तिः २३। भुरिक्पङ्क्तिः २४। स्वराट्पङ्क्तिः २५। भुरिगनुष्टुप् २६। विराडनुष्टुप् २९। निचृदतिधृतिः ३०। स्वराट्त्रिष्टुप् ३१, ३९। भुरिग्जगती ३२, ३७। भुरिगतिजगती ३३। स्वराट्शक्वरी ३४। निचृच्छक्वरी ३५। निचृज्जगती ३६। स्वराड्जगती ३८॥

स्वरः—गान्धारः १, २, १२, १३, २६, २९। निषादः ३, ७, १४, १८, २०, ३२, ३३, ३६-३८। षड्जः ४, १०, १७, १९, ३०। मध्यमः ५, ८, ११, २१, २२, २७, २८। पञ्चमः ६, ९, २३-२५। ऋषभः १५। धैवतः १६, ३१, ३४, ३५, ३९, ४०॥

अश्वस्तूपरो गोमृगस्ते प्राजापत्याः कृष्णग्रीवऽआग्नेयो रराटे पुरस्तात्
सारस्वती मेष्यधस्ताद्धन्वोराश्विनावधोरामौ बाह्वोः सौमापौष्णः श्यामो
नाभ्याꣳसौर्ययामौ श्वेतश्च कृष्णश्च पार्श्वयोस्त्वाष्ट्रौ लोमशसक्थौ
सक्थ्योर्वायव्यः श्वेतः पुच्छऽइन्द्राय स्वपस्याय वेहद्वैष्णवो वामनः ॥१॥
रोहितो धूम्ररोहितः कर्कन्धुरोहितस्ते सौम्या बभ्रुररुणबभ्रुः शुकबभ्रुस्ते
वारुणाः शितिरन्ध्रोऽन्यतः शितिरन्ध्रः समन्तशितिरन्ध्रस्ते सावित्राः
शितिबाहुरन्यतःशितिबाहुः समन्तशितिबाहुस्ते बार्हस्पत्याः पृषती
क्षुद्रपृषती स्थूलपृषती ता मैत्रावरुण्यः ॥२॥

शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः श्येतः
श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामाऽअवलिप्ता
रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥३॥
पृश्निस्तिरश्चीनपृश्निरूर्ध्वपृश्निस्ते मारुताः फल्गूर्लोहितोर्णी
पलक्षी ताः सारस्वत्यः प्लीहाकर्णः शुण्ठाकर्णोऽध्यालोहकर्णस्ते
त्वाष्ट्राः कृष्णग्रीवः शितिकक्षोऽञ्जिसक्थस्तऽऐन्द्राग्नाः
कृष्णाञ्जिरल्पाञ्जिर्महाञ्जिस्तऽउषस्याः ॥४॥
शिल्पा वैश्वदेव्यो रोहिण्यस्त्र्यवयो वाचेऽविज्ञाताऽअदित्यै
सरूपा धात्रे वत्सतर्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥५॥
कृष्णग्रीवाऽआग्नेयाः शितिभ्रवो वसूनाꣳरोहिता रुद्राणाꣳश्वेताऽ
अवरोकिणऽआदित्यानां नभोरूपाः पार्जन्याः ॥६॥
उन्नतऽऋषभो वामनस्तऽऐन्द्रावैष्णवाऽउन्नतः शितिबाहुः
शितिपृष्ठस्तऽऐन्द्राबार्हस्पत्याः शुकरूपा वाजिनाः
कल्माषाऽआग्निमारुताः श्यामाः पौष्णाः ॥७॥
एताऽऐन्द्राग्ना द्विरूपाऽअग्नीषोमीया वामनाऽअनड्वाहऽ
आग्नावैष्णवा वशा मैत्रावरुण्योऽन्यतऽएन्यो मैत्र्यः ॥८॥
कृष्णग्रीवाऽआग्नेया बभ्रवः सौम्याः श्वेता वायव्याऽअविज्ञाताऽ
अदित्यै सरूपा धात्रे वत्सतर्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥९॥
कृष्णा भौमा धूम्राऽआन्तरिक्षा बृहन्तो दिव्याः शबला
वैद्युताः सिध्मास्तारकाः ॥१०॥
धूम्रान् वसन्तायालभते श्वेतान् ग्रीष्माय कृष्णान्
वर्षाभ्योऽरुणाञ्छरदे पृषतो हेमन्ताय पिशङ्गाञ्छिशिराय ॥११॥
त्र्यवयो गायत्र्यै पञ्चावयस्त्रिष्टुभे दित्यवाहो जगत्यै
त्रिवत्साऽअनुष्टुभे तुर्यवाहऽउष्णिहे ॥१२॥

पृष्ठवाहो विराजऽउक्षाणो बृहत्याऽऋषभाः ककुभेऽनड्वाहः
पङ्क्त्यै धेनवोऽतिच्छन्दसे ॥१३॥
कृष्णग्रीवाऽआग्नेया बभ्रवः सौम्याऽउपध्वस्ताः सावित्रा
वत्सतर्यः सारस्वत्यः श्यामाः पौष्णाः पृश्नयो मारुता
बहुरूपा वैश्वदेवा वशा द्यावापृथिवीयाः ॥१४॥
उक्ताः सञ्चराऽएताऽऐन्द्राग्नाः कृष्णा वारुणाः पृश्नयो
मारुताः कायास्तूपराः ॥१५॥
अग्नयेऽनीकवते प्रथमजानालभते मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः सवात्यान्
मरुद्भ्यो गृहमेधिभ्यो बष्किहान् मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः सꣳसृष्टान्
मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्योऽनुसृष्टान् ॥१६॥
उक्ताः सञ्चराऽएताऽऐन्द्राग्नाः प्राशृङ्गा माहेन्द्रा बहुरूपा वैश्वकर्मणाः ॥१७॥
धूम्रा बभ्रुनीकाशाः पितृणाꣳसोमवतां बभ्रवो धूम्रनीकाशाः
पितृणां बर्हिषदां कृष्णा बभ्रुनीकाशाः पितृणामग्निष्वात्तानां
कृष्णाः पृषन्तस्त्रैयम्बकाः ॥१८॥
उक्ताः सञ्चराऽएताः शुनासीरीयाः श्वेता वायव्याः श्वेताः सौर्याः ॥१९॥
वसन्ताय कपिञ्जलानालभते ग्रीष्माय कलविङ्कान्
वर्षाभ्यस्तित्तिरीञ्छरदे वर्त्तिका हेमन्ताय ककराञ्छिशिराय विककरान् ॥२०॥
समुद्राय शिशुमारानालभते पर्जन्याय मण्डूकानद्भ्यो मत्स्यान्
मित्राय कुलीपयान् वरुणाय नाक्रान् ॥२१॥
सोमाय हꣳसानालभते वायवे बलाकाऽइन्द्राग्निभ्यां क्रुञ्चान्
मित्राय मद्गून् वरुणाय चक्रवाकान् ॥२२॥
अग्नये कुटरूनालभते वनस्पतिभ्यऽउलूकानग्नीषोमाभ्यां
चाषानश्विभ्यां मयूरान् मित्रावरुणाभ्यां कपोतान् ॥२३॥
सोमाय लबानालभते त्वष्ट्रे कौलीकान् गोषादीर्देवानां पत्नीभ्यः
कुलीका देवजामिभ्योऽग्नये गृहपतये पारुष्णान् ॥२४॥

अह्ने पारावतानालभते रात्र्यै सीचापूरहोरात्रयोः सन्धिभ्यो
जतूर्मासेभ्यो दात्यौहान्त्संवत्सराय महतः सुपर्णान् ॥२५॥
भूम्याऽआखूनालभतेऽन्तरिक्षाय पाङ्क्त्रान् दिवे कशान् दिग्भ्यो
नकुलान् बभ्रुकानवान्तरदिशाभ्यः ॥२६॥
वसुभ्यऽऋश्यानालभते रुद्रेभ्यो रुरूनादित्येभ्यो न्यङ्कून्
विश्वेभ्यो देवेभ्यः पृषतान्त्साध्येभ्यः कुलुङ्गान् ॥२७॥
ईशानाय परस्वतऽआलभते मित्राय गौरान् वरुणाय महिषान्
बृहस्पतये गवयाँस्त्वष्ट्रऽउष्ट्रान् ॥२८॥
प्रजापतये पुरुषान् हस्तिनऽआलभते वाचे प्लुषीँश्चक्षुषे
मशकाञ्छ्रोत्राय भृङ्गाः ॥२९॥
प्रजापतये च वायवे च गोमृगो वरुणायारण्यो मेषो यमाय कृष्णो
मनुष्यराजाय मर्कटः शार्दूलाय रोहिदृषभाय गवयी क्षिप्रश्येनाय
वर्त्तिका नीलङ्गोः क्रिमिः समुद्राय शिशुमारो हिमवते हस्ती ॥३०॥
मयुः प्राजापत्यऽउलो हलिक्ष्णो वृषदꣳशस्ते धात्रे दिशां कङ्को
धुङ्क्षाग्नेयी कलविङ्को लोहिताहिः पुष्करसादस्ते त्वाष्ट्रा वाचे क्रुञ्चः ॥३१॥
सोमाय कुलुङ्गऽआरण्योऽजो नकुलः शका ते पौष्णाः
क्रोष्टा मायोरिन्द्रस्य गौरमृगः पिद्वो न्यङ्कुः कक्कटस्तेऽनुमत्यै
प्रतिश्रुत्कायै चक्रवाकः ॥३२॥
सौरी बलाका शार्गः सृजयः शयाण्डकस्ते मैत्राः सरस्वत्यै
शारिः पुरुषवाक् श्वाविद्भौमी शार्दूलो वृकः पृदाकुस्ते मन्यवे
सरस्वते शुकः पुरुषवाक् ॥३३॥
सुपर्णः पार्जन्यऽआतिर्वाहसो दर्विदा ते वायवे बृहस्पतये
वाचस्पतये पैङ्गराजोऽलजऽआन्तरिक्षः प्लवो मद्गुर्मत्स्यस्ते
नदीपतये द्यावापृथिवीयः कूर्मः ॥३४॥

पुरुषमृगश्चन्द्रमसो गोधा कालका दार्वाघाटस्ते
वनस्पतीनां कृकवाकुः सावित्रो हꣳसो वातस्य
नाक्रो मकरः कुलीपयस्तेऽकूपारस्य ह्रियै शल्यकः॥३५॥
एण्यह्नो मण्डूको मूषिका तित्तिरिस्ते सर्पाणां
लोपाशऽआश्विनः कृष्णो रात्र्याऽऋक्षो जतूः
सुषिलीका तऽइतरजनानां जहका वैष्णवी ॥३६॥
अन्यवापोऽर्द्धमासानामृश्यो मयूरः सुपर्णस्ते
गन्धर्वाणामपामुद्रो मासाङ्कश्यपो रोहित्कुण्डृणाची
गोलत्तिका तेऽप्सरसां मृत्यवेऽसितः ॥३७॥
वर्षाहूर्ऋतूनामाखुः कशो मान्थालस्ते पितॄणां
बलायाजगरो वसूनां कपिञ्जलः कपोतऽउलूकः
शशस्ते निर्ऋत्यै वरुणायारण्यो मेषः ॥३८॥
श्वित्रऽआदित्यानामुष्ट्रो घृणीवान्वार्ध्रीनसस्ते
मत्याऽअरण्याय सृमरो रुरू रौद्रः क्वयिः
कुटरुर्दात्यौहस्ते वाजिनां कामाय पिकः ॥३९॥
खड्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते
रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिꣳहो मारुतः कृकलासः पिप्पका
शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः ॥४०॥

इति चतुर्विंशोऽध्यायः॥

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—प्रजापतिः १-१६, २३, २७। गोतमः १७-२२, २४-२६, २८-४७॥

देवता—सरस्वत्यादयः १। प्राणादयः २। इन्द्रादयः ३, ५, ८। अग्न्यादयः ४। मरुतादयः ६। पूषादयः ७, ९। हिरण्यगर्भः १०। ईश्वरः ११, १२, १८, १९। परमात्मा १३। यज्ञः १४, २६-२९, ३१-३४, ३६, ३८, ४०, ४१। विद्वांसः १५, २०-२२, २५, ३०, ३७, ३९। विश्वेदेवाः १६, ३५, ४६। वायुः १७। द्यौरित्यादयः २३। मित्रादयः २४। यजमानः ४२। आत्मा ४३, ४४। प्रजा ४५। अग्निः ४७॥

छन्दः—भुरिक्शक्वरी १[क], ४६। निचृदतिशक्वरी १[र]। भुरिगतिशक्वर्यौ २। भुरिक्कृतिः ३। स्वराड्धृतिः ४। स्वराड्विकृतिः ५। निचृदतिधृतिः ६। निचृदष्टिः ७। निचृदभिकृतिः ८। भुरिगत्यष्टिः ९। त्रिष्टुप् १०, ११, २२, २३, २७, ३०, ३१, ४१। स्वराट्पङ्क्तिः १२, ३७, ४२, ४५। निचृत्त्रिष्टुप् १३, २१, २४, २५, ३२, ३३, ४०, ४३। निचृज्जगती १४, १८, २६। जगती १५, १६, २०। भुरिक्त्रिष्टुप् १७, २९, ३४, ४४। स्वराड्बृहती १९। विराट्त्रिष्टुप् २८। स्वराट्त्रिष्टुप् ३५। भुरिक्पङ्क्तिः ३६, ३८। विराट्पङ्क्तिः ३९। शक्वरी ४७॥

स्वरः—धैवतः १[क], १०, ११, १३, १७, २१-२५, २७-३५, ४०, ४१, ४३, ४४, ४६, ४७। पञ्चमः १[र], २, १२, ३६-३९, ४२, ४५। निषादः ३, १४-१६, १८, २०, २६। ऋषभः ४, ८। मध्यमः ५, ७, १९। षड्जः ६। गान्धारः ९॥

[क]शादं दद्भिरवकां दन्तमूलैर्मृदं बस्वैस्तेगान्दꣳष्ट्राभ्याꣳ सरस्वत्याऽ
अग्रजिह्वं जिह्वायाऽउत्सादमवक्रन्देन तालु वाजꣳहनुभ्यामपऽआस्येन
वृषणमाण्डाभ्यामादित्याँ श्मश्रुभिः पन्थानं भ्रूभ्यां द्यावापृथिवी
वर्त्तोभ्यां विद्युतं कनीनकाभ्याꣳ शुक्लाय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा
पार्याणि पक्ष्माण्यवार्याऽइक्षवोऽवार्याणि पक्ष्माणि पार्याऽइक्षवः ॥१॥
वातं प्राणेनापानेन नासिकेऽउपयाममधरेणौष्ठेन सदुत्तरेण
प्रकाशेनान्तरमनूकाशेन बाह्यं निवेष्यं मूर्ध्ना स्तनयित्नुं निर्बाधेनाशनिं
मस्तिष्केण विद्युतं कनीनकाभ्यां कर्णाभ्याꣳ श्रोत्रꣳ श्रोत्राभ्यां कर्णौ
तेदनीमधरकण्ठेनापः शुष्ककण्ठेन चित्तं मन्याभिरदितिꣳ शीर्ष्णा
निर्ऋतिं निर्जर्जल्येन शीर्ष्णा संक्रोशैः प्राणान् रेष्माणꣳ स्तुपेन ॥२॥

मशकान् केशैरिन्द्रꣳस्वपसा वहेन बृहस्पतिꣳशकुनिसादेन
कूर्माञ्छफैराक्रमणꣳस्थूराभ्यामृक्षलाभिः कपिञ्जलाञ्जवं
जङ्घाभ्यामध्वानं बाहुभ्यां जाम्बीलेनारण्यमग्निमतिरुग्भ्यां
पूषणं दोर्भ्यामश्विनावꣳसाभ्याꣳरुद्रꣳरोराभ्याम् ॥३॥
अग्नेः पक्षतिर्वायोर्निपक्षतिरिन्द्रस्य तृतीया सोमस्य चतुर्थ्यदित्यै
पञ्चमीन्द्राण्यै षष्ठी मरुताꣳसप्तमी बृहस्पतेरष्टम्यर्यम्णो नवमी
धातुर्दशमीन्द्रस्यैकादशी वरुणस्य द्वादशी यमस्य त्रयोदशी ॥४॥
इन्द्राग्न्योः पक्षतिः सरस्वत्यै निपक्षतिर्मित्रस्य तृतीयापां चतुर्थी
निर्ऋत्यै पञ्चम्यग्नीषोमयोः षष्ठी सर्पाणाꣳसप्तमी विष्णोरष्टमी
पूष्णो नवमी त्वष्टुर्दशमीन्द्रस्यैकादशी वरुणस्य द्वादशी यम्यै
त्रयोदशी द्यावापृथिव्योर्दक्षिणं पार्श्वं विश्वेषां देवानामुत्तरम् ॥५॥
मरुताꣳस्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसा रुद्राणां द्वितीयादित्यानां
तृतीया वायोः पुच्छमग्नीषोमयोर्भासदौ क्रुञ्चौ श्रोणिभ्यामिन्द्राबृहस्पतीऽ
ऊरुभ्यां मित्रावरुणावल्गाभ्यामाक्रमणꣳस्थूराभ्यां बलं कुष्ठाभ्याम् ॥६॥
पूष्णं वनिष्ठुनान्धाहीन्त्स्थूलगुदया सर्पान् गुदाभिर्विह्रुतऽआन्त्रैरपो
वस्तिना वृषणमाण्डाभ्यां वाजिनꣳशेपेन प्रजाꣳरेतसा चाषान् पित्तेन
प्रदरान् पायुना कूश्माञ्छकपिण्डैः ॥७॥
इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवोऽदित्यै भसज्जीमूतान्
हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभऽउदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां
दिवं वृक्काभ्यां गिरीन् प्लाशिभिरुपलान् प्लीह्ना वल्मीकान्
क्लोमभिर्ग्लौभिर्गुल्मान् हिराभिः स्त्रवन्तीर्ह्रदान् कुक्षिभ्याꣳसमुद्र-
मुदरेण वैश्वानरं भस्मना ॥८॥
विधृतिं नाभ्या घृतꣳरसेनापो यूष्णा मरीचीर्विप्रुड्भिर्नीहारमूष्मणा
शीनं वसया प्रुष्वाऽअश्रुभिर्ह्रादुनीर्दूषीकाभिरस्ना रक्षाꣳसि
चित्राण्यङ्गैर्नक्षत्राणि रूपेण पृथिवीं त्वचा जुम्बकाय स्वाहा ॥९॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१०॥
यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव ।
यऽईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥११॥
यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रꣳरसया सहाहुः ।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१२॥
यऽआत्मदा बलदा यस्य विश्वऽउपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१३॥
आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः ।
देवा नो यथा सदमिद् वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥१४॥
देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳरातिरभि नो निवर्त्तताम् ।
देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥१५॥
तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम् ।
अर्यमणं वरुणꣳसोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥१६॥
तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः ।
तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम् ॥१७॥
तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥१८॥
स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥१९॥
पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः ।
अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवाऽअवसागमन्निह ॥२०॥
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२१॥

शतमिन्नु शरदोऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् ।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥२२॥
अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।
विश्वेदेवाऽअदितिः पञ्च जनाऽअदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥२३॥
मा नो मित्रो वरुणोऽअर्यमायुरिन्द्रऽऋभुक्षा मरुतः परिख्यन् ।
यद्वाजिनो देवजातस्य सप्तेः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि ॥२४॥
यन्निर्णिजा रेक्णसा प्रावृतस्य रातिं गृभीतां मुखतो नयन्ति ।
सुप्राङजो मेम्यद्विश्वरूपऽइन्द्रापूष्णोः प्रियमप्येति पाथः ॥२५॥
एष छागः पुरोऽअश्वेन वाजिना पूष्णो भागो नीयते विश्वदेव्यः ।
अभिप्रियं यत्पुरोडाशमर्वता त्वष्टेदेनꣳसौश्रवसाय जिन्वति ॥२६॥
यद्धविष्यमृतुशो देवयानं त्रिर्मानुषाः पर्यश्वं नयन्ति ।
अत्रा पूष्णः प्रथमो भागऽएति यज्ञं देवेभ्यः प्रतिवेदयन्नजः ॥२७॥
होताध्वर्युरावयाऽअग्निमिन्धो ग्रावग्राभऽउत शꣳस्ता सुविप्रः ।
तेन यज्ञेन स्वरङ्कृतेन स्विष्टेन वक्षणा आपृणध्वम् ॥२८॥
यूपव्रस्काऽउत ये यूपवाहाश्चषालं येऽअश्वयूपाय तक्षति ।
ये चार्वते पचनꣳसम्भरन्त्युतो तेषामभिगूर्त्तिर्नऽइन्वतु ॥२९॥
उपप्रागात्सुमन्मेऽधायि मन्म देवानामाशाऽउप वीतपृष्ठः ।
अन्वेनं विप्राऽऋषयो मदन्ति देवानां पुष्टे चकृमा सुबन्धुम् ॥३०॥
यद्वाजिनो दाम सन्दानमर्वतो या शीर्षण्या रशना रज्जुरस्य ।
यद्वा घास्य प्रभृतमास्ये तृणꣳसर्वा ता तेऽअपि देवेष्वस्तु ॥३१॥
यदश्वस्य क्रविषो मक्षिकाश यद्वा स्वरौ स्वधितौ रिप्तमस्ति ।
यद्धस्तयोः शमितुर्यन्नखेषु सर्वा ता तेऽअपि देवेष्वस्तु ॥३२॥
यदूवध्यमुदरस्यापवाति यऽआमस्य क्रविषो गन्धोऽअस्ति ।
सुकृता तच्छमितारः कृण्वन्तूत मेधꣳशृतपाकं पचन्तु ॥३३॥

यत्ते गात्रादग्निना पच्यमानादभि शूलं निहतस्यावधावति ।
मा तद्भूम्यामाश्रिषन्मा तृणेषु देवेभ्यस्तदुशद्भ्यो रातमस्तु ॥३४॥
ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं यऽईमाहुः सुरभिर्निर्हरेति ।
ये चार्वतो माꣳसभिक्षामुपासतऽउतो तेषामभिगूर्त्तिर्नऽइन्वतु ॥३५॥
यन्नीक्षणं माँस्पचन्याऽउखाया या पात्राणि यूष्णऽआसेचनानि ।
ऊष्मण्यापिधाना चरूणामङ्काः सूनाः परिभूषन्त्यश्वम् ॥३६॥
मा त्वाग्निर्ध्वनयीद् धूमगन्धिर्मोखा भ्राजन्त्यभिविक्त जघ्रिः ।
इष्टं वीतमभिगूर्त्तं वषट्कृतं तं देवासः प्रतिगृभ्णन्त्यश्वम् ॥३७॥
निक्रमणं निषदनं विवर्त्तनं यच्च पड्वीशमर्वतः ।
यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता तेऽअपि देवेष्वस्तु ॥३८॥
यदश्वाय वासऽउपस्तृणन्त्यधीवासं या हिरण्यान्यस्मै ।
सन्दानमर्वन्तं पड्वीशं प्रिया देवेष्वायामयन्ति ॥३९॥
यत्ते सादे महसा शूकृतस्य पार्ष्ण्या वा कशया वा तुतोद ।
स्रुचेव ता हविषोऽअध्वरेषु सर्वा ता ते ब्रह्मणा सूदयामि ॥४०॥
चतुस्त्रिꣳशद्वाजिनो देवबन्धोर्वङ्क्रीरश्वस्य स्वधितिः समेति ।
अच्छिद्रा गात्रा वयुना कृणोत परुष्परुरनुघुष्या विशस्त ॥४१॥
एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथऽऋतुः ।
या ते गात्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्नौ ॥४२॥
मा त्वा तपत्प्रियऽआत्मापियन्तं मा स्वधितिस्तन्वऽआतिष्ठिपत्ते ।
मा ते गृध्नुरविशस्तातिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः ॥४३॥
न वाऽउऽएतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ२॥ऽइदेषि पथिभिः सुगेभिः ।
हरी ते युञ्जा पृषतीऽअभूतामुपास्थाद्वाजी धुरि रासभस्य ॥४४॥
सुगव्यं नो वाजी स्वश्व्यं पुꣳसः पुत्राँ२॥ऽउत विश्वापुषꣳरयिम् ।
अनागास्त्वं नोऽअदितिः कृणोतु क्षत्रं नोऽअश्वो वनताꣳहविष्मान् ॥४५॥

इमा नु कं भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ।
आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् ।
यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चादित्यैरिन्द्रः सह सीषधाति ॥४६॥
अग्ने त्वं नोऽअन्तमऽउत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः ।
वसुरग्निर्वसुश्रवाऽअच्छा नक्षि द्युमत्तमꣳरयिं दाः ।
तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥४७॥

इति पञ्चविंशोऽध्यायः॥

अथ षड्विंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—याज्ञवल्क्यः १। लौगाक्षिः २। गृत्समदः ३, २४। रम्याक्षी ४, ५। प्रादुराक्षिः ६। कुत्सः ७-९। वसिष्ठः १०। नोधा गोतमः ११, १२। भारद्वाजः १३, १४। वत्सः १५। महीयवः १६-१८। मुद्गलः १९। मेधातिथिः २०-२३। मधुच्छन्दाः २५, २६॥

देवता—अग्न्यादयः १। ईश्वरः २, ३। इन्द्रः ४, १०, १७। सूर्यः ५। वैश्वानरः ६, ८, ९। वैश्वानरोऽग्निः ७। अग्निः ११-१३, १६, २६। संवत्सरः १४। विद्वान् १५, १८, २०, २१, २३, २४। विद्वांसः १९। सोमः २२, २५॥

छन्दः—अभिकृतिः १। विराडत्यष्टिः २, ७। भुरिगत्यष्टिः ३। स्वराड्जगती ४, ९। भुरिग्जगती ५। जगती ६, ८, २४। निचृज्जगती १०। बृहती ११। विराडनुष्टुप् १२। विराड्गायत्री १३, १५, १८। भुरिग्बृहती १४। निचृद्गायत्री १६, १७। त्रिष्टुप् १९। गायत्री २०-२२, २५, २६। भुरिक्पङ्क्तिः २३॥

स्वरः—ऋषभः १। गान्धारः २, ३, ७, १२। निषादः ४-६, ८-१०, २४। मध्यमः ११, १४। षड्जः १३, १५-१८, २०-२२, २५, २६। धैवतः १९। पञ्चमः २३॥

अग्निश्च पृथिवी च सन्नते ते मे सं नमतामदो वायुश्चान्तरिक्षं च
सन्नते ते मे सं नमतामदऽआदित्यश्च द्यौश्च सन्नते ते मे सं
नमतामदऽआपश्च वरुणश्च सन्नते ते मे सं नमतामदः । सप्त सꣳसदोऽ
अष्टमी भूतसाधनी । सकामाँ२॥ऽअध्वनस्कुरु संज्ञानमस्तु मेऽमुना ॥१॥
यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय
चार्य्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह
भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ॥२॥
बृहस्पतेऽअति यदर्योऽअर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ।
यद्दीदयच्छवसऽ ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।
उपयामगृहीतोऽसि बृहस्पतये त्वैष ते योनिर्बृहस्पतये त्वा ॥३॥
इन्द्र गोमन्निहायाहि पिबा सोमꣳशतक्रतो । विद्यद्भिर्ग्रावभिः सुतम् ।
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा गोमतऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा गोमते ॥४॥

इन्द्रायाहि वृत्रहन् पिबा सोमꣳशतक्रतो । गोमद्भिर्ग्रावभिः सुतम् ।
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा गोमतऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा गोमते ॥५॥
ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् । अजस्त्रं घर्ममीमहे ।
उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा ॥६॥
वैश्वानरस्य सुमतौ स्याम राजा हि कं भुवनानामभिश्रीः ।
इतो जातो विश्वमिदं विचष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण ।
उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा ॥७॥
वैश्वानरो नऽऊतयऽआप्रयातु परावतः । अग्निरुक्थेन वाहसा ।
उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा ॥८॥
अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयम् ।
उपयामगृहीतोऽस्यग्नये त्वा वर्चसऽएष ते योनिरग्नये त्वा वर्चसे ॥९॥
महाँ२॥ऽइन्द्रो वज्रहस्तः षोडशी शर्म यच्छतु ।
हन्तु पाप्मानं योऽस्मान्द्वेष्टि ।
उपयामगृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वैष ते योनिर्महेन्द्राय त्वा ॥१०॥
तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनवऽइन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥११॥
यद्वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो ।
महिषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजाऽउदीरते ॥१२॥
एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्नऽइत्थेतरा गिरः ।
एभिर्वर्द्धासऽइन्दुभिः ॥१३॥
ऋतवस्ते यज्ञं वितन्वन्तु मासा रक्षन्तु ते हविः ।
संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः प्रजां च परिपातु नः ॥१४॥
उपह्वरे गिरीणाꣳसङ्गमे च नदीनाम् ।
धिया विप्रोऽअजायत ॥१५॥

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्याददे ।
उग्रꣳशर्म महि श्रवः ॥१६॥
स नऽइन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
वरिवोवित्परिस्त्रव ॥१७॥
एना विश्वान्यर्यऽआ द्युम्नानि मानुषाणाम् ।
सिषासन्तो वनामहे ॥१८॥
अनु वीरैरनु पुष्यास्म गोभिरन्वश्वैरनु सर्वेण पुष्टैः ।
अनु द्विपदानु चतुष्पदा वयं देवा नो यज्ञमृतुथा नयन्तु ॥१९॥
अग्ने पत्नीरिहावह देवानामुशतीरुप ।
त्वष्टारꣳसोमपीतये ॥२०॥
अभि यज्ञं गृणीहि नो ग्नावो नेष्टः पिबऽऋतुना ।
त्वꣳहि रत्नधाऽअसि ॥२१॥
द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत ।
नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ॥२२॥
तवायꣳसोमस्त्वमेह्यर्वाङ् शश्वत्तमꣳसुमनाऽअस्य पाहि ।
अस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्या दधिष्वेमं जठरऽइन्दुमिन्द्र ॥२३॥
अमेव नः सुहवाऽआ हि गन्तन नि बर्हिषि सदतना रणिष्टन ।
अथा मन्दस्व जुजुषाणोऽअन्धसस्त्वष्टर्देवेभिर्जनिभिः सुमद्गणः ॥२४॥
स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया ।
इन्द्राय पातवे सुतः ॥२५॥
रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहते ।
द्रोणे सधस्थमासदत् ॥२६॥

इति षड्विंशोऽध्यायः॥

अथ सप्तविंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—अग्निः १-७, १०-२०। प्रजापतिः ८, ९, २१, २२। वसिष्ठः २३, २४, २७, २८, ३५। हिरण्यगर्भः २५, २६। गृत्समदः २९, ३२, ३३। पुरुमीढः ३०। अजमीढः ३१। अङ्गिरसः ३४। शँयुर्बार्हस्पत्यः ३६-३८। वामदेवः ३९-४१। शँयुः ४२, ४४, ४५। भार्गवः ४३॥

देवता—अग्निः १, ३-७, ११, १८, ३९, ४३, ४५। सामिधेन्यः २। विश्वेदेवाः ८, १२। अश्व्यादयः ९। सूर्यः १०। यज्ञः १३, १७, ४२। वह्निः १४। वायुः १५, २३, २४, २७-३५, ४४। देव्यः १६। इडादयो लिङ्गोक्ताः १९। त्वष्टा २०। विद्वांसः २१। इन्द्रः २२, ३७, ३८, ४०, ४१। प्रजापतिः २५, २६। परमेश्वरः ३६॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १, २, ८, ९, २४, २६, २८। विराट्त्रिष्टुप् ३, ३३। स्वराट्त्रिष्टुप् ४, २५। स्वराट्पङ्क्तिः ५, २७। भुरिग्बृहती ६। निचृज्जगती ७। विराडनुष्टुप् १०। उष्णिक् ११, १२। निचृदुष्णिक् १३, १६, १७, २०, २२। भुरिगुष्णिक् १४। स्वराडुष्णिक् १५। भुरिग्गायत्री १८। गायत्री १९, ३१, ३२, ३९। विराडुष्णिक् २१। निचृत्त्रिष्टुप् २३। निचृद्गायत्री २९, ३४, ४०। अनुष्टुप् ३०। विराडनुष्टुप् ३५, ४३। निचृत्पङ्क्तिः ३६। निचृदनुष्टुप् ३७। स्वराड्बृहती ३८, ४४। पादनिचृद्गायत्री ४१। बृहती ४२। निचृदभिकृतिः ४५॥

स्वरः—धैवतः १-४, ८, ९, २३-२६, २८, ३३। पञ्चमः ५, २७, ३६। मध्यमः ६, ३८, ४२, ४४। निषादः ७। गान्धारः १०, ३०, ३५, ३७, ४३। ऋषभः ११-१७, २०-२२, ४५। षड्जः १८, १९, २९, ३१, ३२, ३४, ३९-४१॥

समास्त्वाग्नऽऋतवो वर्द्धयन्तु संवत्सराऽऋषयो यानि सत्या ।
सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वाऽआभाहि प्रदिशश्चतस्रः ॥१॥
सं चेध्यस्वाग्ने प्र च बोधयैनमुच्च तिष्ठ महते सौभगाय ।
मा च रिषदुपसत्ता तेऽअग्ने ब्रह्माणस्ते यशसः सन्तु माऽन्ये ॥२॥
त्वामग्ने वृणते ब्राह्मणाऽइमे शिवोऽअग्ने संवरणे भवा नः ।
सपत्नहा नोऽअभिमातिजिच्च स्वे गये जागृह्यप्रयुच्छन् ॥३॥
इहैवाग्नेऽअधिधारया रयिं मा त्वा निक्रन्पूर्वचितो निकारिणः ।
क्षत्रमग्ने सुयममस्तु तुभ्यमुपसत्ता वर्द्धतां तेऽअनिष्टृतः ॥४॥

क्षत्रेणाग्ने स्वायुः सꣳरभस्व मित्रेणाग्ने मित्रधेये यतस्व ।
सजातानां मध्यमस्थाऽएधि राज्ञामग्ने विहव्यो दीदिहीह ॥५॥
अति निहोऽअति स्रिधोऽत्यचित्तिमत्यरातिमग्ने ।
विश्वा ह्यग्ने दुरिता सहस्वाथास्मभ्यꣳसहवीराꣳरयिं दाः ॥६॥
अनाधृष्यो जातवेदाऽअनिष्टृतो विराडग्ने क्षत्रभृद्दीदिहीह ।
विश्वाऽआशाः प्रमुञ्चन्मानुषीर्भियः शिवेभिरद्य परिपाहि नो वृधे ॥७॥
बृहस्पते सवितर्बोधयैनꣳसꣳशितं चित्सन्तराꣳसꣳशिशाधि ।
वर्धयैनं महते सौभगाय विश्वऽएनमनुमदन्तु देवाः ॥८॥
अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पतेऽअभिशस्तेरमुञ्चः ।
प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद्देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ॥९॥
उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१०॥
ऊर्ध्वाऽअस्य समिधो भवन्त्यूर्ध्वा शुक्रा शोचीꣳष्यग्नेः ।
द्युमत्तमा सुप्रतीकस्य सूनोः ॥११॥
तनूनपादसुरो विश्ववेदा देवो देवेषु देवः । पथो अनक्तु मध्वा घृतेन ॥१२॥
मध्वा यज्ञं नक्षसे प्रीणानो नराशꣳसो अग्ने ।
सुकृद्देवः सविता विश्ववारः ॥१३॥
अच्छायमेति शवसा घृतेनेडानो वह्निर्नमसा ।
अग्निꣳस्रुचोऽअध्वरेषु प्रयत्सु ॥१४॥
स यक्षदस्य महिमानमग्नेः सऽईं मन्द्रा सुप्रयसः ।
वसुश्चेतिष्ठो वसुधातमश्च ॥१५॥
द्वारो देवीरन्वस्य विश्वे व्रता ददन्तेऽअग्नेः ।
उरुव्यचसो धाम्ना पत्यमानाः ॥१६॥
तेऽअस्य योषणे दिव्ये न योनाऽउषासानक्ता ।
इमं यज्ञमवतामध्वरं नः ॥१७॥

दैव्या होताराऽऊर्ध्वमध्वरं नोऽग्नेर्जिह्वामभिगृणीतम् ।
कृणुतं नः स्विष्टिम् ॥१८॥
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदꣳसदन्त्विडा सरस्वती भारती । मही गृणाना ॥१९॥
तन्नस्तुरीपमद्भुतं पुरुक्षु त्वष्टा सुवीर्यम् । रायस्पोषं विष्यतु नाभिमस्मे ॥२०॥
वनस्पतेऽवसृजा रराणस्त्मना देवेषु । अग्निर्हव्यꣳशमिता सूदयाति ॥२१॥
अग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेदऽइन्द्राय हव्यम् ।
विश्वे देवा हविरिदं जुषन्ताम् ॥२२॥
पीवोऽअन्ना रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः ।
ते वायवे समनसो वितस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः ॥२३॥
राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम् ।
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वाऽउत श्वेतं वसुधितिं निरेके ॥२४॥
आपो ह यद् बृहतीर्विश्वमायन् गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम् ।
ततो देवानाꣳसमवर्त्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२५॥
यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद्दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम् ।
यो देवेष्वधि देवऽएकऽआसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२६॥
प्र याभिर्यासि दाश्वाꣳसमच्छा नियुद्भिर्वायविष्टये दुरोणे ।
नि नो रयिꣳसुभोजसं युवस्व नि वीरं गव्यमश्व्यं च राधः ॥२७॥
आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳसहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ।
वायोऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२८॥
नियुत्वान्वायवागह्ययꣳशुक्रोऽअयामि ते । गन्तासि सुन्वतो गृहम् ॥२९॥
वायो शुक्रोऽअयामि ते मध्वोऽअग्रं दिविष्टिषु ।
आयाहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ॥३०॥
वायुरग्रेगा यज्ञप्रीः साकं गन्मनसा यज्ञम् । शिवो नियुद्भिः शिवाभिः ॥३१॥
वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान्त्सोमपीतये ॥३२॥
एकया च दशभिश्च स्वभूते द्वाभ्यामिष्टये विꣳशती च ।
तिसृभिश्च वहसे त्रिꣳशता च नियुद्भिर्वायविह ता विमुञ्च ॥३३॥

तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत । अवाꣳस्यावृणीमहे ॥३४॥
अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धाऽइव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥३५॥
न त्वावाँ२॥ऽअन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥३६॥
त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ॥३७॥
स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया मह स्तवानोऽअद्रिवः ।
गामश्वꣳरथ्यमिन्द्र संकिर सत्रा वाजं न जिग्युषे ॥३८॥
कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥३९॥
कस्त्वा सत्यो मदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढा चिदारुजे वसु ॥४०॥
अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतं भवास्यूतये ॥४१॥
यज्ञायज्ञा वोऽअग्नये गिरागिरा च दक्षसे ।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शꣳसिषम् ॥४२॥
पाहि नोऽअग्नऽएकया पाह्युत द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥४३॥
ऊर्जो नपातꣳस हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये ।
भुवद्वाजेष्वविता भुवद् वृधऽउत त्राता तनूनाम् ॥४४॥
संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसीदावत्सरोऽसीद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि ।
उषसस्ते कल्पन्तामहोरात्रास्ते कल्पन्तामर्द्धमासास्ते कल्पन्तां मासास्ते
कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्ताꣳसंवत्सरस्ते कल्पताम् । प्रेत्याऽएत्यै सं चाञ्च
प्र च सारय । सुपर्णचिदसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद ॥४५॥

इति सप्तविंशोऽध्यायः॥

अथाष्टाविंशोऽध्यायः

—:0:—

ऋषिः—बृहदुक्थो वामदेवः १-६। गोतमः ७। बृहदुक्थो वामदेव्यः ८। प्रजापतिः ९-११। अश्विनौ १२-२३। सरस्वती २४-४६॥

देवता—इन्द्रः १-३, ५, ६, ८, ९, ११-१३, १५, १६, १८-२१, २५-२८, ३२, ३३, ३५-४६। रुद्रः ४। अश्विनौ ७, १७, ३०। बृहस्पतिः १०। अहोरात्रे १४, २९। अग्निः २२-२४, ३४। वाण्यः ३१॥

छन्दः—निचृत्त्रिष्टुप् १, ४, २२। निचृदतिजगती २, ५, ९, १२, ४२, ४३। स्वराट्पङ्क्तिः ३, १४। त्रिष्टुप् ६, २१। जगती ७। निचृज्जगती ८। स्वराडतिजगती १०, २७, ४५। निचृच्छक्वरी ११, २६, ३९। भुरिक्शक्वरी १३, ३०-३२। भुरिगतिजगती १५, २५, ३७, ३८, ४४। भुरिगाकृतिः १६। भुरिग्जगती १७, ४१। अतिजगती १८, ४०। कृतिः १९, २३। निचृदतिशक्वरी २०, २९। स्वराड्जगती २४। स्वराट्शक्वरी २८। निचृदत्यष्टिः ३३। अतिशक्वरी ३४। भुरिक्त्रिष्टुप् ३५, ३६। आकृतिः ४६॥

स्वरः—धैवतः १, ४, ६, ११, १३, २१, २२, २६, २८, ३०-३२, ३५, ३६, ३९। निषादः २, ५, ७-१०, १२, १५, १७-१९, २३-२५, २७, ३७, ३८, ४०-४५। पञ्चमः ३, १४, १६, २०, २९, ३४, ४६। गान्धारः ३३॥

होता यक्षत्समिधेन्द्रमिडस्पदे नाभा पृथिव्याऽअधि ।
दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यतऽओजिष्ठश्चर्षणीसहां वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥१॥
होता यक्षत्तनूनपातमूतिभिर्जेतारमपराजितम्। इन्द्रं देवꣳस्वर्विदं
पथिभिर्मधुमत्तमैर्नराशꣳसेन तेजसा वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥२॥
होता यक्षदिडाभिरिन्द्रमीडितमाजुह्वानममर्त्यम् ।
देवो देवैः सवीर्यो वज्रहस्तः पुरन्दरो वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥३॥
होता यक्षद् बर्हिषीन्द्रं निषद्वरं वृषभं नर्यापसम् ।
वसुभी रुद्रैरादित्यैः सयुग्भिर्बर्हिरासदद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥४॥
होता यक्षदोजो न वीर्यꣳसहो द्वारऽइन्द्रमवर्द्धयन्। सुप्रायणाऽअस्मिन्
यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधो द्वारऽइन्द्राय मीढुषे व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥५॥

होता यक्षदुषेऽइन्द्रस्य धेनू सुदुघे मातरा मही ।
सवातरौ न तेजसा वत्समिन्द्रमवर्द्धतां वीतामाज्यस्य होतर्यज ॥६॥
होता यक्षद्दैव्या होतारा भिषजा सखाया हविषेन्द्रं भिषज्यतः ।
कवी देवौ प्रचेतसाविन्द्राय धत्तऽइन्द्रियं वीतामाज्यस्य होतर्यज ॥७॥
होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजं त्रयस्त्रिधातवोऽपसऽइडा सरस्वती
भारती महीः। इन्द्रपत्नीर्हविष्मतीर्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥८॥
होता यक्षत्त्वष्टारमिन्द्रं देवं भिषजꣳसुयजं घृतश्रियम्। पुरुरूपꣳ
सुरेतसं मघोनमिन्द्राय त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥९॥
होता यक्षद्वनस्पतिꣳशमितारꣳशतक्रतुं धियो जोष्टारमिन्द्रियम् ।
मध्वा समञ्जन् पथिभिः सुगेभिः स्वदाति यज्ञं मधुना
घृतेन वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥१०॥
होता यक्षदिन्द्रꣳस्वाहाज्यस्य स्वाहा मेदसः स्वाहा
स्तोकानाꣳस्वाहा स्वाहाकृतीनाꣳस्वाहा हव्यसूक्तीनाम् ।
स्वाहा देवाऽआज्यपा जुषाणाऽइन्द्रऽआज्यस्य व्यन्तु होतर्यज ॥११॥
देवं बर्हिरिन्द्रꣳसुदेवं देवैर्वीरवत् स्तीर्णं वेद्यामवर्द्धयत्। वस्तोर्वृतं
प्राक्तोर्भृतꣳराया बर्हिष्मतोऽत्यगाद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥१२॥
देवीर्द्वारऽइन्द्रꣳसङ्घाते वीड्वीर्यामन्नवर्द्धयन्। आ वत्सेन तरुणेन कुमारेण
च मीवतापार्वाणꣳरेणुककाटं नुदन्तां वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥१३॥
देवीऽउषासानक्तेन्द्रं यज्ञे प्रयत्यह्वेताम् ।
दैवीर्विशः प्रायासिष्टाꣳसुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥१४॥
देवी जोष्ट्री वसुधिती देवमिन्द्रमवर्द्धताम्। अयाव्यन्याघा द्वेषाꣳस्यान्या
वक्षद्वसु वार्याणि यजमानाय शिक्षिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥१५॥
देवीऽऊर्जाहुति दुघे सुदुघे पयसेन्द्रमवर्द्धताम्। इषमूर्जमन्या वक्षत्सग्धिꣳ
सपीतिमन्या नवेन पूर्वं दयमाने पुराणेन नवमधातामूर्जमूर्जाहुतीऽऊर्ज-
यमाने वसु वार्याणि यजमानाय शिक्षिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥१६॥

देवा दैव्या होतारा देवमिन्द्रमवर्द्धताम्। हताघशꣳसावाभार्ष्टां वसु
वार्याणि यजमानाय शिक्षितौ वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥१७॥
देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिमिन्द्रमवर्द्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवꣳ
रुद्रैर्यज्ञꣳसरस्वतीडा वसुमती गृहान्वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥१८॥
देवऽइन्द्रो नराशꣳसस्त्रिवरूथस्त्रिबन्धुरो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। शतेन
शितिपृष्ठानामाहितः सहस्रेण प्र वर्त्तते मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हतो
बृहस्पति स्तोत्रमश्विनाध्वर्यवं वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥१९॥
देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो मधुशाखः सुपिप्पलो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्।
दिवमग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं पृथिवीमदृꣳहीद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥२०॥
देवं बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रमवर्द्धयत्।
स्वासस्थमिन्द्रेणासन्नमन्या बर्हीꣳष्यभ्यभूद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥२१॥
देवोऽअग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्त्स्विष्टकृत्
स्विष्टमद्य करोतु नो वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥२२॥
अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पचन् पक्तीः पचन् पुरोडाशं
बध्नन्निन्द्राय छागम्। सूपस्थाऽअद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राय छागेन।
अघत्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रभीदवीवृधत्पुरोडाशेन ॥२३॥
होता यक्षत्समिधानं महद्यशः सुसमिद्धं वरेण्यमग्निमिन्द्रं वयोधसम्।
गायत्रीं छन्दऽइन्द्रियं त्र्यविं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥२४॥
होता यक्षत्तनूनपातमुद्भिदं यं गर्भमदितिर्दधे शुचिमिन्द्रं वयोधसम्।
उष्णिहं छन्दऽइन्द्रियं दित्यवाहं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥२५॥
होता यक्षदीडेन्यमीडितं वृत्रहन्तममिडाभिरीड्यꣳसहः सोममिन्द्रं वयोधसम्।
अनुष्टुभं छन्दऽइन्द्रियं पञ्चाविं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥२६॥
होता यक्षत्सुबर्हिषं पूषण्वन्तममर्त्यꣳसीदन्तं बर्हिषि प्रियेऽमृतेन्द्रं वयोधसम्
बृहतीं छन्दऽइन्द्रियं त्रिवत्सं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥२७॥

होता यक्षद्व्यचस्वतीः सुप्रायणाऽऋतावृधो द्वारो
देवीर्हिरण्ययीर्ब्रह्माणमिन्द्रं वयोधसम्। पङ्क्तिं छन्दऽइहेन्द्रियं
तुर्यवाहं गां वयो दधद्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥२८॥
होता यक्षत्सुपेशसा सुशिल्पे बृहतीऽउभे नक्तोषासा
न दर्शते विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभं छन्दऽइहेन्द्रियं
पष्ठवाहं गां वयो दधद्वीतामाज्यस्य होतर्यज ॥२९॥
होता यक्षत्प्रचेतसा देवानामुत्तमं यशो होतारा दैव्या कवी
सयुजेन्द्रं वयोधसम्। जगतीं छन्दऽइन्द्रियमनड्वाहं गां वयो
दधद्वीतामाज्यस्य होतर्यज ॥३०॥
होता यक्षत्पेशस्वतीस्तिस्रो देवीर्हिरण्ययीर्भारतीर्बृहतीर्महीः
पतिमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दऽइहेन्द्रियं धेनुं गां न
वयो दधद्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३१॥
होता यक्षत्सुरेतसं त्वष्टारं पुष्टिवर्द्धनꣳरूपाणि
बिभ्रतं पृथक् पुष्टिमिन्द्रं वयोधसम्। द्विपदं छन्दऽ
इन्द्रियमुक्षाणं गां न वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥३२॥
होता यक्षद्वनस्पतिꣳशमितारꣳशतक्रतुꣳहिरण्यपर्णमुक्थिनꣳरशनां
बिभ्रतं वशिं भगमिन्द्रं वयोधसम्। ककुभं छन्दऽइहेन्द्रियं
वशां वेहतं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥३३॥
होता यक्षत् स्वाहाकृतीरग्निं गृहपतिं पृथग्वरुणं भेषजं
कविं क्षत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिच्छन्दसं छन्दऽइन्द्रियं
बृहदृषभं गां वयो दधद्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥३४॥
देवं बर्हिर्वयोधसं देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। गायत्र्या छन्दसेन्द्रियं
चक्षुरिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥३५॥
देवीर्द्वारो वयोधसꣳशुचिमिन्द्रमवर्द्धयन्। उष्णिहा छन्दसेन्द्रियं
प्राणमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥३६॥

देवीऽउषासानक्ता देवमिन्द्रं वयोधसं देवी देवमवर्द्धताम्। अनुष्टुभा
छन्दसेन्द्रियं बलमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥३७॥
देवी जोष्ट्री वसुधिती देवमिन्द्रं वयोधसं देवी देवमवर्द्धताम्। बृहत्या
छन्दसेन्द्रियꣳश्रोत्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥३८॥
देवीऽऊर्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रं वयोधसं देवी देवमवर्द्धताम् ।
पङ्क्त्या छन्दसेन्द्रियꣳशुक्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥३९॥
देवा दैव्या होतारा देवमिन्द्रं वयोधसं देवौ देवमवर्द्धताम् ।
त्रिष्टुभा छन्दसेन्द्रियं त्विषिमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज ॥४०॥
देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसं पतिमिन्द्रमवर्द्धयन् ।
जगत्या छन्दसेन्द्रियꣳशूषमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥४१॥
देवो नराशꣳसो देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत् ।
विराजा छन्दसेन्द्रियꣳरूपमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥४२॥
देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत् ।
द्विपदा छन्दसेन्द्रियं भगमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥४३॥
देवं बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रं वयोधसं देवं देवमवर्द्धयत् ।
ककुभा छन्दसेन्द्रियं यशऽइन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ॥४४॥
देवोऽअग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत् ।
अतिच्छन्दसा छन्दसेन्द्रियं क्षत्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने
वसुधेयस्य वेतु यज ॥४५॥
अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पचन् पक्तीः पचन् पुरोडाशं
बध्नन्निन्द्राय वयोधसे छागम्। सूपस्थाऽअद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राय
वयोधसे छागेन। अघत्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रभीदवीवृधत्पुरोडाशेन ॥४६॥

इत्यष्टाविंशोऽध्यायः॥

अथैकोनत्रिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—बृहदुक्थो वामदेव्यः १-११। भार्गवो जमदग्निः १२-२४। जमदग्निः २५-३६। मधुच्छन्दाः ३७। भारद्वाजः ३८-६०॥

देवता—अग्निः १-५, ११, १३-१८, २०, २८, ३५। मनुष्याः ६, २१, २३। अश्विनौ ७। सरस्वती ८। त्वष्टा ९। सूर्यः १०। यजमानः १२। मनुष्यः १९, २४। वायवः २२। विद्वान् २५-२७, ३४, ३८। अन्तरिक्षम् २९। स्त्रियः ३०, ३१। विद्वांसः ३२, ३६, ३७, ५८। वाक् ३३। वीराः ३९-४६, ४८-५०, ५५। धनुर्वेदाध्यापकाः ४७। महावीरः सेनापतिः ५१। सुवीरः ५२। वीरः ५३, ५४। वादयितारो वीराः ५६, ५७। अग्न्यादयः ५९, ६०॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १, ५-९, ११, १२, १७, १८, २७, ३१, ३४, ३९, ४१, ४२, ४४-४६, ४८, ५१। विराट्त्रिष्टुप् २, १४, १९, २२। पङ्क्तिः ३। निचृत्त्रिष्टुप् ४, १०, १६, २०, २४-२६, ३०, ३५, ३६, ३८, ४०, ५४। भुरिक्त्रिष्टुप् १३, ५५, ५६। भुरिक्पङ्क्तिः १५, २१, २३, २९, ३३, ५२, ५७। स्वराड्बृहती २८। आर्षीत्रिष्टुप् ३२। गायत्री ३७। जगती ४३। विराड्जगती ४७, ५३। विराडनुष्टुप् ४९, ५०। भुरिगत्यष्टिः ५८। भुरिगतिशक्वरी ५९। विराट्प्रकृतिः[क] प्रकृतिः[र] ६०॥

स्वरः—धैवतः १, २, ४-१४, १६-२०, २२, २४-२७, ३०-३२, ३४-३६, ३८-४२, ४४-४६, ४८, ५१, ५४-५६, ६०। पञ्चमः ३, १५, २१, २३, २९, ३३, ५२, ५७, ५९। मध्यमः २८। षड्जः ३७। निषादः ४३, ४७, ५३। गान्धारः ४९, ५०, ५८॥

समिद्धोऽअञ्जन् कृदरं मतीनां घृतमग्ने मधुमत् पिन्वमानः ।
वाजी वहन्वाजिनं जातवेदो देवानां वक्षि प्रियमा सधस्थम् ॥१॥
घृतेनाञ्जन्त्सं पथो देवयानान् प्रजानन्वाज्यप्येतु देवान् ।
अनु त्वा सप्ते प्रदिशः सचन्ताꣳस्वधामस्मै यजमानाय धेहि ॥२॥
ईड्यश्चासि वन्द्यश्च वाजिन्नाशुश्चासि मेध्यश्च सप्ते ।
अग्निष्ट्वा देवैर्वसुभिः सजोषाः प्रीतं वह्निं वहतु जातवेदाः ॥३॥
स्तीर्णं बर्हिः सुष्टरीमा जुषाणोरु पृथु प्रथमानं पृथिव्याम् ।
देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनं कृण्वाना सुविते दधातु ॥४॥
एताऽउ वः सुभगा विश्वरूपा वि पक्षोभिः श्रयमाणाऽउदातैः।
ऋष्वाः सतीः कवषः शुम्भमाना द्वारो देवीः सुप्रायणा भवन्तु ॥५॥

अन्तरा मित्रावरुणा चरन्ती मुखं यज्ञानामभिसंविदाने ।
उषासा वाꣳसुहिरण्ये सुशिल्पेऽऋतस्य योनाविह सादयामि ॥६॥
प्रथमा वाꣳसरथिना सुवर्णा देवौ पश्यन्तौ भुवनानि विश्वा ।
अपिप्रयं चोदना वां मिमाना होतारा ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ॥७॥
आदित्यैर्नो भारती वष्टु यज्ञꣳसरस्वती सह रुद्रैर्नऽआवीत् ।
इडोपहूता वसुभिः सजोषा यज्ञं नो देवीरमृतेषु धत्त ॥८॥
त्वष्टा वीरं देवकामं जजान त्वष्टुरर्वा जायतऽआशुरश्वः ।
त्वष्टेदं विश्वं भुवनं जजान बहोः कर्त्तारमिह यक्षि होतः ॥९॥
अश्वो घृतेन त्मन्या समक्तऽउप देवाँ२॥ऽऋतुशः पाथऽएतु ।
वनस्पतिर्देवलोकं प्रजानन्नग्निना हव्या स्वदितानि वक्षत् ॥१०॥
प्रजापतेस्तपसा वावृधानः सद्यो जातो दधिषे यज्ञमग्ने ।
स्वाहाकृतेन हविषा पुरोगा याहि साध्या हविरदन्तु देवाः ॥११॥
यदक्रन्दः प्रथमं जायमानऽउद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् ।
श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यं महि जातं तेऽअर्वन् ॥१२॥
यमेन दत्तं त्रितऽएनमायुनगिन्द्रऽएणं प्रथमोऽअध्यतिष्ठत् ।
गन्धर्वोऽअस्य रशनामगृभ्णात्सूरादश्वं वसवो निरतष्ट ॥१३॥
असि यमोऽअस्यादित्योऽअर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन ।
असि सोमेन समया विपृक्तऽआहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि ॥१४॥
त्रीणि तऽआहुर्दिवि बन्धनानि त्रीण्यप्सु त्रीण्यन्तः समुद्रे ।
उतेव मे वरुणश्छन्त्स्यर्वन्यत्रा तऽआहुः परमं जनित्रम् ॥१५॥
इमा ते वाजिन्नवमार्जनानीमा शफानाꣳसनितुर्निधाना ।
अत्रा ते भद्रा रशनाऽअपश्यमृतस्य याऽअभिरक्षन्ति गोपाः ॥१६॥
आत्मानं ते मनसारादजानामवो दिवा पतयन्तं पतङ्गम् ।
शिरोऽअपश्यं पथिभिः सुगेभिररेणुभिर्जेहमानं पतत्रि ॥१७॥

अत्रा ते रूपमुत्तममपश्यं जिगीषमाणमिषऽआ पदे गोः ।
यदा ते मर्त्तोऽअनु भोगमानडादिद् ग्रसिष्ठऽओषधीरजीगः ॥१८॥
अनु त्वा रथोऽअनु मर्योऽअर्वन्ननु गावोऽनु भगः कनीनाम् ।
अनु व्रातासस्तव सख्यमीयुरनु देवा ममिरे वीर्यं ते ॥१९॥
हिरण्यशृङ्गोऽयोऽअस्य पादा मनोजवाऽअवरऽइन्द्रऽआसीत् ।
देवाऽइदस्य हविरद्यमायन्योऽअर्वन्तं प्रथमोऽअध्यतिष्ठत् ॥२०॥
ईर्मान्तासः सिलिकमध्यमासः सꣳशूरणासो दिव्यासोऽअत्याः ।
हꣳसाऽइव श्रेणिशो यतन्ते यदाक्षिषुर्दिव्यमज्ममश्वाः ॥२१॥
तव शरीरं पतयिष्ण्वर्वन्तव चित्तं वातऽइव ध्रजीमान् ।
तव शृङ्गाणि विष्ठिता पुरुत्रारण्येषु जर्भुराणा चरन्ति ॥२२॥
उपप्रागाच्छसनं वाज्यर्वा देवद्रीचा मनसा दीध्यानः ।
अजः पुरो नीयते नाभिरस्यानु पश्चात्कवयो यन्ति रेभाः ॥२३॥
उपप्रागात्परमं यत्सधस्थमर्वाँ२॥ऽअच्छा पितरं मातरं च ।
अद्या देवाञ्जुष्टतमो हि गम्याऽअथाशास्ते दाशुषे वार्याणि ॥२४॥
समिद्धोऽअद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्यजसि जातवेदः ।
आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान्त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः ॥२५॥
तनूनपात्पथऽऋतस्य यानान्मध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व ।
मन्मानि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्देवत्रा च कृणुह्यध्वरं नः ॥२६॥
नराशꣳसस्य महिमानमेषामुपस्तोषाम यजतस्य यज्ञैः ।
ये सुक्रतवः शुचयो धियन्धाः स्वदन्ति देवाऽउभयानि हव्या ॥२७॥
आजुह्वानऽईड्यो वन्द्यश्चायाह्यग्ने वसुभिः सजोषाः ।
त्वं देवानामसि यह्व होता सऽएनान्यक्षीषितो यजीयान् ॥२८॥
प्राचीनं बर्हिः प्रदिशा पृथिव्या वस्तोरस्या वृज्यतेऽअग्रेऽअह्नाम् ।
व्यु प्रथते वितरं वरीयो देवेभ्योऽअदितये स्योनम् ॥२९॥

व्यचस्वतीरुर्विया विश्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः ।
देवीर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वा देवेभ्यो भवत सुप्रायणाः ॥३०॥
आ सुष्वयन्ती यजतेऽउपाकेऽउषासानक्ता सदतां नि योनौ ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मेऽअधि श्रियꣳशुक्रपिशं दधाने ॥३१॥
दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ॥३२॥
आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विडा मनुष्वदिह चेतयन्ती ।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदꣳस्योनꣳसरस्वती स्वपसः सदन्तु ॥३३॥
यऽइमे द्यावापृथिवी जनित्री रूपैरपिꣳशद्भुवनानि विश्वा ।
तमद्य होतरिषितो यजीयान्देवं त्वष्टारमिह यक्षि विद्वान् ॥३४॥
उपावसृज त्मन्या समञ्जन्देवानां पाथऽऋतुथा हवीꣳषि ।
वनस्पतिः शमिता देवोऽअग्निः स्वदन्तु हव्यं मधुना घृतेन ॥३५॥
सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः ।
अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहाकृतꣳहविरदन्तु देवाः ॥३६॥
केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ॥३७॥
जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे ।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वꣳस त्वा वर्मणो महिमा पिपर्त्तु ॥३८॥
धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम ।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥३९॥
वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियꣳसखायं परिषस्वजाना ।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वञ्ज्या इयꣳसमने पारयन्ती ॥४०॥
तेऽआचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे ।
अप शत्रून्विध्यताꣳसंविदानेऽआर्त्नीऽइमे विष्फुरन्तीऽअमित्रान् ॥४१॥
बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चाकृणोति समनावगत्य ।
इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ॥४२॥

रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनुयच्छन्ति रश्मयः ॥४३॥
तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँ१॥ऽरनपव्ययन्तः ॥४४॥
रथवाहनꣳहविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मꣳसदेम विश्वाहा वयꣳसुमनस्यमानाः ॥४५॥
स्वादुषꣳसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेनाऽइषुबलाऽअमृध्राः सतोवीराऽउरवो व्रातसाहाः ॥४६॥
ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवीऽअनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽईशत ॥४७॥
सुपर्णं वस्ते मृगोऽअस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता ।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यꣳसन् ॥४८॥
ऋजीते परिवृङ्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः ।
सोमोऽअधिब्रवीतु नोऽदितिः शर्म यच्छतु ॥४९॥
आ जङ्घन्ति सान्वेषां जघनाँ२॥ऽउपजिघ्नते ।
अश्वाजनि प्रचेतसोऽश्वान्त्समत्सु चोदय ॥५०॥
अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमाꣳसं परिपातु विश्वतः ॥५१॥
वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूयाऽअस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः ।
गोभिः सन्नद्धोऽअसि वीडयस्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि ॥५२॥
दिवः पृथिव्याः पर्योजऽउद्भृतं वनस्पतिभ्यः पर्य्याभृतꣳसहः ।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रꣳहविषा रथं यज ॥५३॥
इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः ।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय ॥५४॥

उपश्वासय पृथिवीमुत द्यां पुरुत्रा ते मनुतां विष्ठितं जगत् ।
स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैर्दूराद्दवीयोऽअपसेध शत्रून् ॥५५॥
आक्रन्दय बलमोजो नऽआधा निष्टनिहि दुरिता बाधमानः ।
अपप्रोथ दुन्दुभे दुच्छुनाऽइतऽइन्द्रस्य मुष्टिरसि वीडयस्व ॥५६॥
आमूरज प्रत्यावर्त्तयेमाः केतुमद्दुन्दुभिर्वावदीति ।
समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरोऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु ॥५७॥
आग्नेयः कृष्णग्रीवः सारस्वती मेषी बभ्रुः सौम्यः पौष्णः
श्यामः शितिपृष्ठो बार्हस्पत्यः शिल्पो वैश्वदेवऽऐन्द्रोऽरुणो
मारुतः कल्माषऽऐन्द्राग्नः सꣳहितोऽधोरामः सावित्रो वारुणः
कृष्णऽएकशितिपात्पेत्वः ॥५८॥
अग्नयेऽनीकवते रोहिताञ्जिरनड्वानधोरामौ सावित्रौ पौष्णौ
रजतनाभी वैश्वदेवौ पिशङ्गौ तूपरौ मारुतः कल्माषऽआग्नेयः
कृष्णोऽजः सारस्वती मेषी वारुणः पेत्वः ॥५९॥
[क]अग्नये गायत्राय त्रिवृते राथन्तरायाष्टाकपालऽइन्द्राय त्रैष्टुभाय
पञ्चदशाय बार्हतायैकादशकपालो विश्वेभ्यो देवेभ्यो जागतेभ्यः
सप्तदशेभ्यो वैरूपेभ्यो द्वादशकपालो मित्रावरुणाभ्यामानुष्टुभाभ्या-
मेकविꣳशाभ्यां [ख]वैराजाभ्यां पयस्या बृहस्पतये पाङ्क्ताय त्रिणवाय
शाक्वराय चरुः सवित्रऽऔष्णिहाय त्रयस्त्रिꣳशाय रैवताय
द्वादशकपालः प्राजापत्यश्चरुरदित्यै विष्णुपत्न्यै चरुरग्नये
वैश्वानराय द्वादशकपालोऽनुमत्याऽअष्टाकपालः ॥६०॥

इत्येकोनत्रिंशोऽध्यायः॥

अथ त्रिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—नारायणः १-३, ५-२२। मेधातिथिः ४॥

देवता—सविता १-४। परमेश्वरः ५, ६। विद्वांसः ७, ८। विद्वान् ९-१२। ईश्वरः १३। राजेश्वरौ १४-२२॥

छन्दः—त्रिष्टुप् १। निचृद्गायत्री २। गायत्री ३, ४। स्वराडतिशक्वरी ५, ११। निचृदष्टिः ६,७। कृतिः ८, १३। भुरिगत्यष्टिः ९, १०, २१। विराट्संकृतिः १२। निचृदत्यष्टिः १४। विराट्कृतिः १५,१६। विराड्धृतिः १७। निचृत्प्रकृतिः १८। भुरिग्धृतिः १९। भुरिगतिजगती २०। निचृत्कृतिः २२॥

स्वरः—धैवतः १, १८। षड्जः २-४। पञ्चमः ५, ११। मध्यमः ६, ७। निषादः ८, १३, १५, १६, २०, २२। गान्धारः ९, १०, १२, १४, २१। ऋषभः १७, १९॥

देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय ।
दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥१॥
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥२॥
विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥३॥
विभक्तारꣳ हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः। सवितारं नृचक्षसम् ॥४॥
ब्रह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्यं मरुद्भ्यो वैश्यं तपसे शूद्रं
तमसे तस्करं नारकाय वीरहणं पाप्मने क्लीबमाक्रयायाऽ
अयोगूं कामाय पुँश्चलूमतिक्रुष्टाय मागधम् ॥५॥
नृत्ताय सूतं गीताय शैलूषं धर्माय सभाचरं नरिष्ठायै
भीमलं नर्माय रेभꣳहसाय कारिमानन्दाय स्त्रीषखं प्रमदे
कुमारीपुत्रं मेधायै रथकारं धैर्याय तक्षाणम् ॥६॥
तपसे कौलालं मायायै कर्मारꣳ रूपाय मणिकारꣳ शुभे
वपꣳशरव्यायाऽइषुकारꣳ हेत्यै धनुष्कारं कर्मणे ज्याकारं
दिष्टाय रज्जुसर्जं मृत्यवे मृगयुमन्तकाय श्वनिनम् ॥७॥

नदीभ्यः पौञ्जिष्ठमृक्षीकाभ्यो नैषादं पुरुषव्याघ्राय दुर्मदं
गन्धर्वाप्सरोभ्यो व्रात्यं प्रयुग्भ्यऽउन्मत्तः सर्पदेवजनेभ्योऽ
प्रतिपदमयेभ्यः कितवमीर्यतायाऽअकितवं पिशाचेभ्यो
विदलकारीं यातुधानेभ्यः कण्टकीकारीम् ॥८॥
सन्धये जारं गेहायोपपतिमार्त्यै परिवित्तं निर्ऋत्यै परिविविदान-
मराद्ध्याऽएदिधिषुः पतिं निष्कृत्यै पेशस्कारीꣳसंज्ञानाय
स्मरकारीं प्रकामोद्यायोपसदं वर्णायानुरुधं बलायोपदाम् ॥९॥
उत्सादेभ्यः कुब्जं प्रमुदे वामनं द्वार्भ्यः स्त्रामꣳ स्वप्नायान्धम-
धर्माय बधिरं पवित्राय भिषजं प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शमाशिक्षायै
प्रश्निनमुपशिक्षायाऽअभिप्रश्निनं मर्यादायै प्रश्नविवाकम् ॥१०॥
अर्मेभ्यो हस्तिपं जवायाश्वपं पुष्ट्यै गोपालं वीर्यायाविपालं
तेजसेऽजपालमिरायै कीनाशं कीलालाय सुराकारं भद्राय
गृहपꣳश्रेयसे वित्तधमाध्यक्ष्यायानुक्षत्तारम् ॥११॥
भायै दार्वाहारं प्रभायाऽअग्न्येधं ब्रध्नस्य विष्टपायाभिषेक्तारं
वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारं देवलोकाय पेशितारं मनुष्यलोकाय
प्रकरितारः सर्वेभ्यो लोकेभ्यऽउपसेक्तारमवऽऋत्यै वधायोपमन्थितारं
मेधाय वासः पल्पूलीं प्रकामाय रजयित्रीम् ॥१२॥
ऋतये स्तेनहृदयं वैरहत्याय पिशुनं विविक्त्यै क्षत्तारमौपद्रष्ट्र्यायानुक्षत्तारं
बलायानुचरं भूम्ने परिष्कन्दं प्रियाय प्रियवादिनमरिष्ट्याऽअश्वसादꣳ
स्वर्गाय लोकाय भागदुघं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम् ॥१३॥
मन्यवेऽयस्तापं क्रोधाय निसरं योगाय योक्तारः शोकायाभिसर्त्तारं
क्षेमाय विमोक्तारमुत्कूलनिकूलेभ्यस्त्रिष्ठिनं वपुषे मानस्कृतः
शीलायाञ्जनीकारीं निर्ऋत्यै कोशकारीं यमायासूम् ॥१४॥
यमाय यमसूमथर्वभ्योऽवतोकाꣳ संवत्सराय पर्यायिणीं परिवत्सरा-
याविजातामिदावत्सरायातीत्वरीमिद्वत्सरायातिष्कद्वरीं वत्सराय विजर्जराꣳ
संवत्सराय पलिक्नीमृभुभ्योऽजिनसन्धः साध्येभ्यश्चर्मम्नम् ॥१५॥

सरोभ्यो धैवरमुपस्थावराभ्यो दाशं वैशन्ताभ्यो बैन्दं नड्वलाभ्यः
शौष्कलं पाराय मार्गारमवाराय कैवर्त्तं तीर्थेभ्यऽआन्दं विषमेभ्यो
मैनालꣳ स्वनेभ्यः पर्णकं गुहाभ्यः किरातः सानुभ्यो जम्भकं
पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम् ॥१६॥
बीभत्सायै पौल्कसं वर्णाय हिरण्यकारं तुलायै वाणिजं
पश्चादोषाय ग्लाविनं विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलं भूत्यै
जागरणमभूत्यै स्वपनमार्त्यै जनवादिनं व्यृद्ध्याऽअपगल्भः
सꣳशराय प्रच्छिदम् ॥१७॥
अक्षराजाय कितवं कृतायादिनवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं
द्वापरायाधिकल्पिनमास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्यवे गोव्यच्छमन्तकाय
गोघातं क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं भिक्षमाणऽउपतिष्ठति
दुष्कृताय चरकाचार्यं पाप्मने सैलगम् ॥१८॥
प्रतिश्रुत्कायाऽअर्तनं घोषाय भषमन्ताय बहुवादिनमनन्ताय
मूकः शब्दायाडम्बराघातं महसे वीणावादं क्रोशाय तूणवध्मम-
वरस्पराय शङ्खध्मं वनाय वनपमन्यतोरण्याय दावपम् ॥१९॥
नर्माय पुँश्चलूꣳ हसाय कारिं यादसे शाबल्यां ग्रामण्युं
गणकमभिक्रोशकं तान्महसे वीणावादं पाणिघ्नं तूणवध्मं
तान्नृत्तायानन्दाय तलवम् ॥२०॥
अग्नये पीवानं पृथिव्यै पीठसर्पिणं वायवे चाण्डालमन्तरिक्षाय
वꣳशनर्तिनं दिवे खलतिः सूर्याय हर्यक्षं नक्षत्रेभ्यः किर्मिरं
चन्द्रमसे किलासमह्ने शुक्लं पिङ्गाक्षः रात्र्यै कृष्णं पिङ्गाक्षम् ॥२१॥
अथैतानष्टौ विरूपानालभतेऽतिदीर्घं चातिह्रस्वं चातिस्थूलं
चातिकृशं चातिशुक्लं चातिकृष्णं चातिकुल्वं चातिलोमशं च ।
अशूद्राऽअब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः। मागधः पुँश्चली
कितवः क्लीबोऽशूद्राऽअब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः ॥२२॥

इति त्रिंशोऽध्यायः॥

अथैकत्रिंशोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—नारायणः १-१६। उत्तरनारायणः १७-२२॥

देवता—पुरुषः १, ३, ४, ६, ८-१६। ईशानः २। स्रष्टा ५। स्रष्टेश्वरः ७। आदित्यः १७-१९, २२। सूर्यः २०। विश्वेदेवाः २१॥

छन्दः—निचृदनुष्टुप् १-३, ८-११, १४। अनुष्टुप् ४, ५, ७, १२, १३, १५, २०, २१। विराडनुष्टुप् ६। विराट्त्रिष्टुप् १६। भुरिक्त्रिष्टुप् १७, १९। निचृत्त्रिष्टुप् १८। निचृदार्षीत्रिष्टुप् २२॥

स्वरः—गान्धारः १-१५, २०, २१। धैवतः १६-१९, २२॥

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिꣳ सर्वत स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१॥
पुरुषऽएवेदꣳसर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥
एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥३॥
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥४॥
ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः ।
स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥५॥
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥६॥
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥७॥
तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥८॥
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये ॥९॥
यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादाऽउच्येते ॥१०॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रोऽअजायत ॥११॥
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥१२॥
नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षꣳशीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२॥ऽअकल्पयन् ॥१३॥
यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः ॥१४॥
सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वानाऽअबध्नन् पुरुषं पशुम् ॥१५॥
यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१६॥
अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे ।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ॥१७॥
वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥१८॥
प्रजापतिश्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो बहुधा विजायते ।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥१९॥
यो देवेभ्यऽआतपति यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ॥२०॥
रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवाऽअग्रे तदब्रुवन् ।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवाऽअसन्वशे ॥२१॥
श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ
व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण ॥२२॥

इत्येकत्रिंशोऽध्यायः॥

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—स्वयम्भु ब्रह्म १-१२। मेधाकामः १३-१५। श्रीकामः १६॥

देवता—परमात्मा १, २, ६-८, १०-१२, १४। हिरण्यगर्भः परमात्मा ३। आत्मा ४। परमेश्वरः ५। विद्वान् ९। इन्द्रः १३। परमेश्वरविद्वांसौ १५। विद्वद्राजानौ १६॥

छन्दः—अनुष्टुप् १, २, १६। द्विपदागायत्री ३। भुरिक्त्रिष्टुप् ४, ५। निचृत्त्रिष्टुप् ६, ८-११। निचृच्छक्वरी ७। त्रिष्टुप् १२। भुरिग्गायत्री १३। निचृदनुष्टुप् १४। निचृद्बृहती १५॥

स्वरः—गान्धारः १, २, १४, १६। षड्जः ३, १३। धैवतः ४-६, ८-१२। निषादः ७। मध्यमः १५॥

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः ॥१॥

सर्वे निमेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि ।
नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत् ॥२॥

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः ॥३॥

एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः सऽउ गर्भेऽअन्तः ।
सऽएव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ॥४॥

यस्माज्जातं न पुरा किं चनैव य आबभूव भुवनानि विश्वा ।
प्रजापतिः प्रजया सꣳरराणस्त्रीणि ज्योतीꣳषि सचते स षोडशी ॥५॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥६॥

यं क्रन्दसीऽअवसा तस्तभानेऽअभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने ।
यत्राधि सूरऽउदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥७॥

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् ।
तस्मिन्निदꣳ सं च वि चैति सर्वꣳ सऽओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु ॥८॥

प्र तद्वोचेदमृतं नु विद्वान् गन्धर्वो धाम विभृतं गुहा सत् ।
त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुः पितासत् ॥९॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवाऽअमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥१०॥

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च ।
उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभि संविवेश ॥११॥

परि द्यावापृथिवी सद्यऽइत्वा परि लोकान्परि दिशः परि स्वः ।
ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदपश्यत्तदभवत्तदासीत् ॥१२॥

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा ॥१३॥

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥१४॥

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः ।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥१५॥

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् ।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा ॥१६॥

इति द्वात्रिंशोऽध्यायः॥

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—वत्सप्रीः १। विश्वरूपः २, ४। गोतमः ३, १६। कुत्सः ५, ६, २९, ३७, ३८, ४२, ६८। विश्वामित्रः ७, ८, २२, २६, ६०, ६३, ७५। भरद्वाजः ९, १३, ६१, ६९, ८४। मेधातिथिः १०, ४५, ४६, ८१-८३, ९७। पराशरः ११। विश्ववारा १२। वसिष्ठः १४, १८, २०, ४४, ७०, ७१, ७६, ८८। प्रस्कण्वः १५, ३१-३३, ३६। लुशोधानाकः १७। पुरुमीढाजमीढौ १९। सुनीतिः २१। सुचीकः २३। त्रिशोकः २४। मधुच्छन्दाः २५, ५६-५८। अगस्त्यः २७, ३४, ७८, ७९। गौरीवितिः २८, ६४। विभ्राट् ३०। श्रुतकक्षसुकक्षौ ३५। जमदग्निः ३९, ४०, ८५, ८७। नृमेधः ४१, ६६, ६७, ९५, ९६। हिरण्यस्तूपः ४३। कुत्सीदिः ४७। प्रतिक्षत्रः ४८। वत्सारः ४९। प्रगाथः ५०। कूर्मः ५१। लुशः ५२। सुहोत्रः ५३, ७७, ९३। वामदेवः ५४, ६५। ऋजिश्वः ५५। कुशिकः ५९। देवलः ६२। दक्षः ७२, ७३। प्रजापतिः ७४। बृहद्दिवः ८०। तापसः ८६। कण्वः ८९। त्रितः ९०। मनुः ९१, ९४। मेधः ९२॥

देवता—अग्नयः १, २। अग्निः ३-६, ९-१२, १५, १६। विद्वांसः ७, ८, १४। विश्वेदेवाः १३, ३९, ४७-४९, ५१-५४, ७७, ८१-८३, ८९, ९१, ९४। सविता १७, २०, ३४, ६९, ८४। इन्द्रः १८, २२-२९, ५९, ६३-६७, ७९, ९०, ९५, ९६। इन्द्रवायू १९, ४५, ५६, ८६। वेनः २१। सूर्यः ३०-३२, ३५-३८, ४०-४३, ७४। विद्वान् ३३, ७२, ७५। वायुः ४४, ५५, ७०, ८५। वरुणः ४६। महेन्द्रः ५०, ८०, ९७। मित्रावरुणौ ५७, ७१, ८७। अश्विनौ ५८, ८८। वैश्वानरः ६०, ९२। इन्द्राग्नी ६१, ७६, ९३। सोमः ६२। आदित्याः ६८। अध्वर्यू ७३। इन्द्रामरुतौ ७८॥

छन्दः—स्वराट्पङ्क्तिः १, ५, ७, १६, १८, ६८। गायत्री २, ९, १९, ४५, ४६, ५६-५८, ६५, ७१, ७६। निचृद्गायत्री ३, ४, २०, २१, २४, २५, ३१-३३, ३५, ३६, ६१, ६२, ७२, ७३, ७७। भुरिक्पङ्क्तिः ६, १३, २६, २८, ५९। त्रिष्टुप् ८। विराड्गायत्री १०। विराट्त्रिष्टुप् ११, २७, ४३, ७०, ७८। निचृत्त्रिष्टुप् १२, २२, ४२, ४४, ४८, ५२, ५४। अनुष्टुप् १४। बृहती १५। भुरिक्त्रिष्टुप् १७, २३, ६०। जगती २९। विराड्जगती ३०। त्रिष्टुप् ३४, ३७, ३८, ५०, ५१, ५३, ५५, ६३, ६४, ७४, ७९। विराड्बृहती ३९, ८५, ९१। भुरिग्बृहती ४०, ९५। निचृद्बृहती ४१, ८१, ८२, ८६-८८, ९०, ९२, ९६। स्वराडार्चीगायत्री ४७। निचृज्जगती ४९, ६९, ७५, ८४। भुरिगनुष्टुप् ६६, ८९, ९३। पङ्क्तिः ६७, ८०, ९४। सतोबृहती ८३, ९७॥

स्वरः—पञ्चमः १, ५-७, १३, १६, १८, २६, २८, ५९, ६७, ६८, ८०, ९४। षड्जः २-४, ९, १०, १९-२१, २४, २५, ३१-३३, ३५, ३६, ४५-४७, ५६-५८, ६१, ६२, ६५, ७१-७३, ७६, ७७। धैवतः ८, ११, १२, १७, २२, २३, २७, ३४,

३७, ३८, ४२-४४, ४८, ५०-५५, ६०, ६३, ६४, ७०, ७४, ७८, ७९। गान्धारः १४, ६६, ८९, ९३। मध्यमः १५, ३९-४१, ८१-८३, ८५-८८, ९०-९२, ९५-९७। निषादः २९, ३०, ४९, ६९, ७५, ८४॥

अस्याजरासो दमामरित्राऽअर्चद्धूमासोऽअग्नयः पावकाः ।
श्वितीचयः श्वात्रासो भुरण्यवो वनर्षदो वायवो न सोमाः ॥१॥
हरयो धूमकेतवो वातजूताऽउप द्यवि। यतन्ते वृथगग्नयः ॥२॥
यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ२॥ऽऋतं बृहत् ।
अग्ने यक्षि स्वं दमम् ॥३॥
युक्ष्वा हि देवहूतमाँ२॥ऽअश्वाँ२॥ऽअग्ने रथीरिव ।
नि होता पूर्व्यः सदः ॥४॥
द्वे विरूपे चरतः स्वर्थेऽअन्यान्या वत्समुपधापयेते ।
हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रोऽअन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः ॥५॥
अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठोऽअध्वरेष्वीड्यः ।
यमप्नवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे ॥६॥
त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिꣳशच्च देवा नव चासपर्यन् ।
औक्षन् घृतैरस्तृणन् बर्हिरस्माऽआदिद्धोतारं न्यसादयन्त ॥७॥
मूर्द्धानं दिवोऽअरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृतऽआ जातमग्निम् ।
कविꣳ सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥८॥
अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्रऽआहुतः ॥९॥
विश्वेभिः सोम्यं मध्वग्नऽइन्द्रेण वायुना। पिबा मित्रस्य धामभिः ॥१०॥
आ यदिषे नृपतिं तेजऽआनट् शुचि रेतो निषिक्तं द्यौरभीके ।
अग्निः शर्द्धमनवद्यं युवानꣳ स्वाध्यं जनयत्सूदयच्च ॥११॥
अग्ने शर्द्ध महते सौभगाय तव द्युम्नान्युत्तमानि सन्तु ।
सं जास्पत्यꣳ सुयममाकृणुष्व शत्रूयतामभितिष्ठा महाꣳसि ॥१२॥
त्वाꣳहि मन्द्रतममर्कशोकैर्ववृमहे महि नः श्रोष्यग्ने ।
इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः ॥१३॥

त्वेऽअग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान्दयन्त गोनाम् ॥१४॥
श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः ।
आसीदन्तु बर्हिषि मित्रोऽअर्यमा प्रातर्यावाणोऽअध्वरम् ॥१५॥
विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ।
अग्निर्देवानामवऽआवृणानः सुमृडीको भवतु जातवेदाः ॥१६॥
महोऽअग्नेः समिधानस्य शर्मण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये ।
श्रेष्ठे स्याम सवितुः सवीमनि तद्देवानामवोऽअद्या वृणीमहे ॥१७॥
आपश्चित्पिप्यु स्तर्यो न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्तऽइन्द्र ।
याहि वायुर्न नियुतो नोऽअच्छा त्वꣳ हि धीभिर्दयसे वि वाजान् ॥१८॥
गावऽउपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया ॥१९॥
यदद्य सूरऽउदितेऽनागा मित्रोऽअर्यमा । सुवाति सविता भगः ॥२०॥
आ सुते सिञ्चत श्रियꣳ रोदस्योरभिश्रियम् । रसा दधीत वृषभम् ॥२१॥
आतिष्ठन्तं परि विश्वेऽअभूषञ्छ्रियो वसानश्चरति स्वरोचिः ।
महत्तद् वृष्णोऽअसुरस्य नामा विश्वरूपोऽअमृतानि तस्थौ ॥२२॥
प्र वो महे मन्दमानायान्धसोऽर्चा विश्वानराय विश्वाभुवे ।
इन्द्रस्य यस्य सुमखꣳ सहो महि श्रवो नृम्णं च रोदसी सपर्यतः ॥२३॥
बृहन्निदिध्मऽएषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः । येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२४॥
इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः । महाँ२॥ऽअभिष्टिरोजसा ॥२५॥
इन्द्रो वृत्रमवृणोच्छर्द्धनीतिः प्र मायिनाममिनाद्वर्पणीतिः ।
अहन् व्यꣳसमुशधग्वनेष्वाविर्धेनाऽअकृणोद्राम्याणाम् ॥२६॥
कुतस्त्वमिन्द्र माहिनः सन्नेको यासि सत्पते किं तऽइत्था ।
सं पृच्छसे समराणः शुभानैर्वोचेस्तन्नो हरिवो यत्तेऽअस्मे ॥२७॥
आ तत्तऽइन्द्रायवः पनन्ताभि यऽऊर्वं गोमन्तं तितृत्सान् ।
सकृत्स्वꣳ ये पुरुपुत्रां महीꣳ सहस्रधारां बृहतीं दुदुक्षन् ॥२८॥

इमां ते धियं प्रभरे महो महीमस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तऽआनजे ।
तमुत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्रं देवासः शवसामदन्ननु ॥२९॥
विभ्राड् बृहत्पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।
वातजूतो योऽअभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति ॥३०॥
उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥३१॥
येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ२॥ऽअनु । त्वं वरुण पश्यसि ॥३२॥
दैव्यावध्वर्यूऽआगतꣳ रथेन सूर्यत्वचा । मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे ॥३३॥
आ नऽइडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देवऽएतु ।
अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा ॥३४॥
यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगाऽअभि सूर्य । सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥३५॥
तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमाभासि रोचनम् ॥३६॥
तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्त्तोर्विततꣳ सञ्जभार ।
यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥३७॥
तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे ।
अनन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः सम्भरन्ति ॥३८॥
बण्महाँ२॥ऽअसि सूर्य बडादित्य महाँ२॥ऽअसि ।
महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ२॥ऽअसि ॥३९॥
बट् सूर्य श्रवसा महाँ२॥ऽअसि सत्रा देव महाँ२॥ऽअसि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥४०॥
श्रायन्तऽइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाते जनमानऽओजसा प्रति भागं न दीधिम ॥४१॥
अद्या देवाऽउदिता सूर्यस्य निरꣳहसः पिपृता निरवद्यात् ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवीऽउत द्यौः ॥४२॥
आ कृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥४३॥

प्रवावृजे सुप्रया बर्हिरेषामा विश्पतीव बीरिटऽइयाते ।
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् ॥४४॥
इन्द्रवायू बृहस्पतिं मित्राग्निं पूषणं भगम्। आदित्यान्मारुतं गणम् ॥४५॥
वरुणः प्राविता भुवन्मित्रो विश्वाभिरूतिभिः। करतां नः सुराधसः ॥४६॥
अधि नऽइन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम्। इता मरुतोऽअश्विना ॥४७॥
अग्नऽइन्द्र वरुण मित्र देवाः शर्द्धः प्रयन्त मारुतोत विष्णो ।
उभा नासत्या रुद्रोऽअध ग्नाः पूषा भगः सरस्वती जुषन्त ॥४८॥
इन्द्राग्नी मित्रावरुणादितिꣳ स्वः पृथिवीं द्यां मरुतः पर्वताँ२॥ऽअपः ।
हुवे विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं भगं नु शꣳसꣳसवितारमूतये ॥४९॥
अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।
यः शꣳसते स्तुवते धायि पज्रऽइन्द्रज्येष्ठाऽअस्माँ२॥ऽअवन्तु देवाः ॥५०॥
अर्वाञ्चोऽअद्या भवता यजत्राऽआ वो हार्दि भयमानो व्ययेयम् ।
त्राध्वं नो देवा निजुरो वृकस्य त्राध्वं कर्त्तादवपदो यजत्राः ॥५१॥
विश्वेऽअद्य मरुतो विश्वऽऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः ।
विश्वे नो देवाऽअवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजोऽअस्मे ॥५२॥
विश्वे देवाः शृणुतेमꣳ हवं मे येऽअन्तरिक्षे यऽउप द्यवि ष्ठ ।
येऽअग्निजिह्वाऽउत वा यजत्राऽआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम् ॥५३॥
देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वꣳ सुवसि भागमुत्तमम् ।
आदिद्दामानꣳ सवितर्व्यूर्णुषेऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः ॥५४॥
प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारꣳ रथप्राम् ।
द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो ॥५५॥
इन्द्रवायूऽइमे सुताऽउप प्रयोभिरागतम्। इन्दवो वामुशन्ति हि ॥५६॥
मित्रꣳ हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम्। धियं घृताचीꣳ साधन्ता ॥५७॥
दस्रा युवाकवः सुता नासत्या वृक्तबर्हिषः। आयातꣳ रुद्रवर्त्तनी ॥५८॥

विदद्यदी सरमा रुग्णमद्रेर्महि पाथः पूर्व्यꣳ सध्र्यक्कः ।
अग्रं नयत्सुपद्यक्षराणामच्छा रवं प्रथमा जानती गात् ॥५९॥
नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः ।
एमेनमवृधन्नमृताऽअमर्त्यं वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः ॥६०॥
उग्रा विघनिना मृधऽइन्द्राग्नी हवामहे। ता नो मृडातऽईदृशे ॥६१॥
उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२॥ऽइयक्षते ॥६२॥
ये त्वाहिहत्ये मघवन्नवर्द्धन्ये शाम्बरे हरिवो ये गविष्टौ ।
ये त्वा नूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्र सोमꣳ सगणो मरुद्भिः ॥६३॥
जनिष्ठाऽउग्रः सहसे तुराय मन्द्रऽओजिष्ठो बहुलाभिमानः ।
अवर्द्धन्निन्द्रं मरुतश्चिदत्र माता यद्वीरं दधनद्धनिष्ठा ॥६४॥
आ तू नऽइन्द्र वृत्रहन्नस्माकमर्द्धमागहि। महान्महीभिरूतिभिः ॥६५॥
त्वमिन्द्र प्रतूर्त्तिष्वभि विश्वाऽअसि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य्य तरुष्यतः ॥६६॥
अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥६७॥
यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नमादित्यासो भवता मृडयन्तः ।
आ वोऽर्वाची सुमतिर्ववृत्यादꣳहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासत् ॥६८॥
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वꣳ शिवेभिरद्य परिपाहि नो गयम्।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽईशत ॥६९॥
प्रवीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः ।
वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिबा सुतस्यान्धसो मदाय ॥७०॥
गावऽउपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया ॥७१॥
काव्ययोराजानेषु क्रत्वा दक्षस्य दुरोणे। रिशादसा सधस्थऽआ ॥७२॥
दैव्यावध्वर्यूऽआ गतꣳ रथेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे ॥७३॥

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त् ।
रेतोधाऽआसन्महिमानऽआसन्त्स्वधाऽअवस्तात्प्रयतिः परस्तात् ॥७४॥
आ रोदसीऽअपृणदा स्वर्महज्जातं यदेनमपसोऽअधारयन् ।
सोऽअध्वराय परिणीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहितः ॥७५॥
उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा । आङ्गूषैराविवासतः ॥७६॥
उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये । सुमृडीका भवन्तु नः ॥७७॥
ब्रह्माणि मे मतयः शꣳसुतासः शुष्मऽइयर्ति प्रभृतो मेऽअद्रिः ।
आ शासते प्रतिहर्यन्त्युक्थेमा हरी वहतस्ता नोऽअच्छ ॥७८॥
अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु न त्वावाँ२॥ऽअस्ति देवता विदानः ।
न जायमानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध ॥७९॥
तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञऽउग्रस्त्वेषनृम्णः ।
सद्यो जज्ञानो निरिणाति शत्रूननु यं विश्वे मदन्त्यूमाः ॥८०॥
इमाऽउ त्वा पुरूवसो गिरो वर्द्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥८१॥
यस्यायं विश्वऽआर्यो दासः शेवधिपाऽअरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सोऽअज्यते रयिः ॥८२॥
अयꣳ सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्रऽइव पप्रथे ।
सत्यः सोऽअस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥८३॥
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वꣳ शिवेभिरद्य परिपाहि नो गयम् ।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽईशत ॥८४॥
आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्रऽउपरि श्रीणानो३ऽयꣳ शुक्रोऽअयामि ते ॥८५॥
इन्द्रवायू सुसन्दृशा सुहवेह हवामहे ।
यथा नः सर्वऽइज्जनोऽनमीवः सङ्गमे सुमनाऽअसत् ॥८६॥

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टयऽआचक्रे हव्यदातये ॥८७॥
आ यातमुपभूषतं मध्वः पिबतमश्विना ।
दुग्धं पयो वृषणा जेन्यावसू मा नो मर्धिष्टमागतम् ॥८८॥
प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता ।
अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥८९॥
चन्द्रमाऽअप्स्व३न्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहꣳ हरिरेति कनिक्रदत् ॥९०॥
देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये ।
देवंदेवꣳ हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥९१॥
दिवि पृष्टोऽअरोचताग्निर्वैश्वानरो बृहन् ।
क्ष्मया वृधानऽओजसा चनोहितो ज्योतिषा बाधते तमः ॥९२॥
इन्द्राग्नीऽअपादियं पूर्वागात्पद्वतीभ्यः ।
हित्वी शिरो जिह्वया वावदच्चरत्त्रिꣳशत्पदा न्यक्रमीत् ॥९३॥
देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकꣳ सरातयः ।
ते नोऽअद्य तेऽअपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ॥९४॥
अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।
देवास्तऽइन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ॥९५॥
प्र वऽइन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रꣳ हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥९६॥
अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यꣳ शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनुष्टुवन्ति पूर्वथा ॥९७॥

इति त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—शिवसङ्कल्पः १-६। अगस्त्यः ७-९, ४८। गृत्समदः १०, ११, ५८। हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः १२, १३, २४-२७। देवश्रवदेववातौ भारतौ १४, १५, १८, १९। नोधाः १६, १७। गोतमः २०-२३, ३३। प्रस्कण्वः २८। कुत्सः २९, ३०, ३२। हिरण्यस्तूपः ३१, ४७। वसिष्ठः ३४-४०। सुहोत्रः ४१। ऋजिष्वः ४२, ५३। मेधातिथिः ४३, ४४। भरद्वाजः ४५। विहव्यः ४६। प्राजापत्यो यज्ञः ४९। दक्षः ५०-५२। कूर्मः गार्त्समदः ५४। कण्वः ५५-५७॥

देवता—मनः १-६। अन्नम् ७। अनुमतिः ८, ९। सिनीवाली १०। सरस्वती ११। अग्निः १२-१५। इन्द्रः १६-१९। सोमः २०-२३। सविता २४-२७। अश्विनौ २८-३०, ४७। सूर्यः ३१। रात्रिः ३२। उषाः ३३, ४०। अग्न्यादयो लिङ्गोक्ताः ३४। भगः ३५, ३७, ३९। भगवान् ३६, ३८। पूषा ४१, ४२। विष्णुः ४३, ४४। द्यावापृथिव्यौ ४५। लिङ्गोक्ताः ४६, ५३। मरुतः ४८। ऋषयः ४९। हिरण्यन्तेजः ५०-५२। आदित्याः ५४। अध्यात्मं प्राणाः ५५। ब्रह्मणस्पतिः ५६-५८॥

छन्दः—विराट्त्रिष्टुप् १, १६, २६, २७, २९, ३१, ४२। त्रिष्टुप् २, ४, ५, १३, १४, ३०, ३९, ४९। स्वराट्त्रिष्टुप् ३, ६। उष्णिक् ७। निचृदनुष्टुप् ८, ९, ११। अनुष्टुप् १०। विराड्जगती १२। विराडनुष्टुप् १५। निचृत्त्रिष्टुप् १७-२०, २३, ३५, ३६, ३८, ४०, ५२, ५४, ५८। भुरिक्पङ्क्तिः २१, २४, ५३। विराट्पङ्क्तिः २२। निचृज्जगती २५, ३४, ४५। निचृद्गायत्री २८, ४३। पथ्याबृहती ३२। निचृत्परोष्णिक् ३३। पङ्क्तिः ३७, ४८। गायत्री ४१, ४४। भुरिक्त्रिष्टुप् ४६। जगती ४७। भुरिगुष्णिक् ५०। भुरिक्छक्वरी ५१। भुरिग्जगती ५५। निचृद्बृहती ५६। विराड्बृहती ५७॥

स्वरः—धैवतः १-६, १३, १४, १६-२०, २३, २६, २७, २९-३१, ३५, ३६, ३८-४०, ४२, ४६, ४९, ५१, ५२, ५४, ५८। ऋषभः ७, ३३, ५०। गान्धारः ८-११, १५। निषादः १२, २५, ३४, ४५, ४७, ५५। पञ्चमः २१, २२, २४, ३७, ४८, ५३। षड्जः २८, ४१, ४३, ४४। मध्यमः ३२, ५६, ५७॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥१॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्नऽऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥३॥
येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥४॥
यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥५॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥६॥

पितुं नु स्तोषं महो धर्माणं तविषीम् ।
यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्वमर्दयत् ॥७॥
अन्विदनुमते त्वं मन्यासै शं च नस्कृधि ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्र णऽआयूꣳषि तारिषः ॥८॥
अनु नोऽद्यानुमतिर्यज्ञं देवेषु मन्यताम् ।
अग्निश्च हव्यवाहनो भवतं दाशुषे मयः ॥९॥
सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥१०॥
पञ्च नद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः ।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥११॥

त्वमग्ने प्रथमोऽअङ्गिराऽऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा ।
तव व्रते कवयो विद्मनापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः ॥१२॥
त्वं नोऽअग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य ।
त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषꣳ रक्षमाणस्तव व्रते ॥१३॥
उत्तानायामव भरा चिकित्वान्त्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान ।
अरुषस्तूपो रुशदस्य पाजऽइडायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट ॥१४॥

इडायास्त्वा पदे वयं नाभा पृथिव्याऽअधि ।
जातवेदो निधीमह्यग्ने हव्याय वोढवे ॥१५॥
प्रमन्महे शवसानाय शूषमाङ्गूषं गिर्वणसेऽअङ्गिरस्वत् ।
सुवृक्तिभि स्तुवतऽऋग्मियायार्चामार्कं नरे विश्रुताय ॥१६॥
प्र वो महे महि नमो भरध्वमाङ्गूष्यꣳ शवसानाय साम ।
येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाऽअर्चन्तोऽअङ्गिरसो गाऽअविन्दन् ॥१७॥
इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयाꣳसि ।
तितिक्षन्तेऽअभिशस्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः ॥१८॥
न ते दूरे परमा चिद्रजाꣳस्या तु प्र याहि हरिवो हरिभ्याम् ।
स्थिराय वृष्णे सवना कृतेमा युक्ता ग्रावाणः समिधानेऽअग्नौ ॥१९॥
अषाढं युत्सु पृतनासु पप्रिꣳ स्वर्षामप्सां वृजनस्य गोपाम् ।
भरेषुजाꣳसुक्षितिꣳसुश्रवसं जयन्तं त्वामनुमदेम सोम ॥२०॥
सोमो धेनुꣳसोमोऽअर्वन्तमाशुꣳसोमो वीरं कर्मण्यं ददाति ।
सादन्यं विदथ्यꣳसभेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै ॥२१॥
त्वमिमाऽओषधीः सोम विश्वास्त्वमपोऽअजनयस्त्वं गाः ।
त्वमाततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥२२॥
देवेन नो मनसा देव सोम रायो भागꣳसहसावन्नभियुध्य ।
मा त्वातनदीशिषे वीर्यस्योभयेभ्यः प्र चिकित्सा गविष्टौ ॥२३॥
अष्टौ व्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून् ।
हिरण्याक्षः सविता देवऽआगाद्दधद्रत्ना दाशुषे वार्याणि ॥२४॥
हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावापृथिवीऽअन्तरीयते ।
अपामीवां बाधते वेति सूर्यमभि कृष्णेन रजसा द्यामृणोति ॥२५॥
हिरण्यहस्तोऽअसुरः सुनीथः सुमृडीकः स्ववाँ यात्वर्वाङ् ।
अपसेधन्रक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषं गृणानः ॥२६॥

ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृताऽअन्तरिक्षे ।
तेभिर्नोऽअद्य पथिभिः सुगेभी रक्षा च नोऽअधि च ब्रूहि देव ॥२७॥
उभा पिबतमश्विनोभा नः शर्म यच्छतम् । अविद्रियाभिरूतिभिः ॥२८॥
अप्नस्वतीमश्विना वाचमस्मे कृतं नो दस्रा वृषणा मनीषाम् ।
अद्यूत्येऽवसे निह्वये वां वृधे च नो भवतं वाजसातौ ॥२९॥
द्युभिरक्तुभिः परिपातमस्मानरिष्टेभिरश्विना सौभगेभिः ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवीऽउत द्यौः ॥३०॥
आ कृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥३१॥
आ रात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः ।
दिवः सदाꣳसि बृहती वितिष्ठसऽआ त्वेषं वर्त्तते तमः ॥३२॥
उषस्तच्चित्रमाभरास्मभ्यं वाजिनीवति ।
येन तोकं च तनयं च धामहे ॥३३॥
प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रꣳ हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रꣳ हुवेम ॥३४॥
प्रातर्जितं भगमुग्रꣳ हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता ।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥३५॥
भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३६॥
उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्वऽउत मध्येऽअह्नाम् ।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानाꣳ सुमतौ स्याम ॥३७॥
भगऽएव भगवाँ२ऽअस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्वऽइज्जोहवीति स नो भग पुरऽएता भवेह ॥३८॥
समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिनऽआवहन्तु ॥३९॥

अश्वावतीर्गोमतीर्नऽउषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४०॥
पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदाचन। स्तोतारस्तऽइह स्मसि ॥४१॥
पथस्पथः परिपतिं वचस्या कामेन कृतोऽअभ्यानडर्कम् ।
स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियंधियꣳ सीषधाति प्र पूषा ॥४२॥
त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन् ॥४३॥
तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवाꣳसः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥४४॥
घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभितेऽअजरे भूरिरेतसा ॥४५॥
ये नः सपत्नाऽअप ते भवन्त्विन्द्राग्निभ्यामवबाधामहे तान् ।
वसवो रुद्राऽआदित्याऽउपरिस्पृशं मोग्रं चेत्तारमधिराजमक्रन् ॥४६॥
आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेयमश्विना ।
प्रायुस्तारिष्टं नी रपाꣳसि मृक्षतꣳ सेधतं द्वेषो भवतꣳ सचाभुवा ॥४७॥
एष व स्तोमो मरुतऽइयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥४८॥
सहस्तोमाः सह छन्दसऽआवृतः सहप्रमाऽऋषयः सप्त दैव्याः ।
पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीराऽअन्वालेभिरे रथ्यो न रश्मीन् ॥४९॥
आयुष्यं वर्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम् ।
इदꣳहिरण्यं वर्चस्वज्जैत्रायाविशतादु माम् ॥५०॥
न तद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳ ह्येतत् ।
यो बिभर्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः
स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥५१॥
यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः ।
तन्मऽआबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥५२॥

उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वजऽएकपात्पृथिवी समुद्रः ।
विश्वे देवाऽऋतावृधो हुवाना स्तुता मन्त्राः कविशस्ताऽअवन्तु ॥५३॥
इमा गिरऽआदित्येभ्यो घृतस्नूः सनाद्राजभ्यो जुह्वा जुहोमि ।
शृणोतु मित्रोऽअर्यमा भगो नस्तुविजातो वरुणो दक्षोऽअꣳशः ॥५४॥
सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् ।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतोऽअस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ ॥५५॥
उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे ।
उपप्रयन्तु मरुतः सुदानवऽइन्द्र प्राशूर्भवा सचा ॥५६॥
प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम् ।
यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रोऽअर्यमा देवाऽओकाꣳसि चक्रिरे ॥५७॥
ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व ।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥५८॥

इति चतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—आदित्या देवा वा १, ३, ५, ८। आदित्या देवाः २, ४, ६, ९, १२-१४, १६, २०, २२। सङ्कसुकः ७, १५। सुचीकः १०। शुनःशेपः ११। वैखानसः १७। भरद्वाजः शिरिम्बिठः १८। दमनः १९। मेधातिथिः २१॥

देवता—पितरः १। सविता २, ३। वायुसवितारौ ४, ५। प्रजापतिः ६। यमः ७। विश्वेदेवाः ८-१०। आपः ११, १२। कृषीबलाः १३। सूर्यः १४। ईश्वरः १५। अग्निः १६, १७, १९, २२। इन्द्रः १८। जातवेदाः २०। पृथिवी २१॥

छन्दः—पिपीलिकामध्यागायत्री [क], प्राजापत्याबृहती [र] १। गायत्री २, १६। उष्णिक् ३, ६। अनुष्टुप् ४, ८। भुरिग्गायत्री ५। त्रिष्टुप् ७, १५, १९। स्वराड्बृहती ९। निचृत्त्रिष्टुप् १०। विराडनुष्टुप् ११, १४, १८। निचृदनुष्टुप् १२। स्वराडनुष्टुप् १३। स्वराट्त्रिष्टुप् १७, २०। निचृद्गायत्री [क], प्राजापत्यागायत्री [र] २१। स्वराड्गायत्री २२॥

स्वरः—षड्जः १[क], २, ५, १६, २१, २२। मध्यमः १[र], ९। ऋषभः ३, ६। गान्धारः ४, ८, ११-१४, १८। धैवतः ७, १०, १५, १७, १९, २०॥

[क]अपेतो यन्तु पणयोऽसुम्ना देवपीयवः ।
अस्य लोकः सुतावतः ।
[र]द्युभिरहोभिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्ववसानमस्मै ॥१॥
सविता ते शरीरेभ्यः पृथिव्यां लोकमिच्छतु ।
तस्मै युज्यन्तामुस्रियाः ॥२॥
वायुः पुनातु सविता पुनात्वग्नेर्भ्राजसा सूर्यस्य वर्चसा ।
विमुच्यन्तामुस्रियाः ॥३॥
अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता ।
गोभाजऽइत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम् ॥४॥
सविता ते शरीराणि मातुरुपस्थऽआवपतु। तस्मै पृथिवि शम्भव ॥५॥
प्रजापतौ त्वा देवतायामुपोदके लोके निदधाम्यसौ। अप नः शोशुचदघम् ॥६॥
परं मृत्योऽअनुपरेहि पन्थां यस्तेऽअन्यऽइतरो देवयानात् ।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजाꣳरीरिषो मोत वीरान् ॥७॥
शं वातः शꣳहि ते घृणिः शं ते भवन्त्विष्टकाः ।
शं ते भवन्त्वग्नयः पार्थिवासो मा त्वाभिशूशुचन् ॥८॥
कल्पन्तां ते दिशस्तुभ्यमापः शिवतमास्तुभ्यं भवन्तु सिन्धवः ।
अन्तरिक्षꣳशिवं तुभ्यं कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः ॥९॥

अश्मन्वती रीयते सꣳरभध्वमुत्तिष्ठत प्रतरता सखायः ।
अत्रा जहीमोऽशिवा येऽअसञ्छिवान्वयमुत्तरेमाभि वाजान् ॥१०॥
अपाघमप किल्बिषमप कृत्यामपो रपः ।
अपामार्ग त्वमस्मदप दुःष्वप्न्यꣳ सुव ॥११॥
सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै
सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥१२॥
अनड्वाहमन्वारभामहे सौरभेयꣳस्वस्तये ।
स नऽइन्द्रऽइव देवेभ्यो वह्निः सन्तारणो भव ॥१३॥
उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१४॥
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरोऽअर्थमेतम् ।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन ॥१५॥
अग्नऽआयूꣳषि पवसऽआ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥१६॥
आयुष्मानग्ने हविषा वृधानो घृतप्रतीको घृतयोनिरेधि ।
घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेव पुत्रमभिरक्षतादिमान्त्स्वाहा ॥१७॥
परीमे गामनेषत पर्यग्निमहृषत ।
देवेष्वक्रत श्रवः कऽइमाँ२॥ऽआदधर्षति ॥१८॥
क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः ।
इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ॥१९॥
वह वपां जातवेदः पितृभ्यो यत्रैनान्वेत्थ निहितान् पराके ।
मेदसः कुल्याऽउप तान्त्स्रवन्तु सत्याऽएषामाशिषः सं नमन्ताꣳ स्वाहा ॥२०॥
[क]स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः।
[र]अप नः शोशुचदघम् ॥२१॥
अस्मात्त्वमधिजातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः ।
असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ॥२२॥

इति पञ्चत्रिंशोऽध्यायः॥

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

—:o:—

ऋषिः—दध्यङ्ङाथर्वणः १, २, ७-१२, १७-१९, २१-२४। विश्वामित्रः ३। वामदेवः ४-६। मेधातिथिः १३। सिन्धुद्वीपः १४-१६। लोपामुद्रा २०॥

देवता—अग्निः १, २०। बृहस्पतिः २। सविता ३। इन्द्रः ४-८। मित्रादयो लिङ्गोक्ताः ९। वातादयः १०। लिङ्गोक्ताः ११। आपः १२, १४-१६। पृथिवी १३। ईश्वरः १७-१९, २१, २२। सोमः २३। सूर्यः २४॥

छन्दः—पङ्क्तिः १। निचृत्पङ्क्तिः २। दैवीबृहती[क], निचृद्गायत्री[र] ३। गायत्री ४, १२, १४-१६। निचृद्गायत्री ५। पादनिचृद्गायत्री ६, १९। वर्द्धमानागायत्री ७। द्विपाद्विराड्गायत्री ८। निचृदनुष्टुप् ९, २१, २३। विराडनुष्टुप् १०। अतिशक्वरी ११। पिपीलिकामध्यानिचृद् गायत्री १३। भुरिक्शक्वरी १७। भुरिग्जगती १८। भुरिग्बृहती २०। भुरिगुष्णिक् २२। भुरिग्ब्राह्मीत्रिष्टुप् २४॥

स्वरः—पञ्चमः १, २, ११। मध्यमः ३[क], २०। षड्जः ३[र], ४-८, १२-१६, १९। गान्धारः ९, १०, २१, २३। धैवतः १७, २४। निषादः १८। ऋषभः २२॥

ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये
चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये। वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ ॥१॥
यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ॥२॥
[क]भूर्भुवः स्वः। [र]तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥३॥
कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता ॥४॥
कस्त्वा सत्यो मदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु ॥५॥
अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतिभिः ॥६॥
कया त्वं नऽऊत्याभिप्रमन्दसे वृषन्। कया स्तोतृभ्यऽआभर ॥७॥
इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥८॥
शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ॥९॥
शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्यः।
शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभिवर्षतु ॥१०॥

अहानि शं भवन्तु नः शꣳरात्रीः प्रतिधीयताम्।
शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शन्नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥११॥
शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥१२॥
स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः ॥१३॥
आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नऽऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे ॥१४॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः ॥१५॥
तस्माऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥१६॥
द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः
शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ
शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥१७॥
दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥१८॥
दृते दृꣳह मा। ज्योक्ते सन्दृशि जीव्यासं ज्योक्ते सन्दृशि जीव्यासम् ॥१९॥
नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।
अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव ॥२०॥
नमस्तेऽअस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे।
नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे ॥२१॥
यतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः ॥२२॥
सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु
योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥२३॥
तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं
जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः
शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥२४॥

इति षट्त्रिंशोऽध्यायः॥

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः

—:०:—

ऋषिः—दध्यङ्ङाथर्वणः १, ३-६, ८-१६, १८। श्यावाश्वः २। कण्वः ७। दीर्घतमाः १७। अथर्वणः १९-२१।

देवता—सविता १, २, ११। द्यावापृथिव्यौ ३। यज्ञः ४-६, ८। ईश्वरः ७, १४, १६-२१। विद्वान् ९, १३। विद्वांसः १०। पृथिवी १२। अग्निः १५॥

छन्दः—निचृदुष्णिक् १। जगती २। ब्राह्मीगायत्री ३। निचृत्पङ्क्तिः ४। स्वराड्ब्राह्मीगायत्री ५। भुरिगतिजगती ६। निचृदष्टिः ७। स्वराडतिधृतिः ८। अतिशक्वरी ९। स्वराट्पङ्क्तिः १०। त्रिष्टुप् ११। स्वराडुत्कृतिः १२। निचृद्गायत्री १३। भुरिगनुष्टुप् १४। निचृद्ब्राह्म्यनुष्टुप् १५। भुरिग्बृहती १६। निचृत्त्रिष्टुप् १७। निचृदत्यष्टिः १८। विराडुष्णिक् १९। निचृदतिजगती २०। अनुष्टुप् २१॥

स्वरः—ऋषभः १, ८, १९। निषादः २, ६, २०। षड्जः ३, ५, १२, १३। पञ्चमः ४, ९, १०। मध्यमः ७, १६। धैवतः ११, १७। गान्धारः १४, १५, १८, २१॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
आददे नारिरसि ॥१॥
युञ्जते मनऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः ॥२॥
देवी द्यावापृथिवी मखस्य वामद्य शिरो राध्यासं देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥३॥
देव्यो वम्र्यो भूतस्य प्रथमजा मखस्य वोऽद्य शिरो राध्यासं
देवयजने पृथिव्याः। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥४॥
इयत्यग्रऽआसीन्मखस्य तेऽद्य शिरो राध्यासं देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥५॥
इन्द्रस्यौज स्थ मखस्य वोऽद्य शिरो राध्यासं देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥६॥

प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता ।
अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥७॥
मखस्य शिरोऽसि। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखस्य शिरोऽसि। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखस्य शिरोऽसि। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥८॥
अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥९॥
ऋजवे त्वा साधवे त्वा सुक्षित्यै त्वा। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ॥१०॥
यमाय त्वा मखाय त्वा सूर्यस्य त्वा तपसे ।
देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु पृथिव्याः सꣳस्पृशस्पाहि।
अर्चिरसि शोचिरसि तपोऽसि ॥११॥
अनाधृष्टा पुरस्तादग्नेराधिपत्यऽआयुर्मे दाः
पुत्रवती दक्षिणतऽइन्द्रस्याधिपत्ये प्रजां मे दाः ।

सुषदा पश्चाद्देवस्य सवितुराधिपत्ये चक्षुर्मे दाऽ
आश्रुतिरुत्तरतो धातुराधिपत्ये रायस्पोषं मे दाः ।
विधृतिरुपरिष्टाद् बृहस्पतेराधिपत्यऽओजो मे दा
विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यस्पाहि मनोरश्वासि ॥१२॥
स्वाहा मरुद्भिः परिश्रीयस्व दिवः सꣳस्पृशस्पाहि ।
मधु मधु मधु ॥१३॥
गर्भो देवानां पिता मतीनां पतिः प्रजानाम् ।
सं देवो देवेन सवित्रा गत स꣡ꣳ सूर्येण रोचते ॥१४॥
समग्निरग्निना गत सं दैवेन सवित्रा सꣳसूर्येणारोचिष्ट ।
स्वाहा समग्निस्तपसा गत सं दैव्येन सवित्रा सꣳसूर्येणारूरुचत ॥१५॥
धर्त्ता दिवो विभाति तपसस्पृथिव्यां धर्त्ता देवो देवानाममर्त्यस्तपोजाः ।
वाचमस्मे नियच्छ देवायुवम् ॥१६॥
अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम् ।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसानऽआवरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तः ॥१७॥
विश्वासां भुवां पते विश्वस्य मनसस्पते विश्वस्य वचसस्पते
सर्वस्य वचसस्पते। देवश्रुत्त्वं देव घर्म देवो देवान् पाह्यत्र
प्रावीरनु वां देववीतये। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्याम् ॥१८॥
हृदे त्वा मनसे त्वा दिवे त्वा सूर्याय त्वा ।
ऊर्ध्वोऽअध्वरं दिवि देवेषु धेहि ॥१९॥
पिता नोऽसि पिता नो बोधि नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः।
त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेम पुत्रान्पशून् मयि धेहि प्रजामस्मासु
धेह्यरिष्टाहꣳसह पत्या भूयासम् ॥२०॥
अहः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा ।
रात्रिः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा ॥२१॥

इति सप्तत्रिंशोऽध्यायः॥

अथाष्टात्रिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—अथर्वणः १-४। दीर्घतमाः ५-२८॥

देवता—सविता १, २४। सरस्वती २, ४। पूषा ३। वाक् ५। अश्विनौ ६, १०, १२,१३। वातः ७। इन्द्रः ८, २६। वायुः ९। यज्ञः ११, १८-२२, २७, २८। द्यावापृथिवी १४। पूषादयो लिङ्गोक्ताः १५। रुद्रादयः १६। अग्निः १७। आपः २३। ईश्वरः २५॥

छन्दः—उष्णिक् १। निचृद्गायत्री २। भुरिक्साम्नीबृहती ३। आर्चीपङ्क्तिः ४, १२। निचृदतिजगती ५। निचृदत्यष्टिः ६। स्वराडष्टिः ७। अष्टिः ८। भुरिग्गायत्री ९। अनुष्टुप् १०, २१। विराडुष्णिक् ११। निचृदुष्णिक् १३। अतिशक्वरी १४। स्वराड्जगती १५। भुरिगतिधृतिः १६। निचृदतिशक्वरी १७। भुरिगाकृतिः १८। निचृदुपरिष्टाद्बृहती १९। निचृत्त्रिष्टुप् २०। परोष्णिक् २२। निचृदनुष्टुप् २३। विराडनुष्टुप् २४। साम्नीपङ्क्तिः २५। स्वराट्पङ्क्तिः २६। पङ्क्तिः २७। स्वराड्धृतिः २८॥

स्वरः—ऋषभः १, ११, १३, २२, २८। षड्जः २, ९, १६। मध्यमः ३, ७, ८, १९। पञ्चमः ४, १२, १४, १७, १८, २५-२७। निषादः ५, १५। गान्धारः ६, १०, २१, २३,२४। धैवतः २०॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
आददेऽदित्यै रास्नासि ॥१॥
इडऽएह्यदितऽएहि सरस्वत्येहि । असावेह्यसावेह्यसावेहि ॥२॥
अदित्यै रास्नासीन्द्राण्याऽउष्णीषः । पूषासि घर्माय दीष्व ॥३॥
अश्विभ्यां पिन्वस्व सरस्वत्यै पिन्वस्वेन्द्राय पिन्वस्व ।
स्वाहेन्द्रवत् स्वाहेन्द्रवत् स्वाहेन्द्रवत् ॥४॥
यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभूर्यो रत्नधा वसुविद्यः सुदत्रः।
येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धातवेऽकः।
उर्वन्तरिक्षमन्वेमि ॥५॥
गायत्रं छन्दोऽसि त्रैष्टुभं छन्दोऽसि द्यावापृथिवीभ्यां त्वा परि-
गृह्णाम्यन्तरिक्षेणोपयच्छामि । इन्द्राश्विना मधुनः सारघस्य घर्मं
पात वसवो यजत वाट् । स्वाहा सूर्यस्य रश्मये वृष्टिवनये ॥६॥

समुद्राय त्वा वाताय स्वाहा सरिराय त्वा वाताय स्वाहा ।
अनाधृष्याय त्वा वाताय स्वाहाप्रतिधृष्याय त्वा वाताय स्वाहा ।
अवस्यवे त्वा वाताय स्वाहाशिमिदाय त्वा वाताय स्वाहा ॥७॥
इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्रवते स्वाहेन्द्राय त्वादित्यवते स्वाहेन्द्राय
त्वाभिमातिघ्ने स्वाहा । सवित्रे त्वऽऋभुमते विभुमते वाजवते
स्वाहा बृहस्पतये त्वा विश्वदेव्यावते स्वाहा ॥८॥
यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्माय स्वाहा घर्मः पित्रे ॥९॥
विश्वाऽआशा दक्षिणसद्विश्वान्देवानयाडिह ।
स्वाहाकृतस्य घर्मस्य मधोः पिबतमश्विना ॥१०॥
दिवि धाऽइमं यज्ञमिमं यज्ञं दिवि धाः ।
स्वाहाग्नये यज्ञियाय शं यजुर्भ्यः ॥११॥
अश्विना घर्मं पातꣳहार्द्वानमहर्दिवाभिरूतिभिः ।
तन्त्रायिणे नमो द्यावापृथिवीभ्याम् ॥१२॥
अपातामश्विना घर्ममनु द्यावापृथिवीऽअमꣳसाताम् ।
इहैव रातयः सन्तु ॥१३॥
इषे पिन्वस्वोर्जे पिन्वस्व ब्रह्मणे पिन्वस्व क्षत्राय पिन्वस्व
द्यावापृथिवीभ्यां पिन्वस्व । धर्मासि सुधर्मामेन्यस्मे नृम्णानि
धारय ब्रह्म धारय क्षत्रं धारय विशं धारय ॥१४॥
स्वाहा पूष्णे शरसे स्वाहा ग्रावभ्यः स्वाहा प्रतिरवेभ्यः ।
स्वाहा पितृभ्यऽऊर्ध्वबर्हिर्भ्यो घर्मपावभ्यः स्वाहा
द्यावापृथिवीभ्याꣳ स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः ॥१५॥
स्वाहा रुद्राय रुद्रहूतये स्वाहा सं ज्योतिषा ज्योतिः ।
अहः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा ।
रात्रिः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा ।
मधु हुतमिन्द्रतमेऽअग्नावश्याम ते देव घर्म
नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः ॥१६॥

अभीमं महिमा दिवं विप्रो बभूव सप्रथाः ।
उत श्रवसा पृथिवीꣳसꣳसीदस्व महाँ२॥ऽअसि रोचस्व देववीतमः ।
वि धूममग्नेऽअरुषं मियेद्ध्य सृज प्रशस्त दर्शतम् ॥१७॥
या ते घर्म दिव्या शुग्या गायत्र्याꣳ हविर्धाने ।
सा तऽआप्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा ।
या ते घर्मान्तरिक्षे शुग्या त्रिष्टुभ्याग्नीध्रे ।
सा तऽआप्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा ।
या ते घर्म पृथिव्याꣳ शुग्या जगत्याꣳसदस्या ।
सा तऽआप्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा ॥१८॥
क्षत्रस्य त्वा परस्पाय ब्रह्मणस्तन्वं पाहि ।
विशस्त्वा धर्मणा वयमनुक्रामाम सुविताय नव्यसे ॥१९॥
चतुःस्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्य सप्रथाः स नो विश्वायुः सप्रथाः स नः
सर्वायुः सप्रथाः । अप द्वेषोऽअप ह्वरोऽन्यव्रतस्य सश्चिम ॥२०॥
घर्मैतत्ते पुरीषं तेन वर्द्धस्व चा च प्यायस्व ।
वर्द्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि ॥२१॥
अचिक्रदद् वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः ।
सꣳसूर्येण दिद्युतदुदधिर्निधिः ॥२२॥
सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै
सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥२३॥
उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥२४॥
एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ॥२५॥
यावती द्यावापृथिवी यावच्च सप्त सिन्धवो वितस्थिरे ।
तावन्तमिन्द्र ते ग्रहमूर्जा गृह्णाम्यक्षितं मयि गृह्णाम्यक्षितम् ॥२६॥

मयि त्यदिन्द्रियं बृहन्मयि दक्षो मयि क्रतुः ।
घर्मस्त्रिशुग्विराजति विराजा ज्योतिषा सह ब्रह्मणा तेजसा सह ॥२७॥
पयसो रेतऽआभृतं तस्य दोहमशीमह्युत्तरामुत्तराᳬं समाम् ।
त्विषः संवृक्क्रत्वे दक्षस्य ते सुषुम्णस्य ते सुषुम्णाग्निहुतः ।
इन्द्रपीतस्य प्रजापतिभक्षितस्य मधुमतऽउपहूतऽउपहूतस्य भक्षयामि ॥२८॥

इत्यष्टात्रिंशोऽध्यायः॥

अथैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

—:O:—

ऋषिः—दीर्घतमाः १-१३॥

देवता—प्राणादयो लिङ्गोक्ताः १। दिगादयो लिङ्गोक्ताः २। वागादयो लिङ्गोक्ताः ३। श्रीः ४। प्रजापतिः ५। सवितादयः ६। मरुतः ७। अग्न्यादयो लिङ्गोक्ताः ८। उग्रादयो लिङ्गोक्ताः ९। अग्निः १०-१३॥

छन्दः—पङ्क्तिः १। भुरिगनुष्टुप् २। स्वराडनुष्टुप् ३। निचृद्बृहती ४। कृतिः ५। विराड्धृतिः ६। भुरिग्गायत्री ७। निचृदत्यष्टिः ८। भुरिगष्टिः ९। आकृतिः १०। स्वराड् जगती ११। त्रिष्टुप् १२। निचृत्त्रिष्टुप् १३॥

स्वरः—पञ्चमः १, १०। गान्धारः २, ३, ८। मध्यमः ४, ९। निषादः ५, ११। ऋषभः ६। षड्जः ७। धैवतः १२, १३॥

स्वाहा प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः। पृथिव्यै स्वाहाग्नये स्वाहान्तरिक्षाय
स्वाहा वायवे स्वाहा। दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा ॥१॥
दिग्भ्यः स्वाहा चन्द्राय स्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहाद्भ्यः स्वाहा
वरुणाय स्वाहा। नाभ्यै स्वाहा पूताय स्वाहा ॥२॥
वाचे स्वाहा प्राणाय स्वाहा प्राणाय स्वाहा ।
चक्षुषे स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा ॥३॥
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय ।
पशूनाᳬं रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥४॥
प्रजापतिः सम्भ्रियमाणः सम्राट् सम्भृतो वैश्वदेवः सᳬंसन्नो
घर्मः प्रवृक्तस्तेजऽउद्यतऽआश्विनः पयस्यानीयमाने पौष्णो
विष्यन्दमाने मारुतः क्लथन्। मैत्रः शरसि सन्ताय्यमाने
वायव्यो ह्रियमाणऽआग्नेयो हूयमानो वाग्घुतः ॥५॥
सविता प्रथमेऽहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीयऽआदित्यश्चतुर्थे
चन्द्रमाः पञ्चमऽऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे।
मित्रो नवमे वरुणो दशमऽइन्द्रऽएकादशे विश्वे देवा द्वादशे॥६॥

उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च ।
सासह्वाँश्चाभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा ॥७॥
अग्निꣳ हृदयेनाशनिꣳ हृदयाग्रेण पशुपतिं कृत्स्नहृदयेन भवं यक्ना ।
शर्वं मतस्नाभ्यामीशानं मन्युना महादेवमन्तः पर्शव्येनोग्रं देवं
वनिष्ठुना वसिष्ठहनुः शिङ्गीनि कोश्याभ्याम् ॥८॥
उग्रं लोहितेन मित्रꣳ सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतो
बलेन साध्यान् प्रमुदा । भवस्य कण्ठ्यꣳ रुद्रस्यान्तः पार्श्व्यं
महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपतेः पुरीतत् ॥९॥
लोमभ्यः स्वाहा लोमभ्यः स्वाहा त्वचे स्वाहा त्वचे स्वाहा
लोहिताय स्वाहा लोहिताय स्वाहा मेदोभ्यः स्वाहा
मेदोभ्यः स्वाहा । माꣳसेभ्यः स्वाहा माꣳसेभ्यः स्वाहा
स्नावभ्यः स्वाहा स्नावभ्यः स्वाहास्थभ्यः स्वाहास्थभ्यः स्वाहा
मज्जभ्यः स्वाहा मज्जभ्यः स्वाहा । रेतसे स्वाहा पायवे स्वाहा ॥१०॥
आयासाय स्वाहा प्रायासाय स्वाहा संयासाय स्वाहा
वियासाय स्वाहोद्यासाय स्वाहा । शुचे स्वाहा शोचते स्वाहा
शोचमानाय स्वाहा शोकाय स्वाहा ॥११॥
तपसे स्वाहा तप्यते स्वाहा तप्यमानाय स्वाहा
तप्ताय स्वाहा घर्माय स्वाहा । निष्कृत्यै स्वाहा
प्रायश्चित्त्यै स्वाहा भेषजाय स्वाहा ॥१२॥
यमाय स्वाहान्तकाय स्वाहा मृत्यवे स्वाहा ।
ब्रह्मणे स्वाहा ब्रह्महत्यायै स्वाहा विश्वेभ्यो
देवेभ्यः स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याꣳ स्वाहा ॥१३॥

इत्येकोनचत्वारिंशोऽध्यायः॥

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः॥

—:०:—

ऋषिः—दीर्घतमाः १-१७॥

देवता—आत्मा १-३, ५-१७। ब्रह्म ४॥

छन्दः—अनुष्टुप् १, ३, ९-११, १३, १७। भुरिगनुष्टुप् २। निचृत्त्रिष्टुप् ४, १६। निचृदनुष्टुप् ५-७, १२। स्वराड्जगती ८। स्वराडुष्णिक् १४, १५॥

स्वरः—गान्धारः १-३, ५-७, ९-१३, १७। धैवतः ४, १६। निषादः ८। ऋषभः १४, १५॥

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥१॥
कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥२॥
असुर्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः ।
ताँस्ते प्रेत्यापिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥३॥
अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवाऽआप्नुवन् पूर्वमर्शत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥४॥
तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥५॥
यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति ॥६॥
यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः ॥७॥
स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥८॥

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ सम्भूत्याᳫं रताः ॥९॥
अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥१०॥
सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयᳫंसह ।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते ॥११॥
अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायाᳫंरताः ॥१२॥
अन्यदेवाहुर्विद्यायाऽअन्यदाहुरविद्यायाः ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥१३॥
विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयᳫंसह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥१४॥
वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तᳫंशरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतᳫंस्मर ॥१५॥
अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम ॥१६॥
हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म ॥१७॥

इति चत्वारिंशोऽध्यायः॥
इत्युत्तरविंशतिः समाप्ता॥
समाप्ता यजुर्वेद-संहिता॥

यजुर्वेद-मन्त्रानुक्रमणिका

अ

ह

सामवेद–संहिता

ओ३म्

सामवेद–संहिता

सम्पादक
परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

प्रकाशक :
वेदज्योति प्रेस
जी-७, मॉडल टाउन, दिल्ली-११० ००९

प्रकाशक	:	**वेदज्योति प्रेस,** जी-७, मॉडल टाउन, दिल्ली-११० ००९
संस्करण	:	प्रथम, सन् २००४
शब्द संयोजक	:	**भगवती लेज़र प्रिंट्स,**
मूल्य	:	चारों वेदों का सेट ३५०.०० रुपये
मुद्रक	:	**राधा प्रेस,** कैलाश नगर, दिल्ली-११० ०३१

भूमिका

वेद परमात्मा-प्रदत्त ज्ञान है। यह ज्ञान परमात्मा ने सृष्टि के आदि में मानवमात्र के कल्याण के लिए दिया था। वेद चार हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। सृष्टि के आदि में परमपिता परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा—इन चार ऋषियों के हृदय में चार संहिताओं का प्रकाश किया। वैदिक कालगणना के अनुसार सृष्टि को उत्पन्न हुए १,९६,०८,५३,०९७ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, तदनुसार वेदों को उत्पन्न हुए भी इतने ही वर्ष व्यतीत हुए समझने चाहिएँ।

वेद चार हैं और उनके विषय भी चार ही हैं—१. ज्ञान, २. कर्म, ३. उपासना और ४. विज्ञान। ब्रह्म से लेकर तृणपर्यन्त पदार्थों का ज्ञान ऋग्वेद में दिया गया है।

यजुर्वेद कर्मकाण्ड का वेद है। इसमें अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधपर्यन्त यज्ञों का वर्णन है। इसके साथ ही कला-कौशल, उद्योग-धन्धे और श्रेष्ठ कर्म—उत्तम कर्म, परोपकार करने का निर्देश है। यजुर्वेद का उद्घोष है—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतः समाः। —यजुः० ४०।२

मनुष्य कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करे।

कर्म भी कैसे? निर्माणात्मक कर्म करे, परोपकार करे।

सामवेद उपासना का वेद है। यह हृदय का वेद है! उपासना क्यों करें? किसकी उपासना करें? कहाँ करें? कैसे करें? इन सभी प्रश्नों का उत्तर सामवेद में मिलेगा। परमात्मा को ढूँढने के लिए कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है। वह तो हमारे हृदय-मन्दिर में ही विद्यमान है। आशा और मनसा की लताओं को उखाड़कर मन के वन में बैठो।

उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत॥ —साम० १४३

हृदय-मन्दिर की गुफा में और नदियों के सङ्गम—आज्ञाचक्र=भ्रूमध्य में ध्यान लगाने से मनुष्य विप्र बनता है, मेधावी और ज्ञान-सम्पन्न हो जाता है।

उपसना का वेद होने के कारण ही श्रीकृष्णजी ने कहा था—**वेदानां सामवेदोऽस्मि।** [गीता १०।२२] वेदों में मैं सामवेद हूँ।

अथर्ववेद विज्ञान-वेद है। इसमें ईश्वर, जीव और प्रकृतिविषयक विशेष ज्ञान का समावेश है। यह युद्ध और शान्ति का वेद है।

सामवेद के अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं, फिर यह संस्करण क्यों? इस संस्करण की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं—

१. इसकी टाइप अन्य संस्करणों की अपेक्षा मोटी रक्खी गई है।

२. शुद्धतम छापने का प्रयत्न किया गया है। हमारे विचार में इस संस्करण में आदि से अन्त तक

कोई अशुद्धि नहीं होगी।

३. मन्त्रों पर क्रम संख्या दे दी गई है, जिससे मन्त्रों को ढूँढना और उनके पते देना सरल हो जाएगा।

४. बार्डर देकर इसे नयनाभिराम बनाने का प्रयत्न किया है।

५. आर्यमुसाफ़िर पं० लेखरामजी ने वसीयत की थी—''आर्यसमाज से तहरीर और तक़रीर [लेखन और प्रचार] का कार्य बन्द नहीं होना चाहिए।'' उनकी बलिदान-शताब्दी पर उनके प्रति यह सच्ची श्रद्धाञ्जलि है।

स्वर-चिह्न

मन्त्रों पर जो १, २, ३ आदि संख्या डली हुई है, यह क्या है? ये संख्याएँ उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के चिह्न हैं। ऋग्वेद आदि अन्य वेदों में अनुदात्त का चिह्न पड़ी [-] रेखा से और स्वरित का चिह्न खड़ी [।] रेखा से दिखाया जाता है। उदात्त पर कोई चिह्न नहीं होता। सामवेद में १, २, ३ अङ्क क्रमशः उदात्त, स्वरित और अनुदात्त के द्योतक हैं।

हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि जनता इस संस्करण का स्वागत करेगी। जो भाष्यसहित पढ़ना चाहें, उनके लिए भगवती भाष्य से समलंकृत हमारे द्वारा किया हुआ 'सामवेदभाष्यम्' पृथक् ग्रन्थ के रूप में उपलब्ध है।

दिनाङ्क : १५।९।२००३

विदुषामनुचरः
—जगदीश्वरानन्द

ओ३म्

सामवेद-संहिता

पूर्वार्चिकः

अथ आग्नेयं काण्डम्

अथ प्रथमोऽध्यायः

प्रथमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१, २, ४, ७, ९ भरद्वाजः; ३ मेधातिथिः; ५ उशनाः; ६ सुदीतिपुरुमीढौ तयोर्वान्यतरः; ८ वत्सः; १० वामदेवः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री; २ शङ्कुमती पिपीलिकामध्या-गायत्री; ५ विराड्गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१. अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ १ ॥

२. त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥ २ ॥

३. अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ ३ ॥

४. अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः ॥ ४ ॥

५. प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्ने रथं न वेद्यम् ॥ ५ ॥

६. त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः। उत द्विषो मर्त्यस्य ॥ ६ ॥

७. एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः ॥ ७ ॥

८. आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात्। अग्ने त्वां कामये गिरा ॥ ८ ॥

९. त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥ ९ ॥

१०. अग्ने विवस्वदा भरास्मभ्यमूतये महे। देवो ह्यसि नो दृशे ॥ १० ॥

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१ आयुङ्क्ष्वाहिः; २ वामदेवः; ३, ८, ९ प्रयोगः; ४ मधुच्छन्दाः; ५, ७ शुनःशेपः; ६ मेधातिथिः; १० वत्सः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११. नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ॥१॥

१२. दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम् । यजिष्ठमृञ्जसे गिरा ॥२॥

१३. उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिरन् ॥३॥

१४. उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥४॥

१५. जराबोध तद्विविड्ढि विशेविशे यज्ञियाय । स्तोमं रुद्राय दृशीकम् ॥५॥

१६. प्रति त्यं चारुमध्वरं गोपीथाय प्र हूयसे । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥६॥

१७. अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः । सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥७॥

१८. और्वभृगुवच्छुचिमप्रवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥८॥

१९. अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः । अग्निमिन्धे विवस्वभिः ॥९॥

२०. आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिः पश्यन्ति वासरम् । परो यदिध्यते दिवि ॥१०॥

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१ प्रयोगः; २, ५ भरद्वाजः; ३, १० वामदेवः; ४, ६ वसिष्ठः; ७ विरूपः; ८ शुनःशेपः; ९ गोपवनः; ११ प्रस्कण्वः; १२ मेधातिथिः; १३ सिन्धुद्वीप आम्बरीषः, त्रित आप्त्यो वा; १४ उशनाः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ विराड्गायत्री; २-१४ गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

२१. अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥१॥

२२. अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यंसद्विश्वं न्या३त्रिणम् । अग्निर्नो वंसते रयिम् ॥२॥

२३. अग्ने मृड महाँ अस्यय आ देवयुं जनम् । इयेथ बर्हिरासदम् ॥३॥

२४. अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति स्म देव रीषतः । तपिष्ठैरजरो दह ॥४॥

२५. अग्ने युङ्क्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः । अरं वहन्त्याशवः ॥५॥

२६. नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं धीमहे वयम् । सुवीरमग्न आहुत ॥६॥

२७. अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपां रेतांसि जिन्वति ॥७॥

२८. इममू षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसम् । अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥८॥

२९. तं त्वा गोपवनो गिरा जनिष्ठदग्ने अङ्गिरः । स पावक श्रुधी हवम् ॥९॥

३०. परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥१०॥

३१. उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥११॥

३२. कविमग्निमुप स्तुहि सत्यधर्माणमध्वरे । देवममीवचातनम् ॥१२॥

३३. शं नो देवीरभिष्टये शं नो भवन्तु पीतये । शं योरभि स्रवन्तु नः ॥१३॥

३४. कस्य नूनं परीणसि धियो जिन्वसि सत्पते । गोषाता यस्य ते गिरः ॥१४॥

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१, ३ शंयुः; २, ५, ८, ९ भर्गः; ४ वसिष्ठः; ६ प्रस्कण्वः; ७ तृणपाणिः; १० सोभरिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

३५. यज्ञायज्ञा वो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे ।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥१॥

३६. पाहि नो अग्न एकया पाह्यू३त द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥२॥

३७. बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा ।
भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवत् पावक दीदिहि ॥३॥

३८. त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वं दयन्त गोनाम् ॥४॥

३९. अग्ने जरितर्विश्पतिस्तपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान् गृहपते महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥५॥

४०. अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य ।
आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषर्बुधः ॥६॥

४१. त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय ।
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥७॥

४२. त्वमित् सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतः कविः ।
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥ ८ ॥

४३. आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम् ।
रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती सुयशस्तरम् ॥ ९ ॥

४४. यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्वग्नये ॥ १० ॥

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—१ वसिष्ठः; २ भर्गः; ३, ७ सोभरिः; ४ मनुः; ५ सुदीतिपुरुमीढौ; ६ प्रस्कण्वः; ८ मेधातिथिर्मेध्यातिथिश्च; ९ विश्वामित्रः; १० कण्वः ॥ देवता—१-७, ९, १० अग्निः; ८ इन्द्रः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

४५. एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥ १ ॥

४६. शेषे वनेषु मातृषु सं त्वा मर्तास इन्धते ।
अतन्द्रो हव्यं वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥ २ ॥

४७. अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन् व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्तु नो गिरः ॥ ३ ॥

४८. अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पते देवा अवो वरेण्यम् ॥ ४ ॥

४९. अग्निमीडिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम् ।
अग्निं राये पुरुमीढ श्रुतं नरोऽग्निः सुदीतये छर्दिः ॥ ५ ॥

५०. श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः ।
आ सीदतु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातर्यावभिरध्वरे ॥ ६ ॥

५१. प्र दैवोदासो अग्निर्देव इन्द्रो न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य शर्मणि ॥ ७ ॥

५२. अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि ।
अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण ॥ ८ ॥

५३. कायमानो वना त्वं यन्मातॄरजगन्नपः ।
न तत्ते अग्ने प्रमृषे निवर्तनं यद् दूरे सन्निहाभुवः ॥ ९ ॥

५४. नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते ।
दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः ॥ १० ॥

इति प्रथमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ प्रथमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

षष्ठी दशतिः

ऋषिः—१, ७ वसिष्ठः; २, ३, ५ कण्वः; ४ सोभरिः; ६ उत्कीलः; ८ विश्वामित्रः ॥ देवता—१, ४-८ अग्निः; २ ब्रह्मणस्पतिः; ३ यूपः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

५५. देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्वासिचम् ।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद् वो देव ओहते ॥ १ ॥

५६. प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता ।
अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥ २ ॥

५७. ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता ।
ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भिर्विह्वयामहे ॥ ३ ॥

५८. प्र यो राये निनीषति मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥ ४ ॥

५९. प्र वो यह्वं पुरूणां विशां देवयतीनाम् ।
अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिर्वृणीमहे यं समिदन्य इन्धते ॥ ५ ॥

६०. अयमग्निः सुवीर्यस्येशे हि सौभगस्य ।
राय ईशे स्वपत्यस्य गोमत ईशे वृत्रहथानाम् ॥ ६ ॥

६१. त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे ।
त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि यासि च वार्यम् ॥ ७ ॥

६२. सखायस्त्वा ववृमहे देवं मर्त्तास ऊतये ।
अपां नपातं सुभगं सुदंससं सुप्रतूर्तिमनेहसम् ॥ ८ ॥

सप्तमी दशतिः

ऋषिः—१ श्यावाश्ववामदेवौ; २ उपस्तुतो वार्ष्टिहव्यः; ३ बृहदुक्थः; ४ कुत्सः; ५, ६ भरद्वाजः; ७ वामदेवः; ८, १० वसिष्ठः; ९ त्रिशिरास्त्वाष्ट्रः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१, ३, ५-९ त्रिष्टुप्; २, ४ जगती; १० त्रिपाद् विराड् गायत्री ॥ स्वरः—१, ३, ५-९ धैवतः; २, ४ निषादः; १० षड्जः ॥

६३. आ जुहोता हविषा मर्जयध्वं नि होतारं गृहपतिं दधिध्वम् ।
इडस्पदे नमसा रातहव्यं सपर्यता यजतं पस्त्यानाम् ॥ १ ॥

६४. चित्र इच्छिशोस्तरुणस्य वक्षथो न यो मातरावन्वेति धातवे ।
अनूधा यदजीजनदधा चिदा ववक्षत्सद्यो महि दूत्यां३ चरन् ॥ २ ॥

६५. इदं त एकं पर ऊ त एकं तृतीयेन ज्योतिषा सं विशस्व ।
संवेशनस्तन्वे३ चारुरेधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे ॥ ३ ॥

६६. इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया ।
भद्रा हि नः प्रमतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ४ ॥

६७. मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्नः पात्रं जनयन्त देवाः ॥ ५ ॥

६८. वि त्वदापो न पर्वतस्य पृष्ठादुक्थेभिरग्ने जनयन्त देवाः ।
तं त्वा गिरः सुष्टुतयो वाजयन्त्याजिं न गिर्ववाहो जिग्युरश्वाः ॥ ६ ॥

६९. आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।
अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥ ७ ॥

७०. इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन ।
नरो हव्येभिरीडते सबाध आग्निरग्रमुषसामशोचि ॥ ८ ॥

७१. प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति ।
दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥ ९ ॥

७२. अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतं जनयत प्रशस्तम् ।
दूरेदृशं गृहपतिमथव्युम् ॥ १० ॥

अष्टमी दशतिः

ऋषिः—१ बुधगविष्ठिरौ; २, ५ वत्सप्रीः; ३ भरद्वाजः; ४, ७ विश्वामित्रः; ६ वसिष्ठः; ८ पायुः ॥ देवता—१, २, ४-८ अग्निः; ३ पूषा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

७३. अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् ।
यह्वाइव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सस्रते नाकमच्छ ॥ १ ॥

७४. प्र भूर्जयन्तं महां विपोधां मूरैरमूरं पुरां दर्माणम् ।
नयन्तं गीर्भिर्वना धियं धा हरिश्मश्रुं न वर्मणा धनर्चिम् ॥ २ ॥

७५. शुक्रं ते अन्यद्यजतं ते अन्यद् विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि ।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावन्भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तु ॥ ३ ॥

७६. इडामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥ ४ ॥

७७. प्र होता जातो महान्नभोविन्नृषद्मा सीददपां विवर्ते ।
दधद्यो धायी सुते वयांसि यन्ता वसूनि विधते तनूपाः ॥ ५ ॥

७८. प्र सम्राजमसुरस्य प्रशस्तं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य ।
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दद्वारा वन्दमाना विवष्टु ॥ ६ ॥

७९. अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भइवेत् सुभृतो गर्भिणीभिः ।
दिवेदिव ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥ ७ ॥

८०. सनादग्ने मृणसि यातुधानान्न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः ।
अनु दह सहमूरान् कयादो मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ॥ ८ ॥

नवमी दशतिः

ऋषिः—१ गय आत्रेयः; २ वामदेवः; ३, ४ भरद्वाजः; ५ मृक्तवाहा द्वितः; ६ वसूयव आत्रेयः; ७, ९ गोपवनः; ८ पूरुरात्रेयः; १० वामदेवः, कश्यपो वा मारीचो मनुर्वा वैवस्वतः; उभौ वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

८१. अग्न ओजिष्ठमा भर द्युम्नमस्मभ्यमध्रिगो ।
प्र नो राये पनीयसे रत्सि वाजाय पन्थाम् ॥ १ ॥

८२. यदि वीरो अनु ष्यादग्निमिन्धीत मर्त्यः ।
आजुह्वद्धव्यमानुषक् शर्म भक्षीत दैव्यम् ॥ २ ॥

८३. त्वेषस्ते धूम ऋण्वति दिवि संच्छुक्र आततः ।
सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥ ३ ॥

८४. त्वं हि क्षैतवद् यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे ।
त्वं विचर्षणे श्रवो वसो पुष्टिं न पुष्यसि ॥ ४ ॥

८५. प्रातरग्निः पुरुप्रियो विश स्तवेतातिथिः ।
विश्वे यस्मिन्नमर्त्ये हव्यं मर्तास इन्धते ॥ ५ ॥

८६. यद् वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो ।
महिषीव त्वद् रयिस्त्वद् वाजा उदीरते ॥ ६ ॥

८७. विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम् ।
अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥ ७ ॥

८८. बृहद् वयो हि भानवेऽर्चा देवायाग्नये ।
यं मित्रं न प्रशस्तये मर्तासो दधिरे पुरः ॥ ८ ॥

८९. अगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम् ।
यः स्म श्रुतर्वन्नार्क्षे बृहदनीक इध्यते ॥ ९ ॥

९०. जातः परेण धर्मणा यत् सवृद्भिः सहाभुवः ।
पिता यत्कश्यपस्याग्निः श्रद्धा माता मनुः कविः ॥ १० ॥

दशमी दशतिः

ऋषिः—१ अग्निस्तापसः; २ वामदेवः; ३ काश्यपोऽसितो देवलो वा; ४ सोमाहुतिर्भार्गवः; ५ पायुः; ६ प्रस्कण्वः ॥ देवता—१ विश्वेदेवाः; २ अङ्गिराः; ३-६ अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

९१. सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे ।
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥ १ ॥

९२. इत एत उदारुहन् दिवः पृष्ठान्या रुहन् ।
प्र भूर्जयो यथा पथोद् द्यामङ्गिरसो ययुः ॥ २ ॥

९३. राये अग्ने महे त्वा दानाय समिधीमहि ।
ईडिष्वा हि महे वृषं द्यावा होत्राय पृथिवी ॥ ३ ॥

९४. दधन्वे वा यदीमनु वोचद् ब्रह्मेति वेरु तत् ।
परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभुवत् ॥ ४ ॥

९५. प्रत्यग्ने हरसा हरः शृणाहि विश्वतस्परि ।
यातुधानस्य रक्षसो बलं न्युब्ज वीर्यम् ॥ ५ ॥

९६. त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्याँ उत ।
यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम् ॥ ६ ॥

इति प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ द्वितीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

एकादशी दशतिः

ऋषिः—१ दीर्घतमाः; २, ४ विश्वामित्रः; ३ गोतमः; ५ त्रितः; ६ इरिम्बिठिः; ७, ८, १० विश्वमना वैयश्वः; ९ ऋजिश्वा भारद्वाजः ॥ देवता—१-४, ७-१० अग्निः, ५ पवमानः; ६ अदितिः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

९७. पुरु त्वा दाशिवाँ वोचेऽरिरग्ने तव स्विदा ।
तोदस्येव शरण आ महस्य ॥ १ ॥

९८. प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत् ।
विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे ॥ २ ॥

९९. अग्ने वाजस्य गोमत ईशानः सहसो यहो ।
अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः ॥ ३ ॥

१००. अग्ने यजिष्ठो अध्वरे देवां देवयते यज ।
होता मन्द्रो वि राजस्यति स्त्रिधः ॥ ४ ॥

१०१. जज्ञानः सप्त मातृभिर्मेधामाशासत श्रिये ।
अयं ध्रुवो रयीणां चिकेतदा ॥ ५ ॥

१०२. उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्यागमत् ।
सा शन्ताता मयस्करदप स्त्रिधः ॥ ६ ॥

१०३. ईडिष्वा हि प्रतीव्यां३ यजस्व जातवेदसम् ।
चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम् ॥ ७ ॥

१०४. न तस्य मायया च न रिपुरीशीत मर्त्यः ।
यो अग्नये ददाश हव्यदातये ॥ ८ ॥

१०५. अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम् ।
दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥ ९ ॥

१०६. श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते ।
नि मायिनस्तपसा रक्षसो दह ॥ १० ॥

द्वादशी दशतिः

ऋषिः—१ प्रयोगो भार्गवः; २, ३, ५-७ सोभरिः; ४ प्रयोगो भार्गवः; सोभरिः काण्वो वा; ८ विश्वमनाः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—ककुबुष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१०७. प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे ।
उपस्तुतासो अग्नये ॥ १ ॥

१०८. प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तरति वाजकर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमाविथ ॥ २ ॥

१०९. तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे ।
देवत्रा हव्यमूहिषे ॥ ३ ॥

११०. मा नो हृणीथा अतिथिं वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः ।
यः सुहोता स्वध्वरः ॥ ४ ॥

१११. भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥ ५ ॥

११२. यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् ।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ ६ ॥

११३. तदग्ने द्युम्नमा भर यत्सासाहा सदने कं चिदत्रिणम् ।
मन्युं जनस्य दूढ्यम् ॥ ७ ॥

११४. यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशे ।
विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥ ८ ॥

इति प्रथमोऽध्यायः ॥

इति सामवेदसंहितायामाग्नेयं काण्डम् ॥

अथ एन्द्रं काण्डम्

अथ द्वितीयोऽध्यायः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१ शंयुर्बार्हस्पत्यः; २, ४, ५ श्रुतकक्षः; ३ हर्यतः प्रागाथः; ६ इन्द्रमातरो देवजामयः; ७, ८ गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ; ९, १० मेधातिथिराङ्गिरसः प्रियमेधः काण्वश्च॥

देवता—इन्द्रः॥ छन्दः गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

११५. तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने। शं यद्गवे न शाकिने ॥१॥
११६. यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः। तेन नूनं मदे मदेः ॥२॥
११७. गाव उप वदावटे मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया ॥३॥
११८. अरमश्वाय गायत श्रुतकक्षारं गवे। अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥४॥
११९. तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत्॥५॥
१२०. त्वमिन्द्र बलादधि सहसो जात ओजसः। त्वं सन्वृषन्वृषेदसि॥६॥
१२१. यज्ञ इन्द्रमवर्धयद् यद्भूमिं व्यवर्तयत्। चक्राण ओपशं दिवि॥७॥
१२२. यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोसखा स्यात्॥८॥
१२३. पन्यंपन्यमित् सोतार आ धावत मद्याय। सोमं वीराय शूराय॥९॥
१२४. इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम्। अनाभयिन् ररिमा ते॥१०॥

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१, २ सुकक्षश्रुतकक्षौ; ३ भरद्वाजः; ४ श्रुतकक्षः; ५, ६ मधुच्छन्दाः; ७, ९, १० त्रिशोकः; ८ वसिष्ठः। देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१२५. उद् घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य॥१॥
१२६. यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे॥२॥
१२७. य आनयत् परावतः सुनीती तुर्वशं यदुम्। इन्द्रः स नो युवा सखा॥३॥
१२८. मा न इन्द्राभ्याऽऽ३दिशः सूरो अक्तुष्वा यमत्। त्वा युजा वनेम तत्॥४॥

१२९. एन्द्र सानसिं रयिं सजित्वानं सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर॥५॥
१३०. इन्द्रं वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषु वज्रिणम् ॥६॥
१३१. अपिबत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे। तत्रादर्दिष्ट पौंस्यम् ॥७॥
१३२. वयमिन्द्र त्वायवोऽभि प्र नोनुमो वृषन्। विद्धी त्वा३स्य नो वसो॥८॥
१३३. आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥९॥
१३४. भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥१०॥

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१ कण्वो घौरः; २ त्रिशोकः; ३, ९ वत्सः काण्वः; ४ कुसीदी काण्वः; ५ मेधातिथिः; ६ श्रुतकक्षः; ७ श्यावाश्वः; ८ प्रगाथः काण्वः; १० इरिम्बिठिः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१३५. इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान्। नि यामं चित्रमृञ्जते॥१॥
१३६. इम उ त्वा वि चक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः। पुष्टावन्तो यथा पशुम्॥२॥
१३७. समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः। समुद्रायेव सिन्धवः॥३॥
१३८. देवानामिदवो महत्तदा वृणीमहे वयम्। वृष्णामस्मभ्यमूतये॥४॥
१३९. सोमानां स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं य औशिजः॥५॥
१४०. बोधन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः। शृणोतु शक्र आशिषम्॥६॥
१४१. अद्या नो देव सवितः प्रजावत्सावीः सौभगम्। परा दुःष्वप्न्यं सुव॥७॥
१४२. क्वा३स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः। ब्रह्मा कस्तं सपर्यति॥८॥
१४३. उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत॥९॥
१४४. प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः। नरं नृषाहं मंहिष्ठम्॥१०॥

इति द्वितीयः प्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१ श्रुतकक्षः; २ मेधातिथिः; ३ गोतमः; ४ भरद्वाजः; ५ बिन्दुः पूतदक्षो वा; ६, ७ श्रुतकक्षः सुकक्षो वा; ८ वत्सः काण्वः; ९ शुनःशेपः; १० शुनःशेपो वामदेवो वा॥ देवता—इन्द्रः; ५ मरुतः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१४५. अपादु शिप्र्यन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः। इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः॥१॥

१४६. इमा उ त्वा पुरूवसोऽभि प्र नोनुवुर्गिरः। गावो वत्सं न धेनवः॥२॥

१४७. अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमसो गृहे॥३॥

१४८. यदिन्द्रो अनयद्रितो महीरपो वृषन्तमः। तत्र पूषाभुवत् सचा॥४॥

१४९. गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम्। युक्ता वह्नी रथानाम्॥५॥

१५०. उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते। उप नो हरिभिः सुतम्॥६॥

१५१. इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधन्तो अध्वरे। अच्छावभृथमोजसा॥७॥

१५२. अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रह। अहं सूर्यइवाजनि॥८॥

१५३. रेवतीर्नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः। क्षुमन्तो याभिर्मदेम॥९॥

१५४. सोमः पूषा च चेततुर्विश्वासां सुक्षितीनाम्। देवत्रा रथ्योर्हिता॥१०॥

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—१, ४ श्रुतकक्षः; २ वसिष्ठः; ३ मेधातिथिप्रियमेधौ; ५ इरिम्बिठिः; ६, १० मधुच्छन्दाः; ७ त्रिशोकः; ८ कुसीदी; ९ शुनःशेपः॥ देवता—इन्द्रः; ६ प्रजापतिः॥

छन्दः—१ अनुष्टुप्; गायत्री॥ स्वरः—१ गान्धारः; षड्जः॥

१५५. पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत।
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम्॥१॥

१५६. प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत।
सखायः सोमपाव्ने॥२॥

१५७. वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः।
कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते॥३॥

१५८. इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः। अर्कमर्चन्तु कारवः॥४॥

१५९. अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि। एहीमस्य द्रवा पिब॥५॥

१६०. सुरूपकृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे। जुहूमसि द्यविद्यवि॥६॥

१६१. अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये। तृम्पा व्यश्नुही मदम्॥७॥

१६२. य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः। पिबेदस्य त्वमीशिषे॥८॥

१६३. योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे। सखाय इन्द्रमूतये॥९॥

१६४. आ त्वेता नि षीदतेन्द्रमभि प्र गायत। सखायः स्तोमवाहसः॥१०॥

षष्ठी दशतिः

ऋषिः—१ विश्वामित्रः; २ मधुच्छन्दाः; ३ कुसीदी काण्वः; ४ प्रियमेधः; ५, ८ वामदेवः; ६, ९ श्रुतकक्षः; ७ मेधातिथिः; १० बिन्दुः पूतदक्षो वा॥ देवता—इन्द्रः॥

छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१६५. इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते।
पिबा त्वा३स्य गिर्वणः॥१॥

१६६. महाँ इन्द्रः पुरश्च नो महित्वमस्तु वज्रिणे।
द्यौर्न प्रथिना शवः॥२॥

१६७. आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय।
महाहस्ती दक्षिणेन॥३॥

१६८. अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे।
सूनुं सत्यस्य सत्पतिम्॥४॥

१६९. कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा।
कया शचिष्ठया वृता॥५॥

१७०. त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम्।
आ च्यावयस्यूतये॥६॥

१७१. सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषम्॥७॥

१७२. ये ते पन्था अधो दिवो येभिर्व्यश्वमैरयः ।
उत श्रोषन्तु नो भुवः ॥ ८ ॥
१७३. भद्रंभद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो ।
यदिन्द्र मृडयासि नः ॥ ९ ॥
१७४. अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः ।
उत स्वराजो अश्विना ॥ १० ॥

सप्तमी दशतिः

ऋषिः — १ इन्द्रमातरो देवजामयः; २ गोधा; ३ दध्यङ्ङाथर्वणः; ४ प्रस्कण्वः; ५ गोतमः; ६ मधुच्छन्दाः; ७ वामदेवः; ८ वत्सः; ९ शुनःशेपः; १० वातायन उलः ॥

देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

१७५. ईङ्खयन्तीरपस्युव इन्द्रं जातमुपासते। वन्वानासः सुवीर्यम् ॥ १ ॥
१७६. न कि देवा इनीमसि न क्या योपयामसि। मन्त्रश्रुत्यं चरामसि ॥ २ ॥
१७७. दोषो आगाद् बृहद्गाय द्युमद्गामन्नाथर्वण। स्तुहि देवं सवितारम् ॥ ३ ॥
१७८. एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः। स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥ ४ ॥
१७९. इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। जघान नवतीर्नव ॥ ५ ॥
१८०. इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः। महाँ अभिष्टिरोजसा ॥ ६ ॥
१८१. आ तू न इन्द्र वृत्रहन्नस्माकमर्धमा गहि। महान्महीभिरूतिभिः ॥ ७ ॥
१८२. ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत् समवर्तयत्। इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥ ८ ॥
१८३. अयमु ते समतसि कपोतइव गर्भधिम्। वचस्तच्चिन्न ओहसे ॥ ९ ॥
१८४. वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे। प्र न आयूँषि तारिषत् ॥ १० ॥

अष्टमी दशतिः

ऋषिः — १ कण्वः; २, ३, ९ वत्सः; ४ श्रुतकक्षः; ५ मधुच्छन्दाः; ६ वामदेवः; ७ इरिम्बिठिः; ८ वारुणिः सत्यधृतिः ॥ देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः — गायत्री ॥

स्वरः — षड्जः ॥

१८५. यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा। न किः स दभ्यते जनः ॥ १ ॥

१८६. गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया। वरिवस्या महोनाम् ॥ २ ॥
१८७. इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम्। एनामृतस्य पिप्युषीः ॥ ३ ॥
१८८. अया धिया च गव्यया पुरुणामन्पुरुष्टुत। यत् सोमेसोम आभुवः ॥ ४ ॥
१८९. पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥ ५ ॥
१९०. क इमं नाहुषीष्वा इन्द्रं सोमस्य तर्पयात्। स नो वसून्या भरात् ॥ ६ ॥
१९१. आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम्। एदं बर्हिः सदो मम ॥ ७ ॥
१९२. महि त्रीणामवरस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः। दुराधर्षं वरुणस्य ॥ ८ ॥
१९३. त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः। स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥ ९ ॥

इति द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ तृतीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

नवमी दशतिः

ऋषिः — १ प्रगाथः; २ विश्वामित्र; ३, १० वामदेवः; ४, ६ श्रुतकक्षः; ५ मधुच्छन्दाः; ७ गृत्समदः; ८, ९ भरद्वाजः ॥ देवता — इन्द्रः ॥

छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

१९४. उत्त्वा मन्दन्तु सोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः। अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥ १ ॥
१९५. गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे। इन्द्र त्वादातमिद्यशः ॥ २ ॥
१९६. सदा व इन्द्रश्चर्कृषदा उपो नु स सपर्यन्। न देवो वृतः शूर इन्द्रः ॥ ३ ॥
१९७. आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः। न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥ ४ ॥
१९८. इन्द्रमिद्गाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत ॥ ५ ॥
१९९. इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम्। वाजी ददातु वाजिनम् ॥ ६ ॥
२००. इन्द्रो अङ्ग महद्भयमभी षदप चुच्यवत्। स हि स्थिरो विचर्षणिः ॥ ७ ॥
२०१. इमा उ त्वा सुतेसुते नक्षन्ते गिर्वणो गिरः। गावो वत्सं न धेनवः ॥ ८ ॥
२०२. इन्द्रा नु पूषणा वयं सख्याय स्वस्तये। हुवेम वाजसातये ॥ ९ ॥

२०३. न कि इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्। न क्येवं यथा त्वम्॥ १०॥

दशमी दशतिः

ऋषिः—१, ४ त्रिशोकः; २ मधुच्छन्दाः; ३ वत्सः; ५ सुकक्षः; ६, ९ वामदेवः;
७ विश्वामित्रः; ८ गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ; १० श्रुतकक्षः सुकक्षो वा॥
देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

२०४. तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः। समानमु प्र शंसिषम्॥ १॥
२०५. असृग्रमिन्द्र ते गिरः प्रति त्वामुदहासत। सजोषा वृषभं पतिम्॥ २॥
२०६. सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा। मित्रास्पान्त्यद्रुहः॥ ३॥
२०७. यद्वीडाविन्द्र यत्स्थिरे यत्पर्शाने पराभृतम्। वसु स्पार्हं तदा भर॥ ४॥
२०८. श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम्। आशिषे राधसे महे॥ ५॥
२०९. अरं त इन्द्र श्रवसे गमेम शूर त्वावतः। अरं शक्र परेमणि॥ ६॥
२१०. धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम्। इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः॥ ७॥
२११. अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः। विश्वा यदजय स्पृधः॥ ८॥
२१२. इमे त इन्द्र सोमाः सुतासो ये च सोत्वाः। तेषां मत्स्व प्रभूवसो॥ ९॥
२१३. तुभ्यं सुतासः सोमाः स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो। स्तोतृभ्य इन्द्र मृडय॥ १०॥

एकादशी दशतिः

ऋषिः—१ शुनःशेपः; २ श्रुतकक्षः; ३ त्रिशोकः; ४, ९ मेधातिथिः; ५ गोतमः;
६ ब्रह्मातिथिः; ७ विश्वामित्रो जमदग्निर्वा; ८ प्रस्कण्वः॥ देवता—इन्द्रः॥
छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

२१४. आ व इन्द्रं कृविं यथा वाजयन्तः शतक्रतुम्। मंहिष्ठं सिञ्च इन्दुभिः॥ १॥
२१५. अतश्चिदिन्द्र न उपा याहि शतवाजया। इषा सहस्रवाजया॥ २॥
२१६. आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छाद्वि मातरम्। क उग्राः के ह शृण्विरे॥ ३॥
२१७. बृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये। साधः कृण्वन्तमवसे॥ ४॥
२१८. ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयति विद्वान्। अर्यमा देवैः सजोषाः॥ ५॥
२१९. दूरादिहेव यत्सतोऽरुणप्सुरशिश्वितत्। वि भानुं विश्वथातनत्॥ ६॥

२२०. आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजांसि सुक्रतू॥ ७॥
२२१. उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा यज्ञेष्वत्नत। वाश्रा अभिज्ञु यातवे॥ ८॥
२२२. इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम्। समूढमस्य पाँसुले॥ ९॥

द्वादशी दशतिः

ऋषिः—१, ७, ८ मेधातिथिः; २ वामदेवः; ३, ५ मेधातिथिप्रियमेधौ; ४ विश्वामित्रः;
६ कौत्सो दुर्मित्रः सुमित्रो वा; ९ विश्वामित्रो गाथिनोऽभीपाद उदलो वा;
१० श्रुतकक्षः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

२२३. अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपेरय। अस्य रातौ सुतं पिब॥ १॥
२२४. कदु प्रचेतसे महे वचो देवाय शस्यते। तदिद्ध्यस्य वर्धनम्॥ २॥
२२५. उक्थं च न शस्यमानं नागो रयिरा चिकेत। न गायत्रं गीयमानम्॥ ३॥
२२६. इन्द्र उक्थेभिर्मन्दिष्ठो वाजानां च वाजपतिः। हरिवान्त्सुतानां सखा॥ ४॥
२२७. आ याह्युप नः सुतं वाजेभिर्मा हृणीयथाः। महाँइव युवजानिः॥ ५॥
२२८. कदा वसो स्तोत्रं हर्यत आ अव श्मशा रुधद्वाः।
दीर्घं सुतं वाताप्याय॥ ६॥
२२९. ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिबा सोममृतूँरनु। तवेदं सख्यमस्तृतम्॥ ७॥
२३०. वयं घा ते अपि स्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः। त्वं नो जिन्व सोमपाः॥ ८॥
२३१. एन्द्र पृक्षु कासु चिन्नृम्णं तनूषु धेहि नः। सत्राजिदुग्र पौंस्यम्॥ ९॥
२३२. एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः। एवा ते राध्यं मनः॥ १०॥

इति द्वितीयोऽध्यायः॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१, ६, ९ वसिष्ठः; २ भरद्वाजः; ३ बालखिल्याः; ४ नोधाः; ५ कलिः प्रागाथः; ७ मेधातिथिः; ८ भर्गः; १० प्रगाथः काण्वः ॥ देवता—१-८, १० इन्द्रः; ९ मरुतः ॥

छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२३३. अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धाइव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥ १ ॥

२३४. त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ॥ २ ॥

२३५. अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥ ३ ॥

२३६. तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥ ४ ॥

२३७. तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥ ५ ॥

२३८. तरणिरित् सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्रुवम् ॥ ६ ॥

२३९. पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः ।
आपिर्नो बोधि सधमाद्ये वृधे३ऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥ ७ ॥

२४०. त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥ ८ ॥

२४१. न हि वश्चरमं च न वसिष्ठः परिमंसते ।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबन्तु कामिनः ॥ ९ ॥

२४२. मा चिदन्यद् वि शंसत सखायो मा रिषण्यत ।
इन्द्रमित्स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥ १० ॥

इति तृतीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ तृतीयप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१ आङ्गिरसः पुरुहन्मा; २, ३, ७-९ मेधातिथिर्मेध्यातिथिश्च; ४ विश्वामित्रः; ५ गोतमः; ६ नृमेधपुरुमेधौ; १० देवातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥

छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२४३. न किष्टं कर्मणा नशद् यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्णुमोजसा ॥ १ ॥

२४४. य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
सन्धाता सन्धिं मघवा पुरूवसुर्निष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥ २ ॥

२४५. आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये ।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥ ३ ॥

२४६. आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः ।
मा त्वा के चिन्नि येमुरिन्न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि ॥ ४ ॥

२४७. त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम् ।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः ॥ ५ ॥

२४८. त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पतिः ।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इत् पुर्वनुत्तश्चर्षणीधृतिः ॥ ६ ॥

२४९. इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥ ७ ॥

२५०. इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥ ८ ॥

२५१. उदु त्ये मधुमत्तमा गिर स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथाइव ॥ ९ ॥

२५२. यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥ १० ॥

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१ भर्गः; २ रेभः काश्यपः; ३ जमदग्निः; ४, ९ मेधातिथिः; ५, ६ नृमेधपुरुमेधौ; ७ वसिष्ठः; ८ रेभः; १० भरद्वाजः ॥ देवता—१, २, ४-१० इन्द्रः; ३ आदित्याः ॥
छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२५३. शग्ध्यू३षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥ १ ॥

२५४. या इन्द्र भुज आभरः स्ववाँ असुरेभ्यः ।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥ २ ॥

२५५. प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।
वरूथ्ये३ वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥ ३ ॥

२५६. अभि त्वा पूर्वपीतय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥ ४ ॥

२५७. प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥ ५ ॥

२५८. बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥ ६ ॥

२५९. इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन्पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥ ७ ॥

२६०. मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्ये ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परावृणक् ॥ ८ ॥

२६१. वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥ ९ ॥

२६२. यदिन्द्र नाहुषीष्वा ओजो नृम्णं च कृष्टिषु ।
यद्वा पञ्च क्षितीनां द्युम्नमा भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥ १० ॥

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१ मेधातिथिः; २ रेभः; ३ वत्सः; ४ भरद्वाजः; ५ नृमेधः; ६ पुरुहन्मा; ७ नृमेधपुरुमेधौ; ८ वसिष्ठः; ९ मेधातिथिर्मेध्यातिथिश्च; १० कलिः ॥
देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२६३. सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽविता ।
वृषा ह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥ १ ॥

२६४. यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आ विवासति ॥ २ ॥

२६५. अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥ ३ ॥

२६६. इन्द्र त्रिधातु शरणं त्रिवरूथं स्वस्तये ।
छर्दिर्यच्छ मघवद्भ्यश्च मह्यं च यावया दिद्युमेभ्यः ॥ ४ ॥

२६७. श्रायन्तइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जातो जनिमान्योजसा प्रति भागं न दीधिमः ॥ ५ ॥

२६८. न सीमदेव आप तदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशो युयोजत इन्द्रो हरी युयोजते ॥ ६ ॥

२६९. आ नो विश्वासु हव्यमिन्द्रं समत्सु भूषत ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहन् परमज्या ऋचीषम ॥ ७ ॥

२७०. तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि न किष्ट्वा गोषु वृण्वते ॥ ८ ॥

२७१. क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः ।
अलर्षि युध्म खजकृत् पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥ ९ ॥

२७२. वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य सवने सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥ १० ॥

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—१, ६ पुरुहन्मा; २ भर्गः; ३ इरिम्बिठिः; ४ जमदग्निः; ५, ७ देवातिथिः; ८ वसिष्ठः; ९ भरद्वाजः; १० बालखिल्याः ॥ देवता—१-३, ५-८, १० इन्द्रः; ४ सूर्यः; ९ इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२७३. यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठं यो वृत्रहा गृणे ॥ १ ॥

२७४. यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतये वि द्विषो वि मृधो जहि ॥ २ ॥

२७५. वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणां सत्रं सोम्यानाम् ।
द्रप्सः पुरां भेत्ता शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥ ३ ॥

२७६. बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनिष्टम मह्ना देव महाँ असि ॥ ४ ॥

२७७. अश्वी रथी सुरूप इद्गोमाँ यदिन्द्र ते सखा ।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रैर्याति सभामुप ॥ ५ ॥

२७८. यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥ ६ ॥

२७९. यदिन्द्र प्रागपागु दग्न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥ ७ ॥

२८०. कस्तमिन्द्र त्वा वसवा मर्त्यो दधर्षति ।
श्रद्धा हि ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥ ८ ॥

२८१. इन्द्राग्नी अपादियं पूर्वागात् पद्वतीभ्यः ।
हित्वा शिरो जिह्वया रारपच्चरत् त्रिंशत् पदा न्यक्रमीत् ॥ ९ ॥

२८२. इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः ।
आ शन्तम शन्तमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः ॥ १० ॥

षष्ठी दशतिः

ऋषिः—१ नृमेधः; २, ३ वसिष्ठः; ४ भरद्वाजः; ५ पुरुच्छेपः; ६ वामदेवः; ७ मेध्यातिथिः; ८ भर्गः; ९, १० मेधातिथिर्मेध्यातिथिश्च ॥ देवता—१-४, ७-१० इन्द्रः; ५ अश्विनौ; ६ वरुणः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

२८३. इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम् ।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्रियावृधम् ॥ १ ॥

२८४. मो षु त्वा वाघतश्च नारे अस्मन्नि रीरमन् ।
आरात्ताद्वा सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥ २ ॥

२८५. सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित् पृणन्नित् पृणते मयः ॥ ३ ॥

२८६. यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
सहस्रमन्यो तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥ ४ ॥

२८७. शचीभिर्नः शचीवसू दिवानक्तं दिशस्यतम् ।
मा वां रातिरुप दसत्कदा च नास्मद्रातिः कदा च न ॥ ५ ॥

२८८. यदा कदा च मीढुषे स्तोता जरेत मर्त्यः ।
आदिद् वन्देत वरुणं विपा गिरा धर्तारं विव्रतानाम् ॥ ६ ॥

२८९. पाहि गा अन्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः सम्मिश्लो हर्योर्यो हिरण्यय इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ ७ ॥

२९०. उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवान्त्सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥ ८ ॥

२९१. महे च न त्वाद्रिवः परा शुल्काय दीयसे ।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥ ९ ॥

२९२. वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः ।
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥ १० ॥

इति तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ चतुर्थप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

सप्तमी दशतिः

ऋषिः—१ वसिष्ठः; २, ६, ७ वामदेवः; ३ मेधातिथिमेध्यातिथी; विश्वामित्र इत्येके; ४ नोधाः; ५ मेधातिथिः; ८ बालखिल्याः; ९ मेध्यातिथिः; १० नृमेधः॥ देवता—१-६, ८-१० इन्द्रः; ७ बहवः-(पर्जन्यब्रह्मणस्पत्यदितयो विश्वेदेवाः)॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

२९३. इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः ।
ताँ आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ॥ १॥

२९४. इम इन्द्र मदाय ते सोमाश्चिकित्र उक्थिनः ।
मधोः पपान उप नो गिरः शृणु रास्व स्तोत्राय गिर्वणः॥ २॥

२९५. आ त्वा३ऽद्य सबर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम् ।
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरङ्कृतम् ॥ ३॥

२९६. न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीडवः ।
यच्छिक्षसि स्तुवते मावते वसु न किष्टदा मिनाति ते॥ ४॥

२९७. क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः॥ ५॥

२९८. यदिन्द्र शासो अव्रतं च्यावया सदसस्परि ।
अस्माकमंशुं मघवन् पुरुस्पृहं वसव्ये अधि बर्हय॥ ६॥

२९९. त्वष्टा नो दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः ।
पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु नो दुष्टरं त्रामणं वचः॥ ७॥

३००. कदा च न स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते॥ ८॥

३०१. युङ्क्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः ।
अर्वाचीनो मघवन्त्सोमपीतय उग्र ऋष्वेभिरा गहि॥ ९॥

३०२. त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहस इह श्रुध्युप स्वसरमा गहि॥ १०॥

अष्टमी दशतिः

ऋषिः—१, २, ७, ८ वसिष्ठः; ३ पौर आत्रेयः; ४ प्रस्कण्वः; ५ मेधातिथिमेध्यातिथी; ६ देवातिथिः; ९ नृमेधः; १० नोधाः॥ देवता—१ उषा; २, ३ अश्विनौ; ४-१० इन्द्रः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

३०३. प्रत्यु अदर्श्यायत्यू३च्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी॥ १॥

३०४. इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना ।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥ २॥

३०५. कुष्ठः को वामश्विना तपानो देवा मर्त्यः ।
घ्नता वामश्नया क्षपमाणोंऽशुनेत्थमु आद्वन्यथा ॥ ३॥

३०६. अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोमो दिविष्टिषु ।
तमश्विना पिबतं तिरोअह्न्यं धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥ ४॥

३०७. आ त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं ज्या ।
भूर्णिं मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ॥ ५॥

३०८. अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति ।
उपो नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥ ६॥

३०९. अभीषतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः ।
पुरूवसुर्हि मघवन् बभूविथ भरेभरे च हव्यः ॥ ७॥

३१०. यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद्दधिषे रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ॥ ८॥

३११. त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता वृत्रतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥ ९॥

३१२. प्र यो रिरिक्ष ओजसा दिवः सदोभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमति विश्वं ववक्षिथ॥ १०॥

नवमी दशतिः

ऋषिः—१, २, ६ वसिष्ठः; ३ गातुः; ४ पृथुवैन्यः; ५ सप्तगुः; ७ गौरिवीतिः; ८ वेनो भार्गवः; ९ बृहस्पतिर्नकुलो वा; १० सुहोत्रः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

३१३. असावि देवं गोऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा न स्तोममन्धसो मदेषु ॥१॥

३१४. योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्र याहि ।
असो यथा नोऽविता वृधश्चिद्ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥२॥

३१५. अदर्दरुत् समसृजो वि खानि त्वमर्णवान् बद्बधानाँ अरम्णाः ।
महान्तमिन्द्र पर्वतं वि यद्वः सृजद्धारा अव यद्दानवान् हन् ॥३॥

३१६. सुष्वाणास इन्द्र स्तुमसि त्वा सनिष्यन्तश्चित्तुविनृम्ण वाजम् ।
आ नो भर सुवितं यस्य कोना तना त्मना सह्याम त्वोताः ॥४॥

३१७. जगृह्मा ते दक्षिणमिन्द्र हस्तं वसूयवो वसुपते वसूनाम् ।
विद्मा हि त्वा गोपतिं शूर गोनामस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥५॥

३१८. इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः ।
शूरो नृषाता श्रवसश्च काम आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः ॥६॥

३१९. वयः सुपर्णा उप सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः ।
अप ध्वान्तमूर्णुहि पूर्द्धि चक्षुर्मुमुग्ध्या३स्मान्निधयेव बद्धान् ॥७॥

३२०. नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥८॥

३२१. ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥९॥

३२२. अपूर्व्या पुरुतमान्यस्मै महे वीराय तवसे तुराय ।
विरप्शिने वज्रिणे शन्तमानि वचांस्यस्मै स्थविराय तक्षुः ॥१०॥

दशमी दशतिः

ऋषिः—१, २, ४ द्युतानः; ३ बृहदुक्थः; ५ वामदेवः; ६, ८ वसिष्ठः; ७ विश्वामित्रः; ९ गौरिवीतिः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—१-५, ७-९ त्रिष्टुप्; ६ त्रिपदा विराडनुष्टुप्॥ स्वरः—१-५, ७-९ धैवतः; ६ गान्धारः॥

३२३. अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदीयानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नीहितिं नृमणा अधद्राः ॥१॥

३२४. वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥२॥

३२५. विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार ।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥३॥

३२६. त्वं ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूढे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणं धाः ॥४॥

३२७. मेडिं न त्वा वज्रिणं भृष्टिमन्तं पुरुधस्मानं वृषभं स्थिरप्स्नुम् ।
करोष्यर्यस्तरुषीर्दुवस्युरिन्द्र द्युक्षं वृत्रहणं गृणीषे ॥५॥

३२८. प्र वो महे महेवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।
विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः ॥६॥

३२९. शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानि ॥७॥

३३०. उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।
आ यो विश्वानि श्रवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥८॥

३३१. चक्रं यदस्याप्स्वा निषत्तमुतो तदस्मै मध्विच्चच्छद्यात् ।
पृथिव्यामतिषितं यदूधः पयो गोष्ववदधा ओषधीषु ॥९॥

एकादशी दशतिः

ऋषिः—१ अरिष्टनेमिस्तार्क्ष्यः; २ भरद्वाजः; ३ वसुक्रो विमदो वा; ४-६, ७ विश्वामित्रः; ८ रेणुः; ९ वामदेवः; १० गोतमः ॥ देवता—१ तार्क्ष्यः; २-६, ८-१० इन्द्रः; ७ इन्द्रापर्वतौ ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

३३२. त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहोवानं तरुतारं रथानाम् ।
अरिष्टनेमिं पृतनाजमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥ १ ॥

३३३. त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम् ।
हुवे नु शक्रं पुरुहूतमिन्द्रमिदं हविर्मघवा वेत्विन्द्रः ॥ २ ॥

३३४. यजामह इन्द्रं वज्रदक्षिणं हरीणां रथ्यां३ विव्रतानाम् ।
प्र श्मश्रुभिर्दोधुवदूर्ध्वधा भुवद्वि सेनाभिर्भयमानो वि राधसा ॥ ३ ॥

३३५. सत्राहणं दाधृषिं तुम्रमिन्द्रं महामपारं वृषभं सुवज्रम् ।
हन्ता यो वृत्रं सनितोत वाजं दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥ ४ ॥

३३६. यो नो वनुष्यन्नभिदाति मर्त्त उगणा वा मन्यमानस्तुरो वा ।
क्षिधी युधा शवसा वा तमिन्द्राभी ष्याम वृषमणस्त्वोताः ॥ ५ ॥

३३७. यं वृत्रेषु क्षितयः स्पर्धमाना यं युक्तेषु तुरयन्तो हवन्ते ।
यं शूरसातौ यमपामुपज्मन् यं विप्रासो वाजयन्ते स इन्द्रः ॥ ६ ॥

३३८. इन्द्रापर्वता बृहता रथेन वामीरिष आ वहतं सुवीराः ।
वीतं हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्धेथां गीर्भिरिडया मदन्ता ॥ ७ ॥

३३९. इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा अपः प्रैरयत् सगरस्य बुध्नात् ।
यो अक्षेणेव चक्रियौ शचीभिर्विष्वक्तस्तम्भ पृथिवीमुत द्याम् ॥ ८ ॥

३४०. आ त्वा सखायः सख्या ववृत्युस्तिरः पुरू चिदर्णवां जगम्याः ।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अस्मिन् क्षये प्रतरां दीद्यानः ॥ ९ ॥

३४१. को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून् ।
आसन्नेषामप्सुवाहो मयोभून्य एषां भृत्यामृणधत्स जीवात् ॥ १० ॥

इति चतुर्थप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ चतुर्थप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

द्वादशी दशतिः

ऋषिः—१ मधुच्छन्दाः; २ जेता माधुच्छन्दसः; ३, ६ गोतमः; ४ अत्रिः; ५, ८, ९ तिरश्चीः; ७ काण्वो नीपातिथिः; १० शंयुर्बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

३४२. गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥ १ ॥

३४३. इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥ २ ॥

३४४. इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम् ।
शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन् धारा ऋतस्य सादने ॥ ३ ॥

३४५. यदिन्द्र चित्र म इह नास्ति त्वादातमद्रिवः ।
राधस्तन्नो विदद्वस उभयाहस्त्या भर ॥ ४ ॥

३४६. श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥ ५ ॥

३४७. असावि सोम इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गहि ।
आ त्वा पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ ६ ॥

३४८. एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥ ७ ॥

३४९. आ त्वा गिरो रथीरिवास्थुः सुतेषु गिर्वणः ।
अभि त्वा समनूषत गावो वत्सं न धेनवः ॥ ८ ॥

३५०. एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्धैराशीर्वान् ममत्तु ॥ ९ ॥

३५१. यो रयिं वो रयिन्तमो यो द्युम्नैर्द्युम्नवत्तमः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥ १० ॥

इति तृतीयोऽध्यायः ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१ भरद्वाजः; २ वामदेवः शाकपूतो वा; ३ प्रियमेधः; ४ प्रगाथः; ५ श्यावाश्व आत्रेयः; ६ शंयुः; ७ वामदेवः; ८ जेता माधुच्छन्दसः ॥ देवता—१-४, ६, ८ इन्द्रः; ५ मरुतः; ७ दधिक्रावा अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

३५२. प्रत्यस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर ।
अरङ्गमाय जग्मयेऽ पश्चादध्वने नरः ॥ १ ॥

३५३. आ नो वयो वयःशयं महान्तं गह्वरेष्ठाम् ।
महान्तं पूर्विनेष्ठामुग्रं वचो अपावधीः ॥ २ ॥

३५४. आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि ।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्रं शविष्ठ सत्पतिम् ॥ ३ ॥

३५५. स पूर्व्यो महोनां वेनः क्रतुभिरानजे ।
यस्य द्वारा मनुः पिता देवेषु धिय आनजे ॥ ४ ॥

३५६. यदी वहन्त्याशवो भ्राजमाना रथेष्वा ।
पिबन्तो मदिरं मधु तत्र श्रवांसि कृण्वते ॥ ५ ॥

३५७. त्यमु वो अप्रहणं गृणीषे शवसस्पतिम् ।
इन्द्रं विश्वासाहं नरं शचिष्ठं विश्ववेदसम् ॥ ६ ॥

३५८. दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत् प्र न आयूँषि तारिषत् ॥ ७ ॥

३५९. पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत ।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥ ८ ॥

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१, ३, ५ प्रियमेधः; २, १० वामदेवः; ४ मधुच्छन्दाः; ६ भरद्वाजः; ७ अत्रिः; ८ प्रस्कण्वः; ९ आप्त्यस्त्रितः ॥ देवता—१-७ इन्द्रः; ८ उषाः; ९ विश्वेदेवाः; १० ऋक्सामौ ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

३६०. प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं वन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरन्ध्या विवासति ॥ १ ॥

३६१. कश्यपस्य स्वर्विदो यावाहुः सयुजाविति ।
ययोर्विश्वमपि व्रतं यज्ञं धीरा निचाय्य ॥ २ ॥

३६२. अर्चत प्रार्चता नरः प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरमिद् धृष्ण्वर्चत ॥ ३ ॥

३६३. उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुरुनिष्षिधे ।
शक्रो यथा सुतेषु नो रारणत् सख्येषु च ॥ ४ ॥

३६४. विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः ।
एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥ ५ ॥

३६५. स घा यस्ते दिवो नरो धिया मर्तस्य शमतः ।
ऊती स बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥ ६ ॥

३६६. विभोष्ट इन्द्र राधसो विभ्वी रातिः शतक्रतो ।
अथा नो विश्वचर्षणे द्युम्नं सुदत्र मंहय ॥ ७ ॥

३६७. वयश्चित्ते पतत्रिणो द्विपाच्चतुष्पादर्जुनि ।
उषः प्रारन्नृतूँरनु दिवो अन्तेभ्यस्परि ॥ ८ ॥

३६८. अमी ये देवा स्थन मध्य आ रोचने दिवः ।
कद्व ऋतं कदमृतं का प्रत्ना व आहुतिः ॥ ९ ॥

३६९. ऋचं साम यजामहे याभ्यां कर्माणि कृण्वते ।
वि ते सदसि राजतो यज्ञं देवेषु वक्षतः ॥ १० ॥

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१ रेभः; २ सुवेदाः शैलूषिः; ३ वामदेवः; ४, ७, ८ सव्य आङ्गिरसः; ५ विश्वामित्रः; ६ कृष्ण आङ्गिरसः; ९ भरद्वाजः; १० मेधातिथिः; ११ कुत्सः ॥ देवता—१-८, १०, ११ इन्द्रः; ९ द्यावापृथिवी ॥ छन्दः—१-९, ११ जगती; १० महापङ्क्तिः ॥ स्वरः—१-९, ११ निषादः; १० पञ्चमः ॥

३७०. विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरः सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वे वरे स्थेमन्यामुरीमुतोग्रमोजिष्ठं तरसं तरस्विनम् ॥ १ ॥

३७१. श्रत्ते दधामि प्रथमाय मन्यवेऽहन् यद् दस्युं नर्यं विवेरपः ।
उभे यत्त्वा रोदसी धावतामनु भ्यसात्ते शुष्मात् पृथिवी चिदद्रिवः ॥ २ ॥

३७२. समेत विश्वा ओजसा पतिं दिवो य एक इद् भूरतिथिर्जनानाम् ।
स पूर्व्यो नूतनमाजिगीषं तं वर्त्तनीरनु वावृत एक इत् ॥ ३ ॥

३७३. इमे त इन्द्र ते वयं पुरुष्टुत ये त्वारभ्य चरामसि प्रभूवसो ।
न हि त्वदन्यो गिर्वणो गिरः सघत्क्षोणीरिव प्रति तद्धर्य नो वचः ॥ ४ ॥

३७४. चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्या३मिन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत ।
वावृधानं पुरुहूतं सुवृक्तिभिरमर्त्यं जरमाणं दिवेदिवे ॥ ५ ॥

३७५. अच्छा व इन्द्रं मतयः स्वर्युवः सध्रीचीर्विश्वा उशतीरनूषत ।
परि ष्वजन्त जनयो यथा पतिं मर्यं न शुन्ध्युं मघवानमूतये ॥ ६ ॥

३७६. अभि त्यं मेषं पुरुहूतमृग्मियमिन्द्रं गीर्भिर्मदता वस्वो अर्णवम् ।
यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषं भुजे मंहिष्ठमभि विप्रमर्चत ॥ ७ ॥

३७७. त्यं सु मेषं महया स्वर्विदं शतं यस्य सुभुवः साकमीरते ।
अत्यं न वाजं हवनस्यदं रथमिन्द्रं ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥ ८ ॥

३७८. घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥ ९ ॥

३७९. उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषाइव ।
महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनाम् ।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥ १० ॥

३८०. प्र मन्दिने पितुमदर्चता वचो यः कृष्णगर्भा निरहन्नृजिश्वना ।
अवस्यवो वृषणं वज्रदक्षिणं मरुत्वन्तं सख्याय हुवेमहि ॥ ११ ॥

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१ नारदः; २, ३ गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ; ४ पर्वतः; ५-७, १० विश्वमना वैयश्वः; ८ नृमेधः; ९ गोतमः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

३८१. इन्द्र सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीष उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षस्य महाँ हि षः ॥ १ ॥

३८२. तमु अभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम् ।
इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासत ॥ २ ॥

३८३. तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृक्षु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥ ३ ॥

३८४. यत्सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये ।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥ ४ ॥

३८५. एदु मधोर्मदिन्तरं सिञ्चाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीर स्तवते सदावृधः ॥ ५ ॥

३८६. एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु ।
प्र राधांसि चोदयते महित्वना ॥ ६ ॥

३८७. एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम् ।
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् ॥ ७ ॥

३८८. इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥ ८ ॥

३८९. य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे ।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ॥ ९ ॥

३९०. सखाय आ शिषामहे ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे ।
स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥ १० ॥

इति चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ पञ्चमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—१ प्रगाथः; २ भरद्वाजः; ३ नृमेधः; ४ पर्वतः; ५, ७ इरिम्बिठिः; ६ विश्वमनाः; ८ वसिष्ठः॥ देवता—१-४, ६, ८ इन्द्रः; ५, ७ आदित्याः॥ छन्दः—१-७ उष्णिक्; ८ त्रिपदा विराडनुष्टुप्॥ स्वरः—१-७ ऋषभः; ८ गान्धारः॥

३९१. गृणे तदिन्द्र ते शव उपमां देवतातये ।
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते ॥१॥

३९२. यस्य त्यच्छम्बरं मदे दिवोदासाय रन्धयन् ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥२॥

३९३. एन्द्र नो गधि प्रिय सत्राजिदगोह्य ।
गिरिर्न विश्वतः पृथुः पतिर्दिवः ॥३॥

३९४. य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति ।
येना हंसि न्या३त्रिणं तमीमहे ॥४॥

३९५. तुचे तुनाय तत्सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे ।
आदित्यासः समहसः कृणोतन ॥५॥

३९६. वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम् ।
अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥६॥

३९७. अपामीवामप स्त्रिधमप सेधत दुर्मतिम् ।
आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥७॥

३९८. पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः ।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥८॥

षष्ठी दशतिः

ऋषिः—१-६, ९, १० सोभरिः; ७, ८ नृमेधः॥ देवता—१, २, ४, ५, ७-१० इन्द्रः; ३, ६ मरुतः॥ छन्दः—ककुबुष्णिक्॥ स्वरः—ऋषभः॥

३९९. अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि ।
युधेदापित्वमिच्छसे ॥१॥

४००. यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु व स्तुषे ।
सखाय इन्द्रमूतये ॥२॥

४०१. आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो माप स्थात समन्यवः ।
दृढा चिद्यमयिष्णवः ॥३॥

४०२. आ याह्ययमिन्दवेऽश्वपते गोपत उर्वरापते ।
सोमं सोमपते पिब ॥४॥

४०३. त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि ।
संस्थे जनस्य गोमतः ॥५॥

४०४. गावश्चिद्घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः ।
रिहते ककुभो मिथः ॥६॥

४०५. त्वं न इन्द्रा भर ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे ।
आ वीरं पृतनासहम् ॥७॥

४०६. अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा काम ईमहे ससृग्महे ।
उदेव ग्मन्त उदभिः ॥८॥

४०७. सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे ।
अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥९॥

४०८. वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः ।
वज्रिञ्चित्रं हवामहे ॥१०॥

सप्तमी दशतिः

ऋषिः—१-८ गोतमः; ९ त्रितः; १० अवस्युः॥ देवता—१-८ इन्द्रः; ९ विश्वेदेवाः; १० अश्विनौ॥ छन्दः—पङ्क्तिः॥ स्वरः—पञ्चमः॥

४०९. स्वादोरित्था विषूवतो मधोः पिबन्ति गौर्यः ।
या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभथा वस्वी रनु स्वराज्यम् ॥१॥

४१०. इत्था हि सोम इन्मदो ब्रह्म चकार वर्धनम् ।
शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ २ ॥

४११. इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः ।
तमिन्महत्स्वाजिषूतिमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् ॥ ३ ॥

४१२. इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन् वीर्यम् ।
यद्ध त्यं मायिनं मृगं तव त्यन्माययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ४ ॥

४१३. प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते ।
इन्द्र नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ५ ॥

४१४. यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धनम् ।
युङ्क्ष्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ इन्द्र वसौ दधः ॥ ६ ॥

४१५. अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत ।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ ७ ॥

४१६. उपो षु शृणुही गिरो मघवन्मातथाइव ।
कदा नः सूनृतावतः कर इदर्थयास इद्योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ ८ ॥

४१७. चन्द्रमा अप्स्वा३ऽन्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।
न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ९ ॥

४१८. प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम् ।
स्तोता वामश्विनावृषि स्तोमेभिर्भूषति प्रति माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥ १० ॥

अष्टमी दशतिः

ऋषिः—१, ७ वसुश्रुतः; २, ४ विमदः; ३ सत्यश्रवाः; ५, ६ गोतमः; ८ अंहोमुग्वामदेव्यः ॥ देवता—१, २, ७ अग्निः; ३ उषाः; ४ सोमः; ५, ६ इन्द्रः; ८ विश्वेदेवाः ॥ छन्दः—१-७ पङ्क्तिः; ८ उपरिष्टाद् बृहती ॥ स्वरः—१-७ पञ्चमः; ८ मध्यमः ॥

४१९. आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् ।
यद्ध स्या ते पनीयसी समिद् दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ १ ॥

४२०. अग्निं न स्ववृक्तिभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
शीरं पावकशोचिषं वि वो मदे यज्ञेषु स्तीर्णबर्हिषं विवक्षसे ॥ २ ॥

४२१. महे नो अद्य बोधयोषो राये दिवित्मती ।
यथा चिन्नो अबोधयः सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥ ३ ॥

४२२. भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम् ।
अथा ते सख्ये अन्धसो वि वो मदे रणा गावो न यवसे विवक्षसे ॥ ४ ॥

४२३. क्रत्वा महाँ अनुष्वधं भीम आ वावृते शवः ।
श्रिय ऋष्व उपाकयोर्नि शिप्री हरिवां दधे हस्तयोर्वज्रमायसम् ॥ ५ ॥

४२४. स घा तं वृषणं रथमधि तिष्ठाति गोविदम् ।
यः पात्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्रा चिकेतति योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ ६ ॥

४२५. अग्निं तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः ।
अस्तमर्वन्त आशवोऽस्तं नित्यासो वाजिन इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ ७ ॥

४२६. न तमंहो न दुरितं देवासो अष्ट मर्त्यम् ।
सजोषसो यमर्यमा मित्रो नयति वरुणो अति द्विषः ॥ ८ ॥

नवमी दशतिः

ऋषिः—१, ३-५, १० धिष्ण्या ऐश्वरयोऽग्नयः; २, ६ त्र्यरुणत्रसदस्यू; ७ वसिष्ठः; ८, ९ वामदेवः ॥ देवता—१-६, १० पवमानः; ७ मरुतः; ८ अग्निः; ९ वाजिनां स्तुतिः ॥ छन्दः—१, ३, ४, ५, ७, १० द्विपदा पङ्क्तिः; २, ६ त्रिपदा पिपीलिकामध्यानुष्टुप्; ८ पदपङ्क्तिः; ९ पुरउष्णिक् ॥ स्वरः—१, ३-५, ७, ८, १० पञ्चमः; २, ६ गान्धारः; ९ ऋषभः ॥

४२७. परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय ॥ १ ॥

४२८. पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः ।
द्विषस्तरध्या ऋणया न ईरसे ॥ २ ॥

४२९. पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥ ३ ॥

४३०. पवस्व सोम महे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥ ४ ॥

४३१. इन्दुः पविष्ट चारुर्मदायापामुपस्थे कविर्भगाय ॥ ५ ॥

४३२. अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये ।
वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे ॥ ६ ॥

४३३. क ईं व्यक्ता नरः सनीडा रुद्रस्य मर्या अथा स्वश्वाः ॥ ७ ॥

४३४. अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम् ।
ऋध्यामा त ओहैः ॥ ८ ॥

४३५. आविर्मर्या आ वाजं वाजिनो अग्मं देवस्य सवितुः सवम् ।
स्वर्गाँ अर्वन्तो जयत ॥ ९ ॥

४३६. पवस्व सोम द्युम्नी सुधारो महाँ अवीनामनुपूर्व्यः ॥ १० ॥

इति पञ्चमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ पञ्चमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

दशमी दशतिः

ऋषिः—१, २, ५, ६, ८-१० वामदेवः; ३, ४ अवस्युः; ७ संवर्तः ॥ देवता—१-५, ८-१० इन्द्रः; ६ विश्वेदेवाः; ७ उषाः ॥ छन्दः—द्विपदाविराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

४३७. विश्वतोदावन् विश्वतो न आ भर यं त्वा शविष्ठमीमहे ॥ १ ॥

४३८. एष ब्रह्मा य ऋत्विय इन्द्रो नाम श्रुतो गृणे ॥ २ ॥

४३९. ब्रह्माण इन्द्रं महयन्तो अर्कैरवर्धयन्नहये हन्तवा उ ॥ ३ ॥

४४०. अनवस्ते रथमश्वाय तक्षुस्त्वष्टा वज्रं पुरुहूत द्युमन्तम् ॥ ४ ॥

४४१. शं पदं मघं रयीषिणे न काममव्रतो हिनोति न स्पृशद्रयिम् ॥ ५ ॥

४४२. सदा गावः शुचयो विश्वधायसः सदा देवा अरेपसः ॥ ६ ॥

४४३. आ याहि वनसा सह गावः सचन्त वर्तनिं यदूधभिः ॥ ७ ॥

४४४. उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः पुष्येम रयिं धीमहे त इन्द्र ॥ ८ ॥

४४५. अर्चन्त्यर्कं मरुतः स्वर्का आ स्तोभति श्रुतो युवा स इन्द्रः ॥ ९ ॥

४४६. प्र व इन्द्राय वृत्रहन्तमाय विप्राय गाथं गायत यं जुजोषते ॥ १० ॥

एकादशी दशतिः

ऋषिः १, ३, ४, ७, ९, १० वामदेवः; २ बन्धुः; ५ संवर्त्तः; ६ भुवन आप्त्यः; ८ भरद्वाजः ॥ देवता—१, २, ३ अग्निः; ४, ८, १० इन्द्रः; ५ उषाः; ६, ७, ९ विश्वेदेवाः ॥ छन्दः—१, ३, ४, ७ द्विपदा गायत्री; २, ५, ६ द्विपदा पङ्क्तिः; ८, ९ द्विपदा त्रिष्टुप्; १० एकपदा गायत्री ॥ स्वरः—१, ३, ४, ७, १० षड्जः; २, ५, ६ पञ्चमः; ८, ९ धैवतः ॥

४४७. अचेत्यग्निश्चिकितिर्हव्यवाड् न सुमद्रथः ॥ १ ॥

४४८. अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भुवो वरूथ्यः ॥ २ ॥

४४९. भगो न चित्रो अग्निर्महोनां दधाति रत्नम् ॥ ३ ॥

४५०. विश्वस्य प्र स्तोभ पुरो वा सन् यदि वेह नूनम् ॥ ४ ॥

४५१. उषा अप स्वसुष्टमः सं वर्तयति वर्तनिं सुजातता ॥ ५ ॥

४५२. इमा नु कं भुवना सीषधेमेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ॥ ६ ॥

४५३. वि स्रुतयो यथा पथ इन्द्र त्वद्यन्तु रातयः ॥ ७ ॥

४५४. अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥ ८ ॥

४५५. ऊर्जा मित्रो वरुणः पिन्वतेडाः पीवरीमिषं कृणुही न इन्द्र ॥ ९ ॥

४५६. इन्द्रो विश्वस्य राजति ॥ १० ॥

द्वादशी दशतिः

ऋषिः—१, १० गृत्समदः; २ गौराङ्गिरसः; ३, ५, ९ परुच्छेपः; ४ रेभः; ६ एवयामरुत्; ७ अनानतः पारुच्छेपिः; ८ नकुलः ॥ देवता—१, ३, ४, १० इन्द्रः; २ सूर्यः; ५ विश्वेदेवाः; ६ मरुतः; ७ पवमानः; ८ सविता; ९ अग्निः ॥ छन्दः—१, १० अष्टिः; २, ४, ६ जगती; ३, ५, ७, ९ अत्यष्टिः; ८, १० अतिशक्वरी ॥ स्वरः—१, १० मध्यमः; २, ४, ६ निषादः; ३, ५, ७, ९ गान्धारः; ८, १० पञ्चमः ॥

४५७. त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृम्पत्सोममपिबद्-
विष्णुना सुतं यथावशम्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे
महामुरुं सैनं सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥ १ ॥

४५८. अयं सहस्रमानवो दृशः कवीनां मतिर्ज्योतिर्विधर्म ।
ब्रध्नः समीचीरुषसः समैरयदरेपसः सचेतसः स्वसरे
मन्युमन्तश्चिता गोः ॥ २ ॥

४५९. एन्द्र याह्युप नः परावतो नायमच्छा विदथानीव
सत्पतिरस्ता राजेव सत्पतिः। हवामहे त्वा प्रयस्वन्तः
सुतेष्वा पुत्रासो न पितरं वाजसातये मंहिष्ठं वाजसातये ॥३॥
४६०. तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं
श्रवांसि भूरि। मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो ववर्त राये
नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥४॥
४६१. अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निं धिया दध आ नु त्यच्छर्द्धो
दिव्यं वृणीमह इन्द्रवायू वृणीमहे ।
यद्ध क्राणा विवस्वते नाभा सन्दाय नव्यसे ।
अध प्र नूनमुप यन्ति धीतयो देवाँ अच्छा न धीतयः ॥५॥
४६२. प्र वो महे मतयो यन्तु विष्णवे मरुत्वते गिरिजा
एवयामरुत्। प्र शर्धाय प्र यज्यवे सुखादये तवसे
भन्ददिष्टये धुनिव्रताय शवसे ॥६॥
४६३. अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि तरति सयुग्वभिः
सूरो न सयुग्वभिः। धारा पृष्ठस्य रोचते पुनानो अरुषो
हरिः। विश्वा यद्रूपा परियास्यृक्वभिः सप्तास्येभिर्ऋक्वभिः ॥७॥
४६४. अभि त्यं देवं सवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवं
रत्नधामभि प्रियं मतिम्। ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भा अदिद्युतत्
सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः ॥८॥
४६५. अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसोः सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं
न जातवेदसम्। य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा ।
घृतस्य विभ्राष्टिमनु शुक्रशोचिष आजुह्वानस्य सर्पिषः ॥९॥
४६६. तव त्यन्नर्यं नृतोऽप इन्द्र प्रथमं पूर्व्यं दिवि प्रवाच्यं कृतम् ।
यो देवस्य शवसा प्रारिणा असु रिणन्नपः ।
भुवो विश्वमभ्यदेवमोजसा विदेदूर्जं शतक्रतुर्विदेदिषम् ॥१०॥

इति सामवेदसंहितायामैन्द्रं काण्डम्॥

अथ पवमानं काण्डम्

अथ पञ्चमोऽध्यायः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१, ४ अमहीयुः; २ मधुच्छन्दाः; ३ भृगुर्वारुणिः; ५ त्रितः; ६ कश्यपः; ७ जमदग्निः; ८ दृढच्युत आगस्त्यः; ९, १० काश्यपोऽसितः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

४६७. उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे। उग्रं शर्म महि श्रवः॥१॥
४६८. स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया। इन्द्राय पातवे सुतः॥२॥
४६९. वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः। विश्वा दधान ओजसा॥३॥
४७०. यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा। देवावीरघशंसहा ॥४॥
४७१. तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत् ॥५॥
४७२. इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः। अर्कस्य योनिमासदम् ॥६॥
४७३. असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः। श्येनो न योनिमासदत् ॥७॥
४७४. पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे। मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥८॥
४७५. परि स्वानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षरत्। मदेषु सर्वधा असि ॥९॥
४७६. परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः। स्वानैर्याति कविक्रतुः॥१०॥

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१ श्यावाश्वः; २ त्रितः; ३, ८ अमहीयुः; ४ भृगुः; ५, ६ कश्यपः; ७ निध्रुविः काश्यपः; ९, १० काश्यपोऽसितः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

४७७. प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनाम्। सुता विदथे अक्रमुः ॥१॥
४७८. प्र सोमासो विपश्चितोऽपो नयन्त ऊर्मयः। वनानि महिषाइव ॥२॥
४७९. पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥३॥
४८०. वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे ।
पवमान स्वर्दृशम् ॥४॥

४८१. इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मतिः ।
सृजदश्वं रथीरिव ॥ ५ ॥

४८२. असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया ।
शुक्रासो वीरयाशवः ॥ ६ ॥

४८३. पवस्व देव आयुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः ।
वायुमा रोह धर्मणा ॥ ७ ॥

४८४. पवमानो अजीजनद् दिवश्चित्रं न तन्यतुम् ।
ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥ ८ ॥

४८५. परि स्वानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा ।
मधो अर्षन्ति धारया ॥ ९ ॥

४८६. परि प्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्मावधि श्रितः ।
कारुं बिभ्रत् पुरुस्पृहम् ॥ १० ॥

इति पञ्चमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१, ८, ९ अमहीयुः; २ बृहन्मतिराङ्गिरसः; ३ जमदग्निः; ४ प्रभूवसुः; ५ मेध्यातिथिः; ६, ७ निध्रुविः काश्यपः; १० उचथ्यः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

४८७. उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् ।
इन्दुं देवा अयासिषुः ॥ १ ॥

४८८. पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः ।
शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥ २ ॥

४८९. आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभि श्रियः ।
इन्दुरिन्द्राय धीयते ॥ ३ ॥

४९०. असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः ।
कार्ष्मन् वाजी न्यक्रमीत् ॥ ४ ॥

४९१. प्र यद्गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः ।
घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥ ५ ॥

४९२. अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित् सोम मत्सरः ।
नुदस्वादेवयुं जनम् ॥ ६ ॥

४९३. अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः ।
हिन्वानो मानुषीरपः ॥ ७ ॥

४९४. स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे ।
वव्रिवांसं महीरपः ॥ ८ ॥

४९५. अया वीती परि स्रव यस्त इन्दो मदेष्वा ।
अवाहन्नवतीर्नव ॥ ९ ॥

४९६. परि द्युक्षं सनद्रयिं भरद्वाजं नो अन्धसा ।
स्वानो अर्ष पवित्र आ ॥ १० ॥

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१ मेधातिथिः; २, ७ भृगुः; ३ उचथ्यः; ४ अवत्सारः; ५ निध्रुविः काश्यपः; ६, १० असितः; ८, ९ कश्यपो मारीचः; ११ कविः; १२ जमदग्निः; १३ अयास्य आङ्गिरसः; १४ अमहीयुः। देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

४९७. अचिक्रदद् वृषा हरिर्महान् मित्रो न दर्शतः। सं सूर्येण दिद्युते ॥ १ ॥

४९८. आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे। पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥ २ ॥

४९९. अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ नय। पुनाहीन्द्राय पातवे ॥ ३ ॥

५००. तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः। तरत् स मन्दी धावति ॥ ४ ॥

५०१. आ पवस्व सहस्त्रिणं रयिं सोम सुवीर्य्यम्। अस्मे श्रवांसि धारय ॥ ५ ॥

५०२. अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः। रुचे जनन्त सूर्यम् ॥ ६ ॥

५०३. अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत्। सीदन् योनौ वनेष्वा ॥ ७ ॥

५०४. वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः। वृषा धर्माणि दध्रिषे॥ ८॥

५०५. इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः। इन्दो रुचाभि गा इहि॥ ९॥

५०६. मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः। अव्या वारेभिरस्मयुः॥ १०॥

५०७. अया सोम सुकृत्यया महान्त्सन्नभ्यवर्धथाः। मन्दान इद् वृषायसे॥ ११॥

५०८. अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति। हिन्वान आप्यं बृहत्॥ १२॥

५०९. प्र न इन्दो महे तु न ऊर्मिं न बिभ्रदर्षसि। अभि देवाँ अयास्यः॥ १३॥

५१०. अपघ्नन् पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः। गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम्॥ १४॥

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—भरद्वाजः कश्यपो गोतमोऽत्रिर्विश्वामित्रो जमदग्निर्वसिष्ठः॥

देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

५११. पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देवो हिरण्ययः॥ १॥

५१२. परीतो षिञ्चता सुतं सोमो य उत्तमं हविः।
दधन्वाँ यो नर्यो अप्स्वा३न्तरा सुषाव सोममद्रिभिः॥ २॥

५१३. आ सोम स्वानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दध्रिषे॥ ३॥

५१४. प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम्॥ ४॥

५१५. सोम उ ष्वाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम्।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया॥ ५॥

५१६. तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवेदिवे।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँ रति ताँ इहि॥ ६॥

५१७. मृज्यमानः सुहस्त्या समुद्रे वाचमिन्वसि।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि॥ ७॥

५१८. अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम्।
समुद्रस्याधि विष्टपे मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः॥ ८॥

५१९. पुनानः सोम जागृविरव्या वारैः परि प्रियः।
त्वं विप्रो अभवोऽङ्गिरस्तम मध्वा यज्ञं मिमिक्ष णः॥ ९॥

५२०. इन्द्राय पवते मदः सोमो मरुत्वते सुतः।
सहस्रधारो अत्यव्यमर्षति तमी मृजन्त्यायवः॥ १०॥

५२१. पवस्व वाजसातमोऽभि विश्वानि वार्या।
त्वं समुद्रः प्रथमे विधर्म देवेभ्यः सोम मत्सरः॥ ११॥

५२२. पवमाना असृक्षत पवित्रमति धारया।
मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया हया मेधामभि प्रयांसि च॥ १२॥

षष्ठी दशतिः

ऋषिः—१, ९ उशनाः काव्यः; २ वृषगणो वासिष्ठः; ३, ७ पराशरः शाक्त्यः; ४, ६ वसिष्ठो मैत्रावरुणः; ५, १० प्रतर्दनो दैवोदासिः; ८ प्रस्कण्वः काण्वः॥

देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

५२३. प्र तु द्रव परि कोशं नि षीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्हीं रशनाभिर्नयन्ति॥ १॥

५२४. प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन्॥ २॥

५२५. तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निर्ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः॥ ३॥

५२६. अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम्।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन् मितेव सद्म पशुमन्ति होता॥ ४॥

५२७. सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः॥ ५॥

५२८. अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामङ्गोषिणमवावशन्त वाणीः ।
वना वसानो वरुणो न सिन्धुर्वि रत्नधा दयते वार्याणि ॥ ६ ॥
५२९. अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मं जनयन्प्रजा भुवनस्य गोपाः ।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः ॥ ७ ॥
५३०. कनिक्रन्ति हरिरा सृज्यमानः सीदन् वनस्य जठरे पुनानः ।
नृभिर्यतः कृणुते निर्णिजं गामतो मतिं जनयत स्वधाभिः ॥ ८ ॥
५३१. एष स्य ते मधुमाँ इन्द्र सोमो वृषा वृष्णः परि पवित्रे अक्षाः ।
सहस्रदाः शतदा भूरिदावा शश्वत्तमं बर्हिरा वाज्यस्थात् ॥ ९ ॥
५३२. पवस्व सोम मधुमाँ ऋतावापो वसानो अधि सानो अव्ये ।
अव द्रोणानि घृतवन्ति रोह मदिन्तमो मत्सरः इन्द्रपानः ॥ १० ॥

सप्तमी दशतिः

ऋषिः—१ प्रतर्दनः; २, १० पराशरः शाक्त्यः; ३ इन्द्रप्रमतिर्वासिष्ठः; ४ वसिष्ठो मैत्रावरुणः; ५ मृडीको वासिष्ठः; ६ नोधा गोतमः; ७ कण्वो घौरः; ८ मन्युर्वासिष्ठः; ९ कुत्स आङ्गिरसः; ११ कश्यपो मारीचः; १२ प्रस्कण्वः काण्वः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

५३३. प्र सेनानीः शूरो अग्रे रथानां गव्यन्नेति हर्षते अस्य सेना ।
भद्रान्कृण्वन्निन्द्रहवान्त्सखिभ्य आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते ॥ १ ॥
५३४. प्र ते धारा मधुमतीरसृग्रन् वारं यत्पूतो अत्येष्यव्यम् ।
पवमान पवसे धाम गोनां जनयन्त्सूर्यमपिन्वो अर्कैः ॥ २ ॥
५३५. प्र गायताभ्यर्चाम देवान्त्सोमं हिनोत महते धनाय ।
स्वादुः पवतामति वारमव्यमा सीदतु कलशं देव इन्दुः ॥ ३ ॥
५३६. प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो रथो न वाजं सनिषन्नयासीत् ।
इन्द्रं गच्छन्नायुधा संशिशानो विश्वा वसु हस्तयोरादधानः ॥ ४ ॥
५३७. तक्षद्यदी मनसो वेनतो वाग् ज्येष्ठस्य धर्मं द्युक्षोरनीके ।
आदीमायन् वरमा वावशाना जुष्टं पतिं कलशे गाव इन्दुम् ॥ ५ ॥

५३८. साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी ॥ ६ ॥
५३९. अधि यदस्मिन् वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूरे न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयान् व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥ ७ ॥
५४०. इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यरातिं वरिवस्कृण्वन् वृजनस्य राजा ॥ ८ ॥
५४१. अया पवा पवस्वैना वसूनि माँश्चत्व इन्दो सरसि प्र धन्व ।
ब्रध्नश्चिद्यस्य वातो न जूतिं पुरुमेधाश्चित्तकवे नरं धात् ॥ ९ ॥
५४२. महत् तत् सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ॥ १० ॥
५४३. असर्जि वक्वा रथ्ये यथाजौ धिया मनोता प्रथमा मनीषा ।
दश स्वसारो अधि सानो अव्ये मृजन्ति वह्निं सदनेष्वच्छ ॥ ११ ॥
५४४. अपामिवेदूर्मयस्तर्त्तुराणाः प्र मनीषा ईरते सोममच्छ ।
नमस्यन्तीरुप च यन्ति सं चाच विशन्त्युशतीरुशन्तम् ॥ १२ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

अष्टमी दशतिः

ऋषिः—१ अन्धीगुः श्यावाश्विः; २ नहुषो मानवः; ३ ययातिर्नाहुषः; ४ मनुः सांवरणः; ५, ८ ऋजिष्वाम्बरीषौ; ६, ७ रेभसूनू काश्यपौ; ९ प्रजापतिर्वाच्यो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—१-६, ८, ९ अनुष्टुप्; ७ बृहती ॥ स्वरः—१-६, ८, ९ गान्धारः; ७ मध्यमः ॥

५४५. पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे ।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥ १ ॥
५४६. अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥ २ ॥

५४७. सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरन्देवान्गच्छन्तु वो मदाः ॥ ३ ॥

५४८. सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।
मित्राः स्वाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ॥ ४ ॥

५४९. अभी नो वाजसातमं रयिमर्ष शतस्पृहम् ।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभासहम् ॥ ५ ॥

५५०. अभी नवन्ते अद्रुहः प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
वत्सं न पूर्व आयुनि जातं रिहन्ति मातरः ॥ ६ ॥

५५१. आ हर्यताय धृष्णवे धनुष्टन्वन्ति पौंस्यम् ।
शुक्रा वि यन्त्यसुराय निर्णिजे विपामग्रे महीयुवः ॥ ७ ॥

५५२. परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत्परि मदेन सह गच्छति ॥ ८ ॥

५५३. प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः ।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः ॥ ९ ॥

नवमी दशतिः

ऋषिः—१-३, ५ कविर्भार्गवः; ४, ६ ऋषिगणः; ७ रेणुर्वैश्वामित्रः; ८ वेनो भार्गवः; ९ वसुर्भारद्वाजः; १० वत्सप्रीः; ११ अत्रिर्भौमः; १२ पवित्र आङ्गिरसः ॥
देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

५५४. अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद् विचक्षणः ॥ १ ॥

५५५. अचोदसो नो धन्वन्त्विन्दवः प्र स्वानासो बृहद् देवेषु हरयः ।
वि चिदश्नाना इषयो अरातयोऽर्यो नः सन्तु सनिषन्तु नो धियः ॥ २ ॥

५५६. एष प्र कोशे मधुमाँ अचिक्रददिन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टमः ।
अभ्यृ३तस्य सुदुघा घृतश्चुतो वाश्रा अर्षन्ति पयसा च धेनवः ॥ ३ ॥

५५७. प्रो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम् ।
मर्यइव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयामना पथा ॥ ४ ॥

५५८. धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः ।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुषे नदीष्वा ॥ ५ ॥

५५९. वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः ।
प्राणा सिन्धूनां कलशाँ अचिक्रददिन्द्रस्य हार्द्याविशन्मनीषिभिः ॥ ६ ॥

५६०. त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे सत्यामाशिरं परमे व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ॥ ७ ॥

५६१. इन्द्राय सोम सुषुतः परि स्रवापामीवा भवतु रक्षसा सह ।
मा ते रसस्य मत्सत द्वयाविनो द्रविणस्वन्त इह सन्त्विन्दवः ॥ ८ ॥

५६२. असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारमत्येष्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदत् ॥ ९ ॥

५६३. प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवोऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।
बर्हिषदो वचनावन्त ऊधभिः परिस्रुतमुस्रिया निर्णिजं धिरे ॥ १० ॥

५६४. अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मध्वाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमप्सु गृभ्णते ॥ ११ ॥

५६५. पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद् वहन्तः सं तदाशत ॥ १२ ॥

दशमी दशतिः

ऋषिः—१, ७, ११ अग्निश्चाक्षुषः; २ चक्षुर्मानवः; ३, ४, ९, १० पर्वतनारदौ; ५ त्रित आप्त्यः; ६ मनुराप्सवः; ८, १२ द्वित आप्त्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥
छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

५६६. इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः ।
श्रुष्टे जातास इन्दवः स्वर्विदः ॥ १ ॥

५६७. प्र धन्वा सोम जागृविरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ।
द्युमन्तं शुष्ममा भर स्वर्विदम् ॥ २ ॥

५६८. सखाय आ नि षीदत पुनानाय प्र गायत ।
शिशुं न यज्ञैः परि भूषत श्रिये ॥ ३ ॥

५६९. तं वः सखायो मदाय पुनानमभि गायत ।
शिशुं न हव्यैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥ ४ ॥

५७०. प्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम् ।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता ॥ ५ ॥

५७१. पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥ ६ ॥

५७२. सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यं वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥ ७ ॥

५७३. प्र पुनानाय वेधसे सोमाय वच उच्यते ।
भृतिं न भरा मतिभिर्जुजोषते ॥ ८ ॥

५७४. गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धनिव ।
शुचिं च वर्णमधि गोषु धारय ॥ ९ ॥

५७५. अस्मभ्यं त्वा वसुविदमभि वाणीरनूषत ।
गोभिष्टे वर्णमभि वासयामसि ॥ १० ॥

५७६. पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या ।
अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः ॥ ११ ॥

५७७. परि कोशं मधुश्चुतं सोमः पुनानो अर्षति ।
अभि वाणीर्ऋषीणां सप्ता नूषत ॥ १२ ॥

एकादशी दशतिः

ऋषिः—१ गौरिवीतिः शाक्त्यः; २ ऊर्ध्वसद्मा आङ्गिरसः; ३ ऋजिश्वा भरद्वाजः; ४ कृतयशा आङ्गिरसः; ५ ऋणञ्चयः; ६ शक्तिर्वासिष्ठः; ७, ८ उरुराङ्गिरसः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—१-४, ६ ककुबुष्णिक्; ५ यवमध्या गायत्री; ७, ८ काकुभः प्रगाथः (७ ककुबुष्णिक्; ८ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१-४, ६ ऋषभः; ५ षड्जः; ७, ८ मध्यमः ॥

५७८. पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः ।
महि द्युक्षतमो मदः ॥ १ ॥

५७९. अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुम् ।
वि कोशं मध्यमं युव ॥ २ ॥

५८०. आ सोता परि षिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम् ।
वनप्रक्षमुदप्रुतम् ॥ ३ ॥

५८१. एतमु त्यं मदच्युतं सहस्रधारं वृषभं दिवोदुहम् ।
विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥ ४ ॥

५८२. स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इडानाम् ।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥ ५ ॥

५८३. त्वं ह्या३ङ्ग दैव्य पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।
अमृतत्वाय घोषयन् ॥ ६ ॥

५८४. एष स्य धारया सुतोऽव्या वारेभिः पवते मदिन्तमः ।
क्रीडन्नूर्मिरपामिव ॥ ७ ॥

५८५. य उस्त्रिया अपि या अन्तरश्मनि निर्गा अकृन्तदोजसा ।
अभि व्रजं तत्निषे गव्यमश्व्यं वर्मीव धृष्णवा रुज ।
ओ३म् वर्मीव धृष्णवा रुज ॥ ८ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः ॥

इति पञ्चमोऽध्यायः ॥

इति पवमानं काण्डम् ॥

अथ आरण्यं काण्डम्

अथ षष्ठोऽध्यायः

अथ षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयोऽर्धः

प्रथमा दशतिः

ऋषिः—१ भरद्वाजः; २ वसिष्ठः; ३, ६ वामदेवः; ४ शुनःशेपः; ५ गृत्समदः; ७, ८ अमहीयुः; ९ आत्मा॥ देवता—१-३ इन्द्रः; ४ वरुणः; ५, ७, ८ पवमानः सोमः; ६ विश्वेदेवाः; ९ अन्नम्॥ छन्दः—१ बृहती; २, ४, ५, ९ त्रिष्टुप्; ३, ७, ८ गायत्री; ६ एकपदा त्रिष्टुप्॥ स्वरः—१ मध्यमः; २, ४-६, ९ धैवतः; ३, ७, ८ षड्जः॥

५८६. इन्द्र ज्येष्ठं न आ भर ओजिष्ठं पुपुरि श्रवः।
यद्दिधृक्षेम वज्रहस्त रोदसी ओभे सुशिप्र पप्राः॥ १॥

५८७. इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधिक्षमा विश्वरूपं यदस्य।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतं चिदर्वाक्॥ २॥

५८८. यस्येदमा रजोयुजस्तुजे जने वनं स्वः। इन्द्रस्य रन्त्यं बृहत्॥ ३॥

५८९. उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।
अथादित्य व्रते वयं तवानागसो अदितये स्याम॥ ४॥

५९०. त्वया वयं पवमानेन सोम भरे कृतं वि चिनुयाम शश्वत्।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः॥ ५॥

५९१. इमं वृषणं कृणुतैकमिन्माम्॥ ६॥

५९२. स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः।
वरिवोवित् परिस्रव॥ ७॥

५९३. एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम्।
सिषासन्तो वनामहे॥ ८॥

५९४. अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य नाम।
यो मा ददाति स इदेवमावदहमन्नमन्नमदन्तमद्मि॥ ९॥

द्वितीया दशतिः

ऋषिः—१ श्रुतकक्षः; २ पवित्रः; ३, ४ मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः; ५ प्रथः; ६ गृत्समदः; ७ नृमेधपुरुमेधौ॥ देवता—१, ३, ४, ७ इन्द्रः; २ पवमानः; ५ विश्वेदेवाः; ६ वायुः॥ छन्दः—१, ३, ४, ६ गायत्री; २ जगती; ५ त्रिष्टुप्; ७ अनुष्टुप्॥ स्वरः—१, ३, ४, ६ षड्जः; २ निषादः; ५ धैवतः; ७ गान्धारः॥

५९५. त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च। परुष्णीषु रुशत् पयः॥ १॥

५९६. अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा मिमेति भुवनेषु वाजयुः।
मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमादधुः॥ २॥

५९७. इन्द्र इद्धर्योः सचा सम्मिश्ल आ वचोयुजा।
इन्द्रो वज्री हिरण्ययः॥ ३॥

५९८. इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च। उग्र उग्राभिरूतिभिः॥ ४॥

५९९. प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नामानुष्टुभस्य हविषो हविर्यत्।
धातुर्द्युतानात् सवितुश्च विष्णो रथन्तरमा जभारा वसिष्ठः॥ ५॥

६००. नियुत्वान् वायवा गह्ययं शुक्रो अयामि ते।
गन्तासि सुन्वतो गृहम्॥ ६॥

६०१. यज्जायथा अपूर्व्य मघवन्वृत्रहत्याय।
तत्पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उतो दिवम्॥ ७॥

तृतीया दशतिः

ऋषिः—१, ५, ७, १० वामदेवः; २, ३ गोतमः; ४ मधुच्छन्दाः; ६ गृत्समदः; ८, ९ भरद्वाजो बार्हस्पत्यः; ११ हिरण्यस्तूपः; १२, १३ विश्वामित्रः॥ देवता—१ प्रजापतिः; २, ३ पवमानः सोमः; ४-६, १३ अग्निः; ७ रात्रिः; ८ वैश्वानरः; ९ विश्वेदेवाः; १० लिङ्गोक्ताः; ११ इन्द्रः; १२ आत्मा॥ छन्दः—१, ७ अनुष्टुप्; २, ३, ५, ६, ९, ११-१३ त्रिष्टुप्; ४ गायत्री; ८ जगती; १० महापङ्क्तिः॥ स्वरः—१, ७ गान्धारः; २, ३, ५, ६, ९, ११-१३ धैवतः; ४ षड्जः; ८ निषादः; १० पञ्चमः॥

६०२. मयि वर्चो अथो यशोऽथो यज्ञस्य यत्पयः।
परमेष्ठी प्रजापतिर्दिवि द्यामिव दृंहतु॥ १॥

६०३. सं ते पयांसि समु यन्तु वाजाः सं वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः ।
आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवांस्युत्तमानि धिष्व ॥ २ ॥

६०४. त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।
त्वमातनोरुर्वा३न्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥ ३ ॥

६०५. अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ ४ ॥

६०६. ते मन्वत प्रथमं नाम गोनां त्रिः सप्त परमं नाम जानन् ।
ता जानतीरभ्यनूषत क्षा आविर्भुवन्नरुणीर्यशसा गावः ॥ ५ ॥

६०७. समन्या यन्त्युपयन्त्यन्याः समानमूर्वं नद्यस्पृणन्ति ।
तमू शुचिं शुचयो दीदिवांसमपान्नपातमुप यन्त्यापः ॥ ६ ॥

६०८. आ प्रागाद्भद्रा युवतिरह्नः केतून्त्समीर्त्सति ।
अभूद्भद्रा निवेशनी विश्वस्य जगतो रात्री ॥ ७ ॥

६०९. प्रक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू महः प्र नो वचो विदथा जातवेदसे ।
वैश्वानराय मतिर्नव्यसे शुचिः सोमइव पवते चारुरग्नये ॥ ८ ॥

६१०. विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञमुभे रोदसी अपां नपाच्च मन्म ।
मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेष्विद्वो अन्तमा मदेम ॥ ९ ॥

६११. यशो मा द्यावापृथिवी यशो मेन्द्रबृहस्पती ।
यशो भगस्य विन्दतु यशो मा प्रतिमुच्यताम् ।
यशस्व्या३स्याः संसदोऽहं प्रवदिता स्याम् ॥ १० ॥

६१२. इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री ।
अहन्नहिमन्वपस्ततर्द प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम् ॥ ११ ॥

६१३. अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन् ।
त्रिधातुरर्को रजसो विमानोऽजस्रं ज्योतिर्हविरस्मि सर्वम् ॥ १२ ॥

६१४. पात्यग्निर्विपो अग्रं पदं वेः पाति यह्वश्चरणं सूर्य्यस्य ।
पाति नाभा सप्तशीर्षाणमग्निः पाति देवानामुपमादमृष्वः ॥ १३ ॥

चतुर्थी दशतिः

ऋषिः—१, २, ८-१२ वामदेवः; ३-७ नारायणः ॥ देवता—१ अग्निः; २ ऋतुः; ३-७ पुरुषः; ८ द्यावापृथिवी; ९, ११ इन्द्रः; १० आत्मन आशीः; १२ गौः ॥
छन्दः—१, २ पङ्क्तिः; ३—७, ९, १० अनुष्टुप्; ८, ११, १२ त्रिष्टुप् ॥
स्वरः—१, २ पञ्चमः; ३-७, ९, १० गान्धारः; ८, ११, १२ धैवतः ॥

६१५. भ्राजन्त्यग्ने समिधान दीदिवो जिह्वा चरत्यन्तरासनि ।
स त्वं नो अग्ने पयसा वसुविद्रयिं वर्चो दृशेऽदाः ॥ १ ॥

६१६. वसन्त इन्नु रन्त्यो ग्रीष्म इन्नु रन्त्यः ।
वर्षाण्यनु शरदो हेमन्तः शिशिर इन्नु रन्त्यः ॥ २ ॥

६१७. सहस्रशीर्षाः पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं सर्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ ३ ॥

६१८. त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।
तथा विष्वङ् व्यक्रामदशनानशने अभि ॥ ४ ॥

६१९. पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।
पादोऽस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ५ ॥

६२०. तावानस्य महिमा ततो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ ६ ॥

६२१. ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ७ ॥

६२२. मन्ये वां द्यावापृथिवी सुभोजसौ ये अप्रथेथाममितमभि योजनम् ।
द्यावापृथिवी भवतं स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः ॥ ८ ॥

६२३. हरी त इन्द्र श्मश्रूण्युतो ते हरितौ हरी ।
तं त्वा स्तुवन्ति कवयः पुरुषासो वनर्गवः ॥ ९ ॥

६२४. यद्वर्च्चो हिरण्यस्य यद्वा वर्चो गवामुत ।
सत्यस्य ब्रह्मणो वर्चस्तेन मा सं सृजामसि ॥ १० ॥

६२५. सहस्तन्न इन्द्र दद्ध्योज ईशे ह्यस्य महतो विरप्शिन् ।
क्रतुं न नृम्णं स्थविरं च वाजं वृत्रेषु शत्रून्त्सुहना कृधी नः ॥ ११ ॥

६२६. सहर्षभाः सहवत्सा उदेत विश्वा रूपाणि बिभ्रतीर्द्व्यूध्नीः ।
उरुः पृथुरयं वो अस्तु लोक इमा आपः सुप्रपाणा इह स्त ॥ १२ ॥

पञ्चमी दशतिः

ऋषिः—१ शतं वैखानसाः; २ विभ्राट् सौर्यः; ३ कुत्सः; ४-६ सार्पराज्ञी; ७-१४ प्रस्कण्वः काण्वः ॥ देवता—१ अग्निः पवमानः; २-१४ सूर्यः ॥ छन्दः—१, ४-१४ गायत्री; २ जगती; ३ त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—१, ४-१४ षड्जः; २ निषादः; ३ धैवतः ॥

६२७. अग्न आयूँषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ १ ॥

६२८. विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पिपर्ति बहुधा वि राजति ॥ २ ॥

६२९. चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ ३ ॥

६३०. आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥ ४ ॥

६३१. अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती । व्यख्यन्महिषो दिवम् ॥ ५ ॥

६३२. त्रिंशद्धाम वि राजति वाक् पतङ्गाय धीयते । प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥ ६ ॥

६३३. अप त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः । सूराय विश्वचक्षसे ॥ ७ ॥

६३४. अदृश्रन्नस्य केतवो वि रश्मयो जनाँ अनु । भ्राजन्तो अग्नयो यथा ॥ ८ ॥

६३५. तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमाभासि रोचनम् ॥ ९ ॥

६३६. प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषान् ।
प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे ॥ १० ॥

६३७. येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ अनु ।
त्वं वरुण पश्यसि ॥ ११ ॥

६३८. उद् द्यामेषि रजः पृथ्वहा मिमानो अक्तुभिः ।
पश्यञ्जन्मानि सूर्य ॥ १२ ॥

६३९. अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरो रथस्य नप्त्यः ।
ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः ॥ १३ ॥

६४०. सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य ।
शोचिष्केशं विचक्षण ॥ १४ ॥

इत्यारण्यं काण्डम् ॥

इति षष्ठप्रपाठकः षष्ठोऽध्यायश्च समाप्तः ॥

इति सामवेद-संहितायां पूर्वार्चिकः ॥

अथ महानाम्न्यार्चिकः

ऋषिः—१-१० इन्द्रो वा प्रजापतिर्वा विष्णुर्वा विश्वामित्रो वा ॥ देवता—१-९ इन्द्रः; १० लिङ्गोक्ताः ॥
छन्दः—१-९ विराट्; १० पदपङ्क्तिः ॥ स्वरः—१-९ गान्धारः; १० पञ्चमः ॥

६४१. विदा मघवन् विदा गातुमनुशंसिषो दिशः ।
शिक्षा शचीनां पते पूर्वीणां पुरूवसो ॥ १ ॥

६४२. आभिष्ट्वमभिष्टिभिः स्वा३ऽ न्नांशुः ।
प्रचेतन प्रचेतयेन्द्र द्युम्नाय न इषे ॥ २ ॥

६४३. एवा हि शक्रो राये वाजाय वज्रिवः ।
शविष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे मंहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जस आ याहि पिब मत्स्व ॥ ३ ॥

६४४. विदा राये सुवीर्यं भुवो वाजानां पतिर्वशाँ अनु
मंहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे यः शविष्ठः शूराणाम् ॥ ४ ॥

६४५. यो मंहिष्ठो मघोनामंशुर्न शोचिः ।
चिकित्वो अभि नो नयेन्द्रो विदे तमु स्तुहि ॥ ५ ॥

६४६. ईशे हि शक्रस्तमूतये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
स नः स्वर्षदति द्विषः क्रतुश्छन्द ऋतं बृहत् ॥ ६ ॥

६४७. इन्द्रं धनस्य सातये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
स नः स्वर्षदति द्विषः स नः स्वर्षदति द्विषः ॥ ७ ॥

६४८. पूर्वस्य यत्ते अद्रिवोंऽशुर्मदाय ।
सुम्न आ धेहि नो वसो पूर्तिः शविष्ठ शस्यते ।
वशी हि शक्रो नूनं तन्नव्यं संन्यसे ॥ ८ ॥

६४९. प्रभो जनस्य वृत्रहन्त्समर्येषु ब्रवावहै ।
शूरो यो गोषु गच्छति सखा सुशेवो अद्वयुः ॥ ९ ॥

६५०. एवा ह्येवऽ३ऽ३ऽ३व। एवा ह्यग्ने। एवा हीन्द्र ।
एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः। ओं एवा हि देवाः ॥ १० ॥

इति महानाम्न्यार्चिकः समाप्तः ॥

उत्तरार्चिकः

अथ प्रथमोऽध्यायः

प्रथमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६५१. उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ इयक्षते ॥ १ ॥
६५२. अभि ते मधुना पयोऽथर्वाणो अशिश्रयुः। देवं देवाय देवयु ॥ २ ॥
६५३. स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—कश्यपो मारीचः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

६५४. दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा। सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥ १ ॥
६५५. हिन्वानो हेतृभिर्हित आ वाजं वाज्यक्रमीत्। सीदन्तो वनुषो यथा ॥ २ ॥
६५६. ऋधक्सोम स्वस्तये संजग्मानो दिवा कवे। पवस्व सूर्यो दृशे ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—शतं वैखानसाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६५७. पवमानस्य ते कवे वाजिन्त्सर्गा असृक्षत। अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥ १ ॥
६५८. अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये। अवावशन्त धीतयः ॥ २ ॥
६५९. अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः। अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—भरद्वाजः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६६०. अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ १ ॥
६६१. तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य ॥ २ ॥
६६२. स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि। बृहदग्ने सुवीर्यम् ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—विश्वामित्रो जमदग्निर्वा ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

६६३. आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजांसि सुक्रतू ॥१॥

६६४. उरुशंसा नमोवृधा मह्ना दक्षस्य राजथः। द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता ॥२॥

६६५. गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम्। पातं सोममृतावृधा ॥३॥

(६)

ऋषिः—इरिम्बिठिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६६६. आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम्। एदं बर्हिः सदो मम ॥१॥

६६७. आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना। उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥२॥

६६८. ब्रह्माणस्त्वा युजा वयं सोमपामिन्द्र सोमिनः। सुतावन्तो हवामहे ॥३॥

(७)

ऋषिः—विश्वामित्रो गाथिनः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६६९. इन्द्राग्नी आ गतं सुतं गीर्भिर्नभो वरेण्यम्। अस्य पातं धियेषिता ॥१॥

६७०. इन्द्राग्नी जरितुः सचा यज्ञो जिगाति चेतनः। अया पातमिमं सुतम् ॥२॥

६७१. इन्द्रमग्निं कविच्छदा यज्ञस्य जूत्या वृणे। ता सोमस्येह तृम्पताम् ॥३॥

(८)

ऋषिः—अमहीयुराङ्गिरसः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६७२. उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे। उग्रं शर्म महि श्रवः ॥१॥

६७३. स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः। वरिवोवित् परि स्रव ॥२॥

६७४. एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम्। सिषासन्तो वनामहे ॥३॥

(९)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—१ बार्हतः प्रगाथः,
२ सतोबृहती ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

६७५. पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि ।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देवो हिरण्ययः ॥१॥

६७६. दुहान ऊधर्दिव्यं मधु प्रियं प्रत्नं सधस्थमासदत् ।
आपृच्छ्यं धरुणं वाज्यर्षसि नृभिर्धौतो विचक्षणः ॥२॥

(१०)

ऋषिः—उशनाः काव्यः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

६७७. प्र तु द्रव परि कोशं नि षीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष ।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्ही रशनाभिर्नयन्ति ॥१॥

६७८. स्वायुधः पवते देव इन्दुरशस्तिहा वृजना रक्षमाणः ।
पिता देवानां जनिता सुदक्षो विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्याः ॥२॥

६७९. ऋषिर्विप्रः पुरएता जनानामृभुर्धीर उशना काव्येन ।
स चिद्विवेद निहितं यदासामपीच्यां३ गुह्यं नाम गोनाम् ॥३॥

(११)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ बार्हतः प्रगाथः, २ सतोबृहती ॥
स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

६८०. अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धाइव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥१॥

६८१. न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥२॥

(१२)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६८२. कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता ॥१॥

६८३. कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु ॥२॥

६८४. अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतये ॥३॥

(१३)

ऋषिः—नोधा गौतमः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ बार्हतः प्रगाथः,
२ सतोबृहती ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

६८५. तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥१॥

६८६. द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्त्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥ २ ॥

(१४)

ऋषिः—कलिः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ बार्हतः प्रगाथः, २ सतोबृहती ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

६८७. तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥ १ ॥
६८८. न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदेषु शिप्रमन्धसः ।
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥ २ ॥

(१५)

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

६८९. स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया । इन्द्राय पातवे सुतः ॥ १ ॥
६९०. रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहते । द्रोणे सधस्थमासदत् ॥ २ ॥
६९१. वरिवोधातमो भुवो मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । पर्षि राधो मघोनाम् ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—गौरिवीतिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुप्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः, २ पञ्चमः ॥

६९२. पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः ।
महि द्युक्षतमो मदः ॥ १ ॥
६९३. यस्य ते पीत्वा वृषभो वृषायतेऽस्य पीत्वा स्वर्विदः ।
स सुप्रकेतो अभ्यक्रमीदिषोऽच्छा वाजं नैतशः ॥ २ ॥

(१७)

ऋषिः—अग्निश्चाक्षुषः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

६९४. इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः ।
श्रुष्टे जातास इन्दवः स्वर्विदः ॥ १ ॥
६९५. अयं भराय सानसिरिन्द्राय पवते सुतः ।
सोमो जैत्रस्य चेतति यथा विदे ॥ २ ॥

६९६. अस्येदिन्द्रो मदेष्वा ग्राभं गृभ्णाति सानसिम् ।
वज्रं च वृषणं भरत् समप्सुजित् ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—अन्धीगुः श्यावाश्विः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—आनुष्टुभः प्रगाथः (१ अनुष्टुप्, २-३ गायत्री) ॥ स्वरः—१ गान्धारः, २-३ षड्जः ॥

६९७. पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे ।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥ १ ॥
६९८. यो धारया पावकया परिप्रस्यन्दते सुतः । इन्दुरश्वो न कृत्व्यः ॥ २ ॥
६९९. तं दुरोषमभी नरः सोमं विश्वाच्या धिया । यज्ञाय सन्त्वद्रयः ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—कविर्भार्गवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

७००. अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद्विचक्षणः ॥ १ ॥
७०१. ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियं वक्ता पतिर्धियो अस्या अदाभ्यः ।
दधाति पुत्रः पित्रोरपीच्यां३ नाम तृतीयमधि रोचनं दिवः ॥ २ ॥
७०२. अव द्युतानः कलशाँ अचिक्रदन्नृभिर्येमाणः कोश आ हिरण्यये ।
अभी ऋतस्य दोहना अनूषताधि त्रिपृष्ठ उषसो वि राजसि ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—शंयुर्बार्हस्पत्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ बार्हतः प्रगाथः, २ सतोबृहती ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

७०३. यज्ञायज्ञा वो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे ।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥ १ ॥
७०४. ऊर्जो नपातं स हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये ।
भुवद्वाजेष्वविता भुवद् वृध उत त्राता तनूनाम् ॥ २ ॥

(२१)

ऋषिः—भरद्वाजः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७०५. एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः । एभिर्वर्धास इन्दुभिः ॥ १ ॥

७०६. यत्र क्व च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम्। तत्र योनिं कृणवसे ॥ २ ॥

७०७. न हि ते पूर्तमक्षिपद् भुवन्नेमानां पते। अथा दुवो वनवसे ॥ ३ ॥

(२२)

ऋषिः—सोभरिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुप्, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ ऋषभः, २ पञ्चमः ॥

७०८. वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः ।
वज्रिञ्चित्रं हवामहे ॥ १ ॥

७०९. उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत् ।
त्वामिध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ॥ २ ॥

(२३)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ ककुबुष्णिक्, २ उष्णिक्, ३ पुरउष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

७१०. अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा काम ईमहे ससृग्महे ।
उदेव ग्मन्त उदभिः ॥ १ ॥

७११. वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि ।
वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे ॥ २ ॥

७१२. युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे वचोयुजा ।
इन्द्रवाहा स्वर्विदा ॥ ३ ॥

इति प्रथमोऽध्यायः, प्रथमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

प्रथमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—श्रुतकक्षः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २-३ गायत्री ॥ स्वरः—१ गान्धारः; २-३ षड्जः ॥

७१३. पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत ।
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥ १ ॥

७१४. पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्या३ सनश्रुतम्। इन्द्र इति ब्रवीतन ॥ २ ॥

७१५. इन्द्र इन्नो महोनां दाता वाजानां नृतुः। महाँ अभिज्ञ्वा यमत् ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७१६. प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत। सखायः सोमपाव्ने ॥ १ ॥

७१७. शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः। चकृमा सत्यराधसे ॥ २ ॥

७१८. त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो। त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—मेधातिथिप्रियमेधौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७१९. वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः। कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते ॥ १ ॥

७२०. न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ। तवेदु स्तोमैश्चिकेत ॥ २ ॥

७२१. इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति। यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—श्रुतकक्षः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७२२. इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः। अर्कमर्चन्तु कारवः ॥ १ ॥

७२३. यस्मिन् विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः। इन्द्रं सुते हवामहे ॥ २ ॥

७२४. त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत। तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—इरिम्बिठिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७२५. अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि ।
एहीमस्य द्रवा पिब ॥ १ ॥

७२६. शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः ।
आखण्डल प्र हूयसे ॥ २ ॥
७२७. यस्ते शृङ्गवृषो णपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः ।
न्यस्मिन् दध्र आ मनः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—कुसीदी काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७२८. आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय ।
महाहस्ती दक्षिणेन ॥ १ ॥
७२९. विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् ।
तुविमात्रमवोभिः ॥ २ ॥
७३०. न हि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् ।
भीमं न गां वारयन्ते ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—त्रिशोकः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७३१. अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये ।
तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥ १ ॥
७३२. मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन् ।
मा कीं ब्रह्मद्विषं वनः ॥ २ ॥
७३३. इह त्वा गोपरीणसं महे मन्दन्तु राधसे ।
सरो गौरो यथा पिब ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—मेधातिथिप्रियमेधौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७३४. इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम् ।
अनाभयिन् ररिमा ते ॥ १ ॥
७३५. नृभिर्धौतः सुतो अश्नैरव्या वारैः परिपूतः ।
अश्वो न निक्तो नदीषु ॥ २ ॥

७३६. तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः ।
इन्द्र त्वास्मिन्त्सधमादे ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७३७. इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते ।
पिबा त्वा३स्य गिर्वणः ॥ १ ॥
७३८. यस्ते अनु स्वधामसत् सुते नि यच्छ तन्वम् ।
स त्वा ममत्तु सोम्य ॥ २ ॥
७३९. प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः प्रेन्द्र ब्रह्मणा शिरः ।
प्र बाहू शूर राधसा ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७४०. आ त्वेता नि षीदतेन्द्रमभि प्र गायत ।
सखाय स्तोमवाहसः ॥ १ ॥
७४१. पुरूतमं पुरूणामीशानं वार्याणाम् ।
इन्द्रं सोमे सचा सुते ॥ २ ॥
७४२. स घा नो योग आ भुवत् स राये स पुरन्ध्या ।
गमद् वाजेभिरा स नः ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—शुनःशेपः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७४३. योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे ।
सखाय इन्द्रमूतये ॥ १ ॥
७४४. अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम् ।
यं ते पूर्वं पिता हुवे ॥ २ ॥
७४५. आ घा गमद्यदि श्रवत्सहस्त्रिणीभिरूतिभिः ।
वाजेभिरुप नो हवम् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—नारदः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

७४६. इन्द्र सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीष उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षस्य महाँ हि षः ॥ १ ॥

७४७. स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः ।
सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ॥ २ ॥

७४८. तमु हुवे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् ।
भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

७४९. एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥ १ ॥

७५०. स योजते अरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः ।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥ २ ॥

(१४)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

७५१. प्रत्यु अदर्श्यायत्यू३च्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ॥ १ ॥

७५२. उदुस्त्रियाः सृजते सूर्यः सचा उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।
तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च सं भक्तेन गमेमहि ॥ २ ॥

(१५)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

७५३. इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना ।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥ १ ॥

७५४. युवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदेथां सूनृतावते ।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ॥ २ ॥

(१६)

ऋषिः—अवत्सारः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७५५. अस्य प्रत्नामनु द्युतं शुक्रं दुदुह्रे अह्रयः । पयः सहस्रसामृषिम् ॥ १ ॥

७५६. अयं सूर्यइवोपदृगयं सरांसि धावति । सप्त प्रवत आ दिवम् ॥ २ ॥

७५७. अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि । सोमो देवो न सूर्यः ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—१ शुनःशेपः; २-३ मेध्यातिथिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७५८. एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः । हरिः पवित्रे अर्षति ॥ १ ॥

७५९. एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि । कविर्विप्रेण वावृधे ॥ २ ॥

७६०. दुहानः प्रत्नमित्पयः पवित्रे परि षिच्यसे । क्रन्दं देवाँ अजीजनः ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—१, ३ असितः काश्यपो देवलो वा; २ अमहीयुराङ्गिरसः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७६१. उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रवे । पवमान विदा रयिम् ॥ १ ॥

७६२. उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् । इन्दुं देवा अयासिषुः ॥ २ ॥

७६३. उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे । अभि देवाँ इयक्षते ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—त्रित आप्त्यः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७६४. प्र सोमासो विपश्चितोऽपो नयन्त ऊर्मयः । वनानि महिषाइव ॥ १ ॥

७६५. अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया । वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥ २ ॥

७६६. सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमा अर्षन्तु विष्णवे ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः — भरद्वाजादयः सप्तर्षयः ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — बार्हतः प्रगाथः
(१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः — १ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

७६७. प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ॥ १ ॥

७६८. आ हर्यतो अर्जुनो अत्के अव्यत प्रियः सूनुर्न मर्ज्यः ।
तमीं हिन्वन्त्यपसो यथा रथं नदीष्वा गभस्त्योः ॥ २ ॥

(२१)

ऋषिः — श्यावाश्वः ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

७६९. प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनाम् ।
सुता विदथे अक्रमुः ॥ १ ॥

७७०. आदीं हंसो यथा गणं विश्वस्यावीवशन्मतिम् ।
अत्यो न गोभिरज्यते ॥ २ ॥

७७१. आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥ ३ ॥

(२२)

ऋषिः — १-२ अग्निश्चाक्षुषः; ३ प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥
छन्दः — १-२ उष्णिक्; ३ अनुष्टुप् ॥ स्वरः — १-२ ऋषभः; ३ गान्धारः ॥

७७२. अया पवस्व देवयू रेभन् पवित्रं पर्येषि विश्वतः ।
मधोर्धारा असृक्षत ॥ १ ॥

७७३. पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या ।
अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः ॥ २ ॥

७७४. प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः ।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः ॥ ३ ॥

इति द्वितीयोऽध्यायः, प्रथमप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

द्वितीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः — जमदग्निः ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

७७५. पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः ।
अभि विश्वानि काव्या ॥ १ ॥

७७६. त्वं समुद्रिया अपोऽग्रियो वाच ईरयन् ।
पवस्व विश्वचर्षणे ॥ २ ॥

७७७. तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे ।
तुभ्यं धावन्ति धेनवः ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः — अमहीयुः ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

७७८. पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥ १ ॥

७७९. यस्य ते सख्ये वयं सासह्याम पृतन्यतः ।
तवेन्दो द्युम्न उत्तमे ॥ २ ॥

७८०. या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे ।
रक्षा समस्य नो निदः ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः — कश्यपः ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

७८१. वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः ।
वृषा धर्माणि दध्रिषे ॥ १ ॥

७८२. वृष्णस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनं वृषा सुतः ।
स त्वं वृषन्वृषेदसि ॥ २ ॥

७८३. अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः ।
वि नो राये दुरो वृधि ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७८४. वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे। पवमान स्वर्दृशम् ॥ १ ॥

७८५. यदद्भिः परिषिच्यसे मर्मृज्यमान आयुभिः। द्रोणे सधस्थमश्नुषे ॥ २ ॥

७८६. आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध। इहो ष्विन्दवा गहि ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७८७. पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः। सखित्वमा वृणीमहे ॥ १ ॥

७८८. ये ते पवित्रमूर्मयोऽभिक्षरन्ति धारया। तेभिर्नः सोम मृडय ॥ २ ॥

७८९. स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम्। ईशानः सोम विश्वतः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७९०. अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ १ ॥

७९१. अग्निमग्निं हवीमभिः सदा हवन्त विश्पतिम्। हव्यवाहं पुरुप्रियम् ॥ २ ॥

७९२. अग्ने देवाँ इहा वह जज्ञानो वृक्तबर्हिषे। असि होता न ईड्यः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७९३. मित्रं वयं हवामहे वरुणं सोमपीतये। या जाता पूतदक्षसा ॥ १ ॥

७९४. ऋतेन यावृतावृधावृतस्य ज्योतिषस्पती। ता मित्रावरुणा हुवे ॥ २ ॥

७९५. वरुणः प्राविता भुवन्मित्रो विश्वाभिरूतिभिः। करतां नः सुराधसः ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

७९६. इन्द्रमिद्गाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत ॥ १ ॥

७९७. इन्द्र इद्धर्योः सचा सम्मिश्ल आ वचोयुजा। इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ २ ॥

७९८. इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च। उग्र उग्राभिरूतिभिः ॥ ३ ॥

७९९. इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यं रोहयद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत् ॥ ४ ॥

(९)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८००. इन्द्रे अग्ना नमो बृहत् सुवृक्तिमेरयामहे। धिया धेना अवस्यवः ॥ १ ॥

८०१. ता हि शश्वन्त ईडत इत्था विप्रास ऊतये। सबाधो वाजसातये ॥ २ ॥

८०२. ता वां गीर्भिर्विपन्युवः प्रयस्वन्तो हवामहे। मेधसाता सनिष्यवः ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

८०३. वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः। विश्वा दधान ओजसा ॥ १ ॥

८०४. तं त्वा धर्त्तारमोण्योः३ पवमान स्वर्दृशम्। हिन्वे वाजेषु वाजिनम् ॥ २ ॥

८०५. अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया। युजं वाजेषु चोदय ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—उपमन्युर्वासिष्ठः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

८०६. वृषा शोणो अभिकनिक्रदद् गा नदयन्नेषि पृथिवीमुत द्याम् ।
इन्द्रस्येव वग्नुरा शृण्व आजौ प्रचोदयन्नर्षसि वाचमेमाम् ॥ १ ॥

८०७. रसाय्यः पयसा पिन्वमान ईरयन्नेषि मधुमन्तमंशुम् ।
पवमान सन्तनिमेषि कृण्वन्निन्द्राय सोम परिषिच्यमानः ॥ २ ॥

८०८. एवा पवस्व मदिरो मदायोदग्राभस्य नमयन् वधस्नुम् ।
परि वर्णं भरमाणो रुशन्तं गव्युर्नो अर्ष परि सोम सिक्तः ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—शंयुर्बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥
स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

८०९. त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ॥ १ ॥

८१०. स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया मह स्तवानो अद्रिवः ।
गामश्वं रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्युषे ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—प्रस्कण्वः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

८११. अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥ १ ॥

८१२. शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥ २ ॥

(१४)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

८१३. त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहस इह श्रुध्युप स्वसरमा गहि ॥ १ ॥

८१४. मत्स्वा सुशिप्रिन् हरिवस्तमीमहे त्वया भूषन्ति वेधसः ।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्य सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥ २ ॥

(१५)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८१५. यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा। देवावीरघशंसहा ॥ १ ॥

८१६. जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवेदिवे। गोषातिरश्वसा असि ॥ २ ॥

८१७. सम्मिश्लो अरुषो भुवः सूपस्थाभिर्न धेनुभिः। सीदं च्छ्येनो न योनिमा ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—नहुषो मानवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

८१८. अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥ १ ॥

८१९. समु प्रिया अनूषत गावो मदाय घृष्वयः ।
सोमासः कृण्वते पथः पवमानास इन्दवः ॥ २ ॥

८२०. य ओजिष्ठस्तमा भर पवमान श्रवाय्यम् ।
यः पञ्च चर्षणीरभि रयिं येन वनामहे ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—१-२ सिकतानिवावरी, ३ पृश्नयोऽजाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

८२१. वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः ।
प्राणा सिन्धूनां कलशाँ अचिक्रददिन्द्रस्य हार्दिमाविशन्मनीषिभिः ॥ १ ॥

८२२. मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नृभिर्यतः परि कोशाँ असिष्यदत् ।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरन्निन्द्रस्य वायुं सख्याय वर्धयन् ॥ २ ॥

८२३. अयं पुनान उषसो अरोचयदयं सिन्धुभ्यो अभवदु लोककृत् ।
अयं त्रिः सप्त दुदुहान आशिरं सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—श्रुतकक्षः सुकक्षो वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८२४. एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः ।
एवा ते राध्यं मनः ॥ १ ॥

८२५. एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः ।
अधा चिदिन्द्र नः सचा ॥ २ ॥

८२६. मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते ।
मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—जेता माधुच्छन्दसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

८२७. इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥ १ ॥

८२८. सख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते ।
त्वामभि प्र णोनुमो जेतारमपराजितम् ॥ २ ॥

८२९. पूर्वीरिन्द्रस्य रातयो न वि दस्यन्त्यूतयः ।
यदा वाजस्य गोमत स्तोतृभ्यो मंहते मघम् ॥ ३ ॥

इति तृतीयोऽध्यायः, द्वितीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

द्वितीयप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—जमदग्निः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८३०. एत असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः ।
विश्वान्यभि सौभगा ॥ १ ॥

८३१. विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः ।
त्मना कृण्वन्तो अर्वतः ॥ २ ॥

८३२. कृण्वन्तो वरिवो गवेऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम् ।
इडामस्मभ्यं संयतम् ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८३३. राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि । अन्तरिक्षेण यातवे ॥ १ ॥

८३४. आ नः सोम सहो जुवो रूपं न वर्चसे भर । सुष्वाणो देववीतये ॥ २ ॥

८३५. आ न इन्दो शतग्विनं गवां पोषं स्वश्व्यम् । वहा भगत्तिमूतये ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—कविर्भार्गवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८३६. तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः । चारुं सुकृत्ययेमहे ॥ १ ॥

८३७. संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम् । शतं पुरो रुरुक्षणिम् ॥ २ ॥

८३८. अतस्त्वा रयिरभ्ययद्राजानं सुक्रतो दिवः । सुपर्णो अव्यथी भरत् ॥ ३ ॥

८३९. अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे । अभिष्टिकृद्विचर्षणिः ॥ ४ ॥

८४०. विश्वस्मा इत्स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम् । गोपामृतस्य विर्भरत् ॥ ५ ॥

(४)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८४१. इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः । इन्दो रुचाभि गा इहि ॥ १ ॥

८४२. पुनानो वरिवस्कृध्यूर्जं जनाय गिर्वणः । हरे सृजान आशिरम् ॥ २ ॥

८४३. पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम् । द्युतानो वाजिभिर्हितः ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८४४. अग्निनाग्निः समिध्यते कविर्गृहपतिर्युवा । हव्यवाड् जुह्वास्यः ॥ १ ॥

८४५. यस्त्वामग्ने हविष्पतिर्दूतं देव सपर्यति । तस्य स्म प्राविता भव ॥ २ ॥

८४६. यो अग्निं देववीतये हविष्माँ आविवासति । तस्मै पावक मृडय ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८४७. मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम् । धियं घृताचीं साधन्ता ॥ १ ॥

८४८. ऋतेन मित्रावरुणावृतावृधावृतस्पृशा । क्रतुं बृहन्तमाशाथे ॥ २ ॥

८४९. कवी नो मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया । दक्षं दधाते अपसम् ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—मरुत इन्द्रश्च ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८५०. इन्द्रेण सं हि दृक्षसे संजग्मानो अबिभ्युषा । मन्दू समानवर्चसा ॥ १ ॥

८५१. आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे । दधाना नाम यज्ञियम् ॥ २ ॥

८५२. वीडु चिदारुजत्नुभिर्गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः । अविन्द उस्त्रिया अनु ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८५३. ता हुवे ययोरिदं पप्ने विश्वं पुरा कृतम् । इन्द्राग्नी न मर्धतः ॥ १ ॥

८५४. उग्रा विघनिना मृध इन्द्राग्नी हवामहे । ता नो मृडात ईदृशे ॥ २ ॥

८५५. हथो वृत्राण्यार्या हथो दासानि सत्पती । हथो विश्वा अप द्विषः ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती); ३ द्विपदाविराट् ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २-३ पञ्चमः ॥

८५६. अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् ।
समुद्रस्याधि विष्टपे मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः ॥ १ ॥

८५७. तरत्समुद्रं पवमान ऊर्मिणा राजा देव ऋतं बृहत्।
अर्षा मित्रस्य वरुणस्य धर्मणा प्र हिन्वान ऋतं बृहत्॥ २॥
८५८. नृभिर्येमाणो हर्यतो विचक्षणो राजा देवः समुद्र्यः॥ ३॥

(१०)

ऋषिः—पराशरः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

८५९. तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निर्ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः॥ १॥
८६०. सोमं गावो धेनवो वावशानाः सोमं विप्रा मतिभिः पृच्छमानाः।
सोमः सुत ऋच्यते पूयमानः सोमे अर्कास्त्रिष्टुभः सं नवन्ते॥ २॥
८६१. एवा नः सोम परिषिच्यमान आ पवस्व पूयमानः स्वस्ति।
इन्द्रमा विश बृहता मदेन वर्धया वाचं जनया पुरन्धिम्॥ ३॥

(११)

ऋषिः—पुरुहन्मा॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः॥

८६२. यद् द्याव इन्द्र ते शतंशतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥ १॥
८६३. आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन् विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन् गोमति व्रजे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ॥ २॥

(१२)

ऋषिः—मेध्यातिथिः काण्वः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

८६४. वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥ १॥
८६५. स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥ २॥
८६६. कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन्विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ॥ ३॥

(१३)

ऋषिः—वसिष्ठः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः॥

८६७. तरणिरित्सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्रुवम् ॥ १॥
८६८. न दुष्टुतिर्द्रविणोदेषु शस्यते न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।
सुशक्तिरिन् मघवन् तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि ॥ २॥

(१४)

ऋषिः—त्रितः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

८६९. तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत् ॥ १॥
८७०. अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीर्ऋतस्य मातरः। मर्जयन्तीर्दिवः शिशुम् ॥ २॥
८७१. रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः। आ पवस्व सहस्रिणः ॥ ३॥

(१५)

ऋषिः—ययातिर्नाहुषः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ स्वरः—गान्धारः॥

८७२. सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरं देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥ १॥
८७३. इन्दुरिन्द्राय पवत इति देवासो अब्रुवन् ।
वाचस्पतिर्मखस्यते विश्वस्येशान ओजसः ॥ २॥
८७४. सहस्रधारः पवते समुद्रो वाचमीङ्खयः ।
सोमस्पती रयीणां सखेन्द्रस्य दिवेदिवे ॥ ३॥

(१६)

ऋषिः—पवित्रः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—जगती॥ स्वरः—निषादः॥

८७५. पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तः सं तदाशत ॥ १॥
८७६. तपोष्पवित्रं विततं दिवस्पदेऽर्चन्तो अस्य तन्तवो व्यस्थिरन्।
अवन्त्यस्य पवितारमाशवो दिवः पृष्ठमधि रोहन्ति तेजसा ॥ २॥

८७७. अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा मिमेति भुवनेषु वाजयुः ।
मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमा दधुः ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः ॥

८७८. प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे ।
उपस्तुतासो अग्नये ॥ १ ॥
८७९. आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्भवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥ २ ॥

(१८)

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

८८०. तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृक्षु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥ १ ॥
८८१. येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥ २ ॥
८८२. तदद्या चित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ।
वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—तिरश्ची ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

८८३. श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥ १ ॥
८८४. यस्त इन्द्र नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥ २ ॥
८८५. तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थ्यानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥ ३ ॥

इति चतुर्थोऽध्यायः, द्वितीयप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

तृतीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—अकृष्टा माषाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

८८६. प्र त आश्विनीः पवमान धेनवो दिव्या असृग्रन् पयसा धरीमणि ।
प्रान्तरिक्षात् स्थाविरीस्ते असृक्षत ये त्वा मृजन्त्यृषिषाण वेधसः ॥ १ ॥
८८७. उभयतः पवमानस्य रश्मयो ध्रुवस्य सतः परि यन्ति केतवः ।
यदी पवित्रे अधि मृज्यते हरिः सत्ता नि योनौ कलशेषु सीदति ॥ २ ॥
८८८. विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः प्रभोष्टे सतः परि यन्ति केतवः ।
व्यानशी पवसे सोम धर्मणा पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८८९. पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम् । ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥ १ ॥
८९०. पवमान रसस्तव मदो राजन्नदुच्छुनः । वि वारमव्यमर्षति ॥ २ ॥
८९१. पवमानस्य ते रसो दक्षो वि राजति द्युमान् । ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—मेध्यातिथिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८९२. प्र यद्गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः ।
घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥ १ ॥
८९३. सुवितस्य वनामहेऽति सेतुं दुराय्यम् ।
साह्याम दस्युमव्रतम् ॥ २ ॥
८९४. शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः ।
चरन्ति विद्युतो दिवि ॥ ३ ॥
८९५. आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत् ।
अश्ववत् सोम वीरवत् ॥ ४ ॥

८९६. पवस्व विश्वचर्षण आ मही रोदसी पृण ।
उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ ५ ॥

८९७. परि णः शर्मयन्त्या धारया सोम विश्वतः ।
सरा रसेव विष्टपम् ॥ ६ ॥

(४)

ऋषिः—बृहन्मतिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

८९८. आशुरर्ष बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना ।
यत्रा देवा इति ब्रुवन् ॥ १ ॥

८९९. परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः ।
वृष्टिं दिवः परि स्रव ॥ २ ॥

९००. अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ ।
सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ॥ ३ ॥

९०१. सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा ।
विचक्षाणो विरोचयन् ॥ ४ ॥

९०२. आविवासन् परावतो अथो अर्वावतः सुतः ।
इन्द्राय सिच्यते मधु ॥ ५ ॥

९०३. समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥ ६ ॥

(५)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

९०४. हिन्वन्ति सूरमुस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम् ।
महामिन्दुं महीयुवः ॥ १ ॥

९०५. पवमान रुचारुचा देव देवेभ्यः सुतः ।
विश्वा वसून्या विश ॥ २ ॥

९०६. आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः ।
इषे पवस्व संयतम् ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—सुतम्भर आत्रेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

९०७. जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविरग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे ।
घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा द्युमद्वि भाति भरतेभ्यः शुचिः ॥ १ ॥

९०८. त्वामग्ने अङ्गिरसो गुहा हितमन्वविन्दञ्छिश्रियाणं वनेवने ।
स जायसे मथ्यमानः सहो महत्त्वामाहुः सहसस्पुत्रमङ्गिरः ॥ २ ॥

९०९. यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरोहितमग्निं नरस्त्रिषधस्थे समिन्धते ।
इन्द्रेण देवैः सरथं स बर्हिषि सीदन् नि होता यजथाय सुक्रतुः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—गृत्समदः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९१०. अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा । ममेदिह श्रुतं हवम् ॥ १ ॥

९११. राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे । सहस्रस्थूण आशाते ॥ २ ॥

९१२. ता सम्राजा घृतासुती आदित्या दानुनस्पती । सचेते अनवह्वरम् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९१३. इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः । जघान नवतीर्नव ॥ १ ॥

९१४. इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम् । तद्विदच्छर्यणावति ॥ २ ॥

९१५. अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९१६. इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः । अभ्राद् वृष्टिरिवाजनि ॥ १ ॥

९१७. शृणुतं जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः । ईशाना पिप्यतं धियः ॥ २ ॥

९१८. मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये । मा नो रीरधतं निदे ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—दृढच्युत आगस्त्यः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

९१९. पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे। मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥ १ ॥

९२०. सं देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः। पवमानो अदाभ्यः ॥ २ ॥

९२१. पवमान धिया हितो३ऽभि योनिं कनिक्रदत्। धर्मणा वायुमारुहः ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

९२२. तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवेदिवे ।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँरति ताँ इहि ॥ १ ॥

९२३. तवाहं नक्तमुत सोम ते दिवा दुहानो बभ्र ऊधनि ।
घृणा तपन्तमति सूर्यं परः शकुनाइव पप्तिम ॥ २ ॥

(१२)

ऋषिः—बृहन्मतिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

९२४. पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः ।
शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥ १ ॥

९२५. आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रो वृषा सुतम् ।
ध्रुवे सदसि सीदतु ॥ २ ॥

९२६. नू नो रयिं महामिन्दोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः ।
आ पवस्व सहस्रिणम् ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—विराडनुष्टुप् ॥
स्वरः—गान्धारः ॥

९२७. पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः ।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥ १ ॥

९२८. यस्ते मदो युज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि ।
स त्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥ २ ॥

९२९. बोधा सु मे मघवन् वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम् ।
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—रेभः काश्यपः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अतिजगती; २-३ उपरिष्टाद् बृहती ॥ स्वरः—निषादः ॥

९३०. विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरः सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वे वरे स्थेमन्यामुरीमुतोग्रमोजिष्ठं तरसं तरस्विनम् ॥ १ ॥

९३१. नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरे ।
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ॥ २ ॥

९३२. समु रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।
स्वःपतिर्यदी वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—पुरुहन्मा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

९३३. यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठं यो वृत्रहा गृणे ॥ १ ॥

९३४. इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्त्तरि ।
हस्तेन वज्रः प्रति धायि दर्शतो महान्देवो न सूर्यः ॥ २ ॥

(१६)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९३५. परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः। स्वानैर्याति कविक्रतुः ॥ १ ॥

९३६. स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत्। महान्मही ऋतावृधा ॥ २ ॥

९३७. प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहः। वीत्यर्ष पनिष्टये ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—१ शक्तिः; २ उरुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः
(१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः;
२ पञ्चमः ॥

९३८. त्वं ह्या३ङ्ग दैव्य पवमान जनिमानि द्युमत्तमः। अमृतत्वाय घोषयन् ॥ १ ॥
९३९. येना नवग्वा दध्यङ्ङपोर्णुते येन विप्रास आपिरे ।
देवानां सुम्ने अमृतस्य चारुणो येन श्रवांस्याशत ॥ २ ॥

(१८)

ऋषिः—अग्निश्चाक्षुषः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥
स्वरः—ऋषभः ॥

९४०. सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यं वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥ १ ॥
९४१. धीभिर्मृजन्ति वाजिनं वने क्रीडन्तमत्यविम् ।
अभि त्रिपृष्ठं मतयः समस्वरन् ॥ २ ॥
९४२. असर्जि कलशाँ अभि मीढ्वान्त्सप्तिर्न वाजयुः ।
पुनानो वाचं जनयन्नसिष्यदत् ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—प्रतर्दनो दैवोदासिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥
स्वरः—धैवतः ॥

९४३. सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥ १ ॥
९४४. ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम्।
श्येनो गृध्राणां स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥ २ ॥
९४५. प्रावीविपद्वाच ऊर्मिं न सिन्धुर्गिर स्तोमान् पवमानो मनीषाः।
अन्तः पश्यन् वृजनेमावराण्या तिष्ठति वृषभो गोषु जानन् ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—प्रयोगो भार्गव अग्निर्वा पावको बार्हस्पत्यः; गृहपतियविष्ठौ सहसः सुतौ
तयोर्वान्यतरः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९४६. अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम्। अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥ १ ॥
९४७. अयं यथा न आभुवत् त्वष्टा रूपेव तक्ष्या। अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥ २ ॥
९४८. अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते। आ वाजैरुप नो गमत् ॥ ३ ॥

(२१)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥
स्वरः—गान्धारः ॥

९४९. इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम् ।
शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन् धारा ऋतस्य सादने ॥ १ ॥
९५०. न किष्ट्वद्रथीतरो हरी यदिन्द्र यच्छसे ।
न किष्ट्वानु मज्मना न किः स्वश्व आनशे ॥ २ ॥
९५१. इन्द्राय नूनमर्चतोक्थानि च ब्रवीतन ।
सुता अमत्सुरिन्दवो ज्येष्ठं नमस्यता सहः ॥ ३ ॥

(२२)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

९५२. इन्द्र जुषस्व प्र वहा याहि शूर हरिह ।
पिबा सुतस्य मतिर्न मधोश्चकानश्चारुर्मदाय ॥ १ ॥
९५३. इन्द्र जठरं नव्यं न पृणस्व मधोर्दिवो न ।
अस्य सुतस्य स्वा३र्णोप त्वा मदाः सुवाचो अस्थुः ॥ २ ॥
९५४. इन्द्रस्तुराषाण्मित्रो न जघान वृत्रं यतिर्न ।
बिभेद वलं भृगुर्न ससाहे शत्रून् मदे सोमस्य ॥ ३ ॥

इति पञ्चमोऽध्यायः, तृतीयप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

तृतीयप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—अकृष्टा माषाः, सिकतानिवावरी, पृश्नयोऽजाश्च ऋषिगणाः ॥
देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

९५५. गोवित्पवस्व वसुविद्धिरण्यविद्रेतोधा इन्दो भुवनेष्वर्पितः ।
त्वं सुवीरो असि सोम विश्ववित्तं त्वा नर उप गिरेम आसते ॥ १ ॥
९५६. त्वं नृचक्षा असि सोम विश्वतः पवमान वृषभ ता वि धावसि ।
स नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवद्वयं स्याम भुवनेषु जीवसे ॥ २ ॥
९५७. ईशान इमा भुवनानि ईयसे युजान इन्दो हरितः सुपर्ण्यः ।
तास्ते क्षरन्तु मधुमद् घृतं पयस्तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९५८. पवमानस्य विश्ववित् प्र ते सर्गा असृक्षत । सूर्यस्येव न रश्मयः ॥ १ ॥
९५९. केतुं कृण्वन्दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि । समुद्रः सोम पिन्वसे ॥ २ ॥
९६०. जज्ञानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्मणि । क्रन्दन् देवो न सूर्यः ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९६१. प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः । श्रीणाना अप्सु वृञ्जते ॥ १ ॥
९६२. अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः । पुनाना इन्द्रमाशत ॥ २ ॥
९६३. प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय मादनः । नृभिर्यतो वि नीयते ॥ ३ ॥
९६४. इन्दो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिदीयसे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥ ४ ॥
९६५. त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीधृतिः । सस्निर्यो अनुमाद्यः ॥ ५ ॥
९६६. पवस्व वृत्रहन्तम उक्थेभिरनुमाद्यः । शुचिः पावको अद्भुतः ॥ ६ ॥
९६७. शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतः स मधुमान् । देवावीरघशंसहा ॥ ७ ॥

(४)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९६८. प्र कविर्देववीतयेऽव्या वारेभिरव्यत । साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥ १ ॥
९६९. स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाजं गोमन्तमिन्वति । पवमानः सहस्रिणम् ॥ २ ॥
९७०. परि विश्वानि चेतसा मृज्यसे पवसे मती । स नः सोम श्रवो विदः ॥ ३ ॥
९७१. अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम् । इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ ४ ॥
९७२. त्वं राजेव सुव्रतो गिरः सोमा विवेशिथ । पुनानो वह्ने अद्भुत ॥ ५ ॥
९७३. स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यमानो गभस्त्योः । सोमश्चमूषु सीदति ॥ ६ ॥
९७४. क्रीडुर्मखो न मंहयुः पवित्रं सोम गच्छसि । दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥ ७ ॥

(५)

ऋषिः—अवत्सारः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

९७५. यवंयवं नो अन्धसा पुष्टंपुष्टं परि स्रव । विश्वा च सोम सौभगा ॥ १ ॥
९७६. इन्दो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः । नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥ २ ॥
९७७. उत नो गोविदश्ववित् पवस्व सोमान्धसा । मक्षूतमेभिरहभिः ॥ ३ ॥
९७८. यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य । स पवस्व सहस्रजित् ॥ ४ ॥

(६)

ऋषिः—जमदग्निः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९७९. यास्ते धारा मधुश्चुतोऽसृग्रमिन्द ऊतये । ताभिः पवित्रमासदः ॥ १ ॥
९८०. सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो वाराण्यव्यया । सीदन्नृतस्य योनिमा ॥ २ ॥
९८१. त्वं सोम परि स्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः । वरिवोविद् घृतं पयः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—अरुणो वैतहव्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

९८२. तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतोऽग्नेश्चिकित्र उषसामिवेतयः ।
यदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमासनि ॥ १ ॥

९८३. वातोपजूत इषितो वशाँ अनु तृषु यदन्ना वेविषद्वितिष्ठसे ।
आ ते यतन्ते रथ्यो३ यथा पृथक् शर्धांस्यग्ने अजरस्य धक्षतः ॥ २ ॥
९८४. मेधाकारं विदथस्य प्रसाधनमग्निं होतारं परिभूतरं मतिम् ।
त्वामर्भस्य हविषः समानमित् त्वां महो वृणते नान्यं त्वत् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—उरुचक्रिरात्रेयः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९८५. पुरूरुणा चिद्ध्यस्त्यवो नूनं वां वरुण । मित्र वंसि वां सुमतिम् ॥ १ ॥
९८६. ता वां सम्यगद्रुह्वाणेषमश्याम धाम च । वयं वां मित्रा स्याम ॥ २ ॥
९८७. पातं नो मित्रा पायुभिरुत त्रायेथां सुत्रात्रा । साह्याम दस्यून् तनूभिः ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—कुरुसुतिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९८८. उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वा शिप्रे अवेपयः । सोममिन्द्र चमूसुतम् ॥ १ ॥
९८९. अनु त्वा रोदसी उभे स्पर्धमानमददेताम् । इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥ २ ॥
९९०. वाचमष्टापदीमहं नवस्त्रक्तिमृतावृधम् । इन्द्रात् परि तन्वं ममे ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

९९१. इन्द्राग्नी युवामिमे३ऽभि स्तोमा अनूषत । पिबतं शम्भुवा सुतम् ॥ १ ॥
९९२. या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा । इन्द्राग्नी ताभिरा गतम् ॥ २ ॥
९९३. ताभिरा गच्छतं नरोपेदं सवनं सुतम् । इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९९४. अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत् । सीदन्योनौ वनेष्वा ॥ १ ॥
९९५. अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमा अर्षन्तु विष्णवे ॥ २ ॥
९९६. इषं तोकाय नो दधदस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणम् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

९९७. सोम उ ष्वाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥ १ ॥
९९८. अनूपे गोमान् गोभिरक्षाः सोमो दुग्धाभिरक्षाः ।
समुद्रं न संवरणान्यग्मन् मन्दी मदाय तोशते ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

९९९. यत्सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्यं पार्थिवं वसु । तन्नः पुनान आ भर ॥ १ ॥
१०००. वृषा पुनान आयूंषि स्तनयन्नधि बर्हिषि । हरिः सन्योनिमासदः ॥ २ ॥
१००१. युवं हि स्थः स्वःपती इन्द्रश्च सोम गोपती । ईशाना पिप्यतं धियः ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१००२. इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः ।
तमिन्महत्स्वाजिषूतिमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् ॥ १ ॥
१००३. असि हि वीर सेन्योऽसि भूरि परादादिः ।
असि दभ्रस्य चिद् वृधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरि ते वसु ॥ २ ॥
१००४. यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धनम् ।
युङ्क्ष्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ इन्द्र वसौ दधः ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१००५. स्वादोरित्था विषूवतो मधोः पिबन्ति गौर्यः ।
या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभथा वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥ १ ॥
१००६. ता अस्य पृशनायुवः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
प्रिया इन्द्रस्य धेनवो वज्रं हिन्वन्ति सायकं वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥ २ ॥

१००७. ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः ।
व्रतान्यस्य सश्चिरे पुरूणि पूर्वचित्तये वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—जमदग्निः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

१००८. असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः ।
श्येनो न योनिमासदत् ॥ १ ॥
१००९. शुभ्रमन्धो देववातमप्सु धौतं नृभिः सुतम् ।
स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥ २ ॥
१०१०. आदीमश्वं न हेतारमशूशुभन्नमृताय ।
मधो रसं सधमादे ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—१ ऊर्ध्वसद्मा, २ कृतयशाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती)॥
स्वरः—१ ऋषभः, २ पञ्चमः ॥

१०११. अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुम् ।
वि कोशं मध्यमं युव ॥ १ ॥
१०१२. आ वच्यस्व सुदक्ष चम्वोः सुतो विशां वह्निर्न विश्पतिः ।
वृष्टिं दिवः पवस्व रीतिमपो जिन्वन् गविष्टये धियः ॥ २ ॥

(१८)

ऋषिः—त्रितः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥
स्वरः—ऋषभः ॥

१०१३. प्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम् ।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता ॥ १ ॥
१०१४. उप त्रितस्य पाष्यो३रभक्त यद् गुहा पदम् ।
यज्ञस्य सप्त धामभिरध प्रियम् ॥ २ ॥

१०१५. त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम् ।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—रेभसूनू काश्यपौ ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥
स्वरः—गान्धारः ॥

१०१६. पवस्व वाजसातये पवित्रे धारया सुतः ।
इन्द्राय सोम विष्णवे देवेभ्यो मधुमत्तरः ॥ १ ॥
१०१७. त्वां रिहन्ति धीतयो हरिं पवित्रे अद्रुहः ।
वत्सं जातं न मातरः पवमान विधर्मणि ॥ २ ॥
१०१८. त्वं द्यां च महिव्रत पृथिवीं चाति जभ्रिषे ।
प्रति द्रापिममुञ्चथाः पवमान महित्वना ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—मन्युर्वासिष्ठः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥
स्वरः—धैवतः ॥

१०१९. इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यरातिं वरिवस्कृण्वन् वृजनस्य राजा ॥ १ ॥
१०२०. अध धारया मध्वा पृचानस्तिरो रोम पवते अद्रिदुग्धः ।
इन्दुरिन्द्रस्य सख्यं जुषाणो देवो देवस्य मत्सरो मदाय ॥ २ ॥
१०२१. अभि व्रतानि पवते पुनानो देवो देवान्त्स्वेन रसेन पृञ्चन् ।
इन्दुर्धर्माण्यृतुथा वसानो दश क्षिपो अव्यत सानो अव्ये ॥ ३ ॥

(२१)

ऋषिः—वसुश्रुत आत्रेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥
स्वरः—पञ्चमः ॥

१०२२. आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् ।
यद्ध स्या ते पनीयसी समिद्दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ १ ॥

१०२३. आ ते अग्न ऋचा हविः शुक्रस्य ज्योतिषस्पते ।
सुश्चन्द्र दस्म विश्पते हव्यवाट् तुभ्यं हूयत इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ २॥

१०२४. ओभे सुश्चन्द्र विश्पते दर्वी श्रीणीष आसनि ।
उतो न उत्पुपूर्या उक्थेषु शवसस्पत इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ ३॥

(२२)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१०२५. इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥ १॥

१०२६. त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः ।
विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥ २॥

१०२७. विभ्राजं ज्योतिषा स्वा३रगच्छो रोचनं दिवः ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥ ३॥

(२३)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥
स्वरः—गान्धारः ॥

१०२८. असावि सोम इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गहि ।
आ त्वा पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ १॥

१०२९. आ तिष्ठ वृत्रहन् रथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी ।
अर्वाचीनं सु ते मनो ग्रावा कृणोतु वग्नुना ॥ २॥

१०३०. इन्द्रमिद्धरी वहतोऽप्रतिधृष्टशवसम् ।
ऋषीणां सुष्टुतीरुप यज्ञं च मानुषाणाम् ॥ ३॥

इति षष्ठोऽध्यायः, तृतीयप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः

चतुर्थप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—अकृष्टा माषाः, सिकतानिवावरी, पृश्नयोऽजाश्च ॥ देवता—पवमानः
सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१०३१. ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता विभूवसुः ।
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः ॥ १॥

१०३२. अभिक्रन्दन् कलशं वाज्यर्षति पतिर्दिवः शतधारो विचक्षणः ।
हरिर्मित्रस्य सदनेषु सीदति मर्मृजानोऽविभिः सिन्धुभिर्वृषा ॥ २॥

१०३३. अग्रे सिन्धूनां पवमानो अर्षस्यग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छसि ।
अग्रे वाजस्य भजसे महद् धनं स्वायुधः सोतृभिः सोम सूयसे ॥ ३॥

(२)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०३४. असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया ।
शुक्रासो वीरयाशवः ॥ १॥

१०३५. शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः ।
पवन्ते वारे अव्यये ॥ २॥

१०३६. ते विश्वा दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा ।
पवन्तामान्तरिक्ष्या ॥ ३॥

(३)

ऋषिः—मेधातिथिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०३७. पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या ।
इन्द्रमिन्दो वृषा विश ॥ १॥

१०३८. आ वच्यस्व महि प्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः ।
आ योनिं धर्णसिः सदः ॥ २॥

१०३९. अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः ।
अपो वसिष्ट सुक्रतुः ॥ ३ ॥

१०४०. महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः ।
यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥ ४ ॥

१०४१. समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः ।
सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥ ५ ॥

१०४२. अचिक्रदद् वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः ।
सं सूर्येण दिद्युते ॥ ६ ॥

१०४३. गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः ।
याभिर्मदाय शुम्भसे ॥ ७ ॥

१०४४. तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे ।
तव प्रशस्तये महे ॥ ८ ॥

१०४५. गोषा इन्दो नृषा अस्यश्वसा वाजसा उत ।
आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ॥ ९ ॥

१०४६. अस्मभ्यमिन्दविन्द्रियं मधोः पवस्व धारया ।
पर्जन्यो वृष्टिमाँइव ॥ १० ॥

(४)

ऋषिः—हिरण्यस्तूपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०४७. सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रवः ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ १ ॥

१०४८. सना ज्योतिः सना स्वा३र्विश्वा च सोम सौभगा ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ २ ॥

१०४९. सना दक्षमुत क्रतुमप सोम मृधो जहि ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ३ ॥

१०५०. पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ४ ॥

१०५१. त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ५ ॥

१०५२. तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ६ ॥

१०५३. अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ७ ॥

१०५४. अभ्या३र्षानपच्युतो वाजिन्त्समत्सु सासहिः ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ८ ॥

१०५५. त्वां यज्ञैरवीवृधन् पवमान विधर्मणि ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ९ ॥

१०५६. रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ १० ॥

(५)

ऋषिः—अवत्सारः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०५७. तरत्स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः । तरत्स मन्दी धावति ॥ १ ॥

१०५८. उस्रा वेद वसूनां मर्त्तस्य देव्यवसः । तरत्स मन्दी धावति ॥ २ ॥

१०५९. ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे । तरत्स मन्दी धावति ॥ ३ ॥

१०६०. आ ययोस्त्रिंशतं तना सहस्राणि च दद्महे । तरत्स मन्दी धावति ॥ ४ ॥

(६)

ऋषिः—जमदग्निः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०६१. एते सोमा असृक्षत गृणानाः शवसे महे । मदिन्तमस्य धारया ॥ १ ॥

१०६२. अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि । सनद्वाजः परि स्रव ॥ २ ॥

१०६३. उत न गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परिष्टुभः । गृणानो जमदग्निना ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—कुत्स आङ्गिरसः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—जगती ॥
स्वरः—निषादः ॥

१०६४. इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया ।
भद्रा हि नः प्रमतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ १ ॥

१०६५. भरामेध्मं कृणवामा हवींषि ते चितयन्तः पर्वणापर्वणा वयम् ।
जीवातवे प्रतरां साधया धियोऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ २ ॥

१०६६. शकेम त्वा समिधं साधया धियस्त्वे देवा हविरदन्त्याहुतम् ।
त्वमादित्याँ आ वह तान् ह्यू३श्मस्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—आदित्यः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

१०६७. प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं रिशादसम् ॥ १ ॥

१०६८. राया हिरण्यया मतिरियमवृकाय शवसे । इयं विप्रा मेधसातये ॥ २ ॥

१०६९. ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह । इषं स्वश्च धीमहि ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—त्रिशोकः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

१०७०. भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥ १ ॥

१०७१. यस्य ते विश्वमानुषग्भूरेर्दत्तस्य वेदति ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥ २ ॥

१०७२. यद्वीडाविन्द्र यत् स्थिरे यत् पर्शाने पराभृतम् ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—श्यावाश्वः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०७३. यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ १ ॥

१०७४. तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ २ ॥

१०७५. इदं वां मदिरं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०७६. इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः ।
अर्कस्य योनिमासदम् ॥ १ ॥

१०७७. तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम् ।
सं त्वा मृजन्त्यायवः ॥ २ ॥

१०७८. रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्तु वरुणः कवे ।
पवमानस्य मरुतः ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

१०७९. मृज्यमानः सुहस्त्या समुद्रे वाचमिन्वसि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि ॥ १ ॥

१०८०. पुनानो वारे पवमानो अव्यये वृषो अचिक्रदद्वने ।
देवानां सोम पवमान निष्कृतं गोभिरञ्जानो अर्षसि ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०८१. एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् । समादित्येभिरख्यत ॥ १ ॥

१०८२. समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ। सं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ २ ॥

१०८३. स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान्। चारुर्मित्रे वरुणे च ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
स्वरः—षड्जः ॥

१०८४. रेवतीर्नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः ।
क्षुमन्तो याभिर्मदेम ॥ १ ॥

१०८५. आ घ त्वावान् त्मना युक्त स्तोतृभ्यो धृष्णवीयानः ।
ऋणोरक्षं न चक्र्योः ॥ २ ॥

१०८६. आ यद् दुवः शतक्रतवा कामं जरितॄणाम् ।
ऋणोरक्षं न शचीभिः ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०८७. सुरूपकृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे ।
जुहूमसि द्यविद्यवि ॥ १ ॥

१०८८. उप नः सवना गहि सोमस्य सोमपाः पिब ।
गोदा इद्रेवतो मदः ॥ २ ॥

१०८९. अथा ते अन्तमानां विद्याम सुमतीनाम् ।
मा नो अति ख्य आ गहि ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—१-३ मान्धाता यौवनाश्वः, २ उत्तरार्धस्य गोधाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥
छन्दः—महापङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१०९०. उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषाइव ।
महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनाम् ।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥ १ ॥

१०९१. दीर्घं ह्यङ्कुशं यथा शक्तिं बिभर्षि मन्तुमः ।
पूर्वेण मघवन् पदा वयामजो यथा यमः ।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥ २ ॥

१०९२. अव स्म दुर्हणायतो मर्त्तस्य तनुहि स्थिरम् ।
अधस्पदं तमीं कृधि यो अस्माँ अभिदासति ।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१०९३. परि स्वानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षरत् ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ १ ॥

१०९४. त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ २ ॥

१०९५. त्वे विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—१ ऋणञ्चयः, २ शक्तिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—१ यवमध्या गायत्री,
२ सतोबृहती ॥ स्वरः—१ षड्जः, २ पञ्चमः ॥

१०९६. स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इडानाम् ।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥ १ ॥

१०९७. यस्य त इन्द्रः पिबाद्यस्य मरुतो यस्य वार्यमणा भगः ।
आ येन मित्रावरुणा करामह एन्द्रमवसे महे ॥ २ ॥

(१९)

ऋषिः—पर्वतनारदौ ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१०९८. तं वः सखायो मदाय पुनानमभि गायत ।
शिशुं न हव्यैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥ १ ॥

१०९९. सं वत्सइव मातृभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते ।
देवावीर्मदो मतिभिः परिष्कृतः ॥ २ ॥

११००. अयं दक्षाय साधनोऽयं शर्धाय वीतये ।
अयं देवेभ्यो मधुमत्तरः सुतः ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—मनुः सांवरणः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

११०१. सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।
मित्राः स्वाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ॥ १ ॥

११०२. ते पूतासो विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः ।
सूरासो न दर्शतासो जिगत्नवो ध्रुवा घृते ॥ २ ॥

११०३. सुष्वाणासो व्यद्रिभिश्चिताना गोरधि त्वचि ।
इषमस्मभ्यमभितः समस्वरन् वसुविदः ॥ ३ ॥

(२१)

ऋषिः—कुत्स आङ्गिरसः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

११०४. अया पवा पवस्वैना वसूनि मांश्चत्व इन्दो सरसि प्र धन्व ।
ब्रध्नश्चिद्यस्य वातो न जूतिं पुरुमेधाश्चित्तकवे नरं धात् ॥ १ ॥

११०५. उत न एना पवया पवस्वाधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे ।
षष्टिं सहस्रा नैगुतो वसूनि वृक्षं न पक्वं धूनवद्रणाय ॥ २ ॥

११०६. महीमे अस्य वृष नाम शूषे मांश्चत्वे वा पृशने वा वधत्रे ।
अस्वापयन् निगुतः स्नेहयच्चापामित्राँ अपाचितो अचेतः ॥ ३ ॥

(२२)

ऋषिः—बन्धुः सुबन्धुः श्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुश्च गौपायना लौपायना वा ॥
देवता—अग्निः ॥ छन्दः—द्विपदा विराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

११०७. अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भुवो वरूथ्यः ॥ १ ॥

११०८. वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमो रयिं दाः ॥ २ ॥

११०९. तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥ ३ ॥

(२३)

ऋषिः—भुवन आप्त्यः साधनो वा भौवनः ॥ देवता—विश्वेदेवाः ॥
छन्दः—द्विपदा त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१११०. इमा नु कं भुवना सीषधेमेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ॥ १ ॥

११११. यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चादित्यैरिन्द्रः सह सीषधातु ॥ २ ॥

१११२. आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् ॥ ३ ॥

(२४)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—द्विपदा विराट् ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१११३. प्र व इन्द्राय वृत्रहन्तमाय विप्राय गाथं गायत यं जुजोषते ॥ १ ॥

१११४. अर्चन्त्यर्कं मरुतः स्वर्का आ स्तोभति श्रुतो युवा स इन्द्रः ॥ २ ॥

१११५. उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः पुष्येम रयिं धीमहे त इन्द्र ॥ ३ ॥

इति सप्तमोऽध्यायः, चतुर्थप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथाष्टमोऽध्यायः

चतुर्थप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः — १-३ वृषगणो वसिष्ठः; ४-१२ असितः काश्यपो देवलो वा ॥
देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — १-३ त्रिष्टुप्; ४-१२ गायत्री ॥
स्वरः — १-३ धैवतः; ४-१२ षड्जः ॥

१११६. प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति ।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन् ॥ १ ॥
१११७. प्र हंसासस्तृपला वग्नुमच्छामादस्तं वृषगणा अयासुः ।
अङ्गोषिणं पवमानं सखायो दुर्मर्षं वाणं प्र वदन्ति साकम् ॥ २ ॥
१११८. स योजत उरुगायस्य जूतिं वृथा क्रीडन्तं मिमते न गावः ।
परीणसं कृणुते तिग्मशृङ्गो दिवा हरिर्ददृशे नक्तमृज्रः ॥ ३ ॥
१११९. प्र स्वानासो रथाइवार्वन्तो न श्रवस्यवः । सोमासो राये अक्रमुः ॥ ४ ॥
११२०. हिन्वानासो रथाइव दधन्विरे गभस्त्योः । भरासः कारिणामिव ॥ ५ ॥
११२१. राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते ।
यज्ञो न सप्त धातृभिः ॥ ६ ॥
११२२. परि स्वानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा । मधो अर्षन्ति धारया ॥ ७ ॥
११२३. आपानासो विवस्वतो जिन्वन्त उषसो भगम् ।
सूरा अण्वं वि तन्वते ॥ ८ ॥
११२४. अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः । वृष्णो हरसः आयवः ॥ ९ ॥
११२५. समीचीनास आशत होतारः सप्तजानयः । पदमेकस्य पिप्रतः ॥ १० ॥
११२६. नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुषा सूर्यं दृशे । कवेरपत्यमा दुहे ॥ ११ ॥
११२७. अभि प्रियं दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम् । सूरः पश्यति चक्षसा ॥ १२ ॥

(२)

ऋषिः — १-९ असितः काश्यपो देवलो वा; १०-१२ भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो वा ॥ देवता — पवमानः सोमः ॥ छन्दः — गायत्री ॥ स्वरः — षड्जः ॥

११२८. असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः । विदाना अस्य योजना ॥ १ ॥
११२९. प्र धारा मधो अग्रियो महीरपो वि गाहते । हविर्हविःषु वन्द्यः ॥ २ ॥
११३०. प्र युजा वाचो अग्रियो वृषो अचिक्रदद्वने । सद्माभि सत्यो अध्वरः ॥ ३ ॥
११३१. परि यत्काव्या कविर्नृम्णा पुनानो अर्षति । स्वर्वाजी सिषासति ॥ ४ ॥
११३२. पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति । यदीमृण्वन्ति वेधसः ॥ ५ ॥
११३३. अव्या वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति । रेभो वनुष्यते मती ॥ ६ ॥
११३४. स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति । रणा यो अस्य धर्मणा ॥ ७ ॥
११३५. आ मित्रे वरुणे भगे मधोः पवन्त ऊर्मयः ।
विदाना अस्य शक्मभिः ॥ ८ ॥
११३६. अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये ।
श्रवो वसूनि सञ्जितम् ॥ ९ ॥
११३७. आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥ १० ॥
११३८. आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषिणम् । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥ ११ ॥
११३९. आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥ १२ ॥

(३)

ऋषिः — भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता — वैश्वानरः ॥ छन्दः — त्रिष्टुप् ॥ स्वरः — धैवतः ॥

११४०. मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानमासन्नः पात्रं जनयन्त देवाः ॥ १ ॥
११४१. त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभि सं नवन्ते ।
तव क्रतुभिरमृतत्वमायन् वैश्वानर यत्पित्रोरदीदेः ॥ २ ॥
११४२. नाभिं यज्ञानां सदनं रयीणां महामाहावमभि सं नवन्त ।
वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—यजत आत्रेयः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११४३. प्र वो मित्राय गायत वरुणाय विपा गिरा । महिक्षत्रावृतं बृहत् ॥ १ ॥

११४४. सम्राजा या घृतयोनी मित्रश्चोभा वरुणश्च । देवा देवेषु प्रशस्ता ॥ २ ॥

११४५. ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य । महि वां क्षत्रं देवेषु ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११४६. इन्द्रा याहि चित्रभानो सुता इमे त्वायवः । अण्वीभिस्तना पूतासः ॥ १ ॥

११४७. इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः । उप ब्रह्माणि वाघतः ॥ २ ॥

११४८. इन्द्रा याहि तूतुजान उप ब्रह्माणि हरिवः । सुते दधिष्व नश्चनः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११४९. तमीडिष्व यो अर्चिषा वना विश्वा परिष्वजत् ।
कृष्णा कृणोति जिह्वया ॥ १ ॥

११५०. य इद्ध आविवासति सुम्नमिन्द्रस्य मर्त्यः ।
द्युम्नाय सुतरा अपः ॥ २ ॥

११५१. ता नो वाजवतीरिष आशून् पिपृतमर्वतः ।
एन्द्रमग्निं च वोढवे ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—सिकतानिवावरी ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

११५२. प्रो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम् ।
मर्यइव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयामना पथा ॥ १ ॥

११५३. प्र वो धियो मन्द्रयुवो विपन्युवः पनस्युवः संवरणेष्वक्रमुः ।
हरिं क्रीडन्तमभ्यनूषत स्तुभोऽभि धेनवः पयसेदशिश्रयुः ॥ २ ॥

११५४. आ नः सोम संयतं पिप्युषीमिषमिन्दो पवस्व पवमान ऊर्मिणा ।
या नो दोहते त्रिरहन्नसश्चुषी क्षुमद्वाजवन्मधुमत्सुवीर्यम् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—पुरुहन्मा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

११५५. न किष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्णुमोजसा ॥ १ ॥

११५६. अषाढमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामीरनोनवुः ॥ २ ॥

(९)

ऋषिः—पर्वतनारदौ शिखण्डिन्यावप्सरसौ काश्यपौ वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

११५७. सखाय आ नि षीदत पुनानाय प्र गायत ।
शिशुं न यज्ञैः परि भूषत श्रिये ॥ १ ॥

११५८. समी वत्सं न मातृभिः सृजता गयसाधनम् ।
देवाव्यां३ मदमभि द्विशवसम् ॥ २ ॥

११५९. पुनाता दक्षसाधनं यथा शर्धाय वीतये ।
यथा मित्राय वरुणाय शन्तमम् ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—अग्नयो धिष्ण्या ऐश्वराः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—द्विपदा विराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

११६०. प्र वाज्यक्षाः सहस्रधारस्तिरः पवित्रं वि वारमव्यम् ॥ १ ॥

११६१. स वाज्यक्षाः सहस्ररेता अद्भिर्मृजानो गोभिः श्रीणानः ॥ २ ॥

११६२. प्र सोम याहीन्द्रस्य कुक्षा नृभिर्येमानो अद्रिभिः सुतः ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११६३. ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे । ये वादः शर्यणावति ॥ १ ॥

११६४. य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम् । ये वा जनेषु पञ्चसु ॥ २ ॥

११६५. ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम् । स्वाना देवास इन्दवः ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—वत्सः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११६६. आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात् ।
अग्ने त्वां कामये गिरा ॥ १ ॥

११६७. पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि दिशो विश्वा अनु प्रभुः ।
समत्सु त्वा हवामहे ॥ २ ॥

११६८. समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे ।
वाजेषु चित्रराधसम् ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१-२ ककुबुष्णिक्, ३ पुरउष्णिक् ॥
स्वरः—ऋषभः ॥

११६९. त्वं न इन्द्रा भर ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे ।
आ वीरं पृतनासहम् ॥ १ ॥

११७०. त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अथा ते सुम्नमीमहे ॥ २ ॥

११७१. त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे सहस्कृत ।
स नो रास्व सुवीर्यम् ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—अत्रिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

११७२. यदिन्द्र चित्र म इह नास्ति त्वादातमद्रिवः ।
राधस्तन्नो विदद्वस उभयाहस्त्या भर ॥ १ ॥

११७३. यन्मन्यसे वरेण्यमिन्द्र द्युक्षं तदा भर ।
विद्याम तस्य ते वयमकूपारस्य दावनः ॥ २ ॥

११७४. यत्ते दिक्षु प्रराध्यं मनो अस्ति श्रुतं बृहत् ।
तेन दृढा चिदद्रिव आ वाजं दर्षि सातये ॥ ३ ॥

इत्यष्टमोऽध्यायः, चतुर्थप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ नवमोऽध्यायः

पञ्चमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—प्रतर्दनो दैवोदासिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

११७५. शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति विप्रं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येन कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥ १ ॥

११७६. ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्रनीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ॥ २ ॥

११७७. चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११७८. एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् ।
वर्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥ १ ॥

११७९. पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना ।
ते नो धत्त सुवीर्यम् ॥ २ ॥

११८०. इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय ।
देवानां योनिमासदम् ॥ ३ ॥

११८१. मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः ।
अनु विप्रा अमादिषुः ॥ ४ ॥

११८२. देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः ।
सं गोभिर्वासयामसि ॥ ५ ॥

११८३. पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः ।
परि गव्यान्यव्यत ॥ ६ ॥

११८४. मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अप द्विषः ।
इन्दो सखायमा विश ॥ ७ ॥

११८५. नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् ।
भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥ ८ ॥

११८६. वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि ।
सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥ ९ ॥

(३)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११८७. सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः । वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ १ ॥
११८८. पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत । सुष्वाणं देववीतये ॥ २ ॥
११८९. पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः । गृणाना देववीतये ॥ ३ ॥
११९०. उत नो वाजसातये पवस्व बृहतीरिषः । द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ॥ ४ ॥
११९१. अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये । वि वारमव्यमाशवः ॥ ५ ॥
११९२. ते नः सहस्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम् । स्वाना देवास इन्दवः ॥ ६ ॥
११९३. वाश्रा अर्षन्तीन्दवोऽभि वत्सं न मातरः । दधन्विरे गभस्त्योः ॥ ७ ॥
११९४. जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमानः कनिक्रदत् । विश्वा अप द्विषो जहि ॥ ८ ॥
११९५. अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः । योनावृतस्य सीदत ॥ ९ ॥

(४)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

११९६. सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य धारया । इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥ १ ॥
११९७. अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न धेनवः । इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥ २ ॥
११९८. मदच्युत्क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित् । सोमो गौरी अधि श्रितः ॥ ३ ॥
११९९. दिवो नाभा विचक्षणोऽव्यो वारे महीयते । सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥ ४ ॥

१२००. यः सोमः कलशेष्वा अन्तः पवित्र आहितः । तमिन्दुः परि षस्वजे ॥ ५ ॥
१२०१. प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि । जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ॥ ६ ॥
१२०२. नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धेनामन्तः सबर्दुघाम् । हिन्वानो मानुषा युजा ॥ ७ ॥
१२०३. आ पवमान धारय रयिं सहस्रवर्चसम् । अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥ ८ ॥
१२०४. अभि प्रिया दिवः कविर्विप्रः स धारया सुतः । सोमो हिन्वे परावति ॥ ९ ॥

(५)

ऋषिः—उचथ्यः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२०५. उत्ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः । वाणस्य चोदया पविम् ॥ १ ॥
१२०६. प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः । यदव्य ऐषि सानवि ॥ २ ॥
१२०७. अव्या वारैः परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । पवमानं मधुश्चुतम् ॥ ३ ॥
१२०८. आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ॥ ४ ॥
१२०९. स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः । एन्द्रस्य जठरं विश ॥ ५ ॥

(६)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२१०. अया वीती परि स्रव यस्त इन्दो मदेष्वा । अवाहन्नवतीर्नव ॥ १ ॥
१२११. पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शंबरम् । अध त्यं तुर्वशं यदुम् ॥ २ ॥
१२१२. परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् । क्षरा सहस्रिणीरिषः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२१३. अपघ्नन् पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः । गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ १ ॥
१२१४. महो नो राय आ भर पवमान जही मृधः । रास्वेन्दो वीरवद्यशः ॥ २ ॥
१२१५. न त्वा शतं च न ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् । यत्पुनानो मखस्यसे ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—निध्रुविः काश्यपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२१६. अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः । हिन्वानो मानुषीरपः ॥ १ ॥

१२१७. अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि। अन्तरिक्षेण यातवे॥ २॥
१२१८. उत त्या हरितो रथे सूरो अयुक्त यातवे। इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन्॥ ३॥

(९)

ऋषिः—वसिष्ठः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

१२१९. अग्निं वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम् ।
यो मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥ १॥
१२२०. प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन् यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति॥ २॥
१२२१. उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोऽग्ने चरन्त्यजरा इधानाः ।
अच्छा द्यामरुषो धूम एषि सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान् ॥ ३॥

(१०)

ऋषिः—सुकक्षः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१२२२. तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत्॥ १॥
१२२३. इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः॥ २॥
१२२४. गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः। ववक्ष उग्रो अस्तृतः॥ ३॥

(११)

ऋषिः—उचथ्यः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१२२५. अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ नय। पुनाहीन्द्राय पातवे॥ १॥
१२२६. तव त्य इन्दो अन्धसो देवा मधोर्व्याशत। पवमानस्य मरुतः॥ २॥
१२२७. दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे। सुनोता मधुमत्तमम्॥ ३॥

(१२)

ऋषिः—कविः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—जगती॥ स्वरः—निषादः॥

१२२८. धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुषे नदीष्वा॥ १॥
१२२९. शूरो न धत्त आयुधा गभस्त्योः स्वा३ः सिषासन् रथिरो गविष्टिषु।
इन्द्रस्य शुष्ममीरयन्नपस्युभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते मनीषिभिः॥ २॥

१२३०. इन्द्रस्य सोम पवमान ऊर्मिणा तविष्यमाणो जठरेष्वा विश।
प्र नः पिन्व विद्युदभ्रेव रोदसी धिया नो वाजाँ उप माहि शश्वतः॥ ३॥

(१३)

ऋषिः—देवातिथिः काण्वः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः॥

१२३१. यदिन्द्र प्रागपागु दङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥ १॥
१२३२. यद्वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।
कण्वासस्त्वा स्तोमेभिर्ब्रह्मवाहस इन्द्रा यच्छन्त्या गहि ॥ २॥

(१४)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः॥

१२३३. उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवान्त्सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥ १॥
१२३४. तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसा धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥ २॥

(१५)

ऋषिः—निध्रुविः काश्यपः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१२३५. पवस्व देव आयुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः। वायुमा रोह धर्मणा॥ १॥
१२३६. पवमान नि तोशसे रयिं सोम श्रवाय्यम्। इन्दो समुद्रमा विश॥ २॥
१२३७. अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित्सोम मत्सरः। नुदस्वादेवयुं जनम्॥ ३॥

(१६)

ऋषिः—अम्बरीषः, ऋजिश्वा च॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ स्वरः—गान्धारः॥

१२३८. अभी नो वाजसातमं रयिमर्ष शतस्पृहम् ।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभासहम् ॥ १॥

१२३९. वयं ते अस्य राधसो वसोर्वसो पुरुस्पृहः ।
नि नेदिष्ठतमा इषः स्याम सुम्ने ते अध्रिगो ॥ २ ॥

१२४०. परि स्य स्वानो अक्षरदिन्दुरव्ये मदच्युतः ।
धारा य ऊर्ध्वो अध्वरे भ्राजा न याति गव्ययुः ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—अग्नयो धिष्ण्या ऐश्वराः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—द्विपदा विराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१२४१. पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥ १ ॥
१२४२. शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम दिवे पृथिव्यै शं च प्रजाभ्यः ॥ २ ॥
१२४३. दिवो धर्तासि शुक्रः पीयूषः सत्ये विधर्मन् वाजी पवस्व ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—उशनाः काव्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२४४. प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्ने रथं न वेद्यम् ॥ १ ॥
१२४५. कविमिव प्रशंस्यं यं देवास इति द्विता। नि मर्त्येष्वादधुः ॥ २ ॥
१२४६. त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄः पाहि शृणुही गिरः। रक्षा तोकमुत त्मना ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१२४७. एन्द्र नो गधि प्रिय सत्राजिदगोह्य। गिरिर्न विश्वतः पृथुः पतिर्दिवः ॥ १ ॥
१२४८. अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी। इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ॥ २ ॥
१२४९. त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि। हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—जेता माधुच्छन्दसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१२५०. पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत ।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥ १ ॥

१२५१. त्वं वलस्य गोमतोऽपावरद्रिवो बिलम् ।
त्वां देवा अबिभ्युषस्तुज्यमानास आविषुः ॥ २ ॥

१२५२. इन्द्रमीशानमोजसाभि स्तोमैरनूषत ।
सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूयसीः ॥ ३ ॥

इति नवमोऽध्यायः, पञ्चमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ दशमोऽध्यायः

पञ्चमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—पराशरः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१२५३. अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मन् जनयन् प्रजा भुवनस्य गोपाः ।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः ॥ १ ॥

१२५४. मत्सि वायुमिष्टये राधसे नो मत्सि मित्रावरुणा पूयमानः ।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान् मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम ॥ २ ॥

१२५५. महत्तत्सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—शुनःशेपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२५६. एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयते। अभि द्रोणान्यासदम् ॥ १ ॥
१२५७. एष विप्रैरभिष्टुतोऽपो देवो वि गाहते। दधद्रत्नानि दाशुषे ॥ २ ॥
१२५८. एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः। पवमानः सिषासति ॥ ३ ॥
१२५९. एष देवो रथर्यति पवमानो दिशस्यति। आविष्कृणोति वग्वनुम् ॥ ४ ॥
१२६०. एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः। हरिर्वाजाय मृज्यते ॥ ५ ॥
१२६१. एष देवो विपा कृतोऽति ह्वरांसि धावति। पवमानो अदाभ्यः ॥ ६ ॥
१२६२. एष दिवं वि धावति तिरो रजांसि धारया। पवमानः कनिक्रदत् ॥ ७ ॥
१२६३. एष दिवं व्यासरत्तिरो रजांस्यस्तृतः। पवमानः स्वध्वरः ॥ ८ ॥
१२६४. एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः। हरिः पवित्रे अर्षति ॥ ९ ॥
१२६५. एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः। धारया पवते सुतः ॥ १० ॥

(३)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥

छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२६६. एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः। गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ १ ॥

१२६७. एष पुरू धियायते बृहते देवतातये। यत्रामृतास आशत ॥ २ ॥

१२६८. एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः प्रचक्राणं महीरिषः ॥ ३ ॥

१२६९. एष हितो वि नीयतेऽन्तः शुन्ध्यावता पथा। यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः ॥ ४ ॥

१२७०. एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः। पतिः सिन्धूनां भवन् ॥ ५ ॥

१२७१. एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो३ वृषा। नृम्णा दधान ओजसा ॥ ६ ॥

१२७२. एष वसूनि पिब्दनः परुषा ययिवाँ अति। अव शादेषु गच्छति ॥ ७ ॥

१२७३. एतमु त्यं दश क्षिपो हरिं हिन्वन्ति यातवे। स्वायुधं मदिन्तमम् ॥ ८ ॥

(४)

ऋषिः—राहूगणः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२७४. एष उ स्य वृषा रथोऽव्या वारेभिरव्यत। गच्छन्वाजं सहस्रिणम् ॥ १ ॥

१२७५. एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥ २ ॥

१२७६. एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति। गच्छं जारो न योषितम् ॥ ३ ॥

१२७७. एष स्य मद्यो रसोऽव चष्टे दिवः शिशुः। य इन्दुर्वारमाविशत् ॥ ४ ॥

१२७८. एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः। क्रन्दन्योनिमभि प्रियम् ॥ ५ ॥

१२७९. एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः। याभिर्मदाय शुम्भते ॥ ६ ॥

(५)

ऋषिः—प्रियमेधः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२८०. एष वाजी हितो नृभिर्विश्वविन्मनसस्पतिः। अव्यं वारं वि धावति ॥ १ ॥

१२८१. एष पवित्रे अक्षरत् सोमो देवेभ्यः सुतः। विश्वा धामान्याविशन् ॥ २ ॥

१२८२. एष देवः शुभायतेऽधि योनावमर्त्यः। वृत्रहा देववीतमः ॥ ३ ॥

१२८३. एष वृषा कनिक्रदद्दशभिर्जामिभिर्यतः। अभि द्रोणानि धावति ॥ ४ ॥

१२८४. एष सूर्यमरोचयत् पवमानो अधि द्यवि। पवित्रे मत्सरो मदः ॥ ५ ॥

१२८५. एष सूर्येण हासते संवसानो विवस्वता। पतिर्वाचो अदाभ्यः ॥ ६ ॥

(६)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२८६. एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते। पुनानो घ्नन्नप द्विषः ॥ १ ॥

१२८७. एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित् परि षिच्यते। पवित्रे दक्षसाधनः ॥ २ ॥

१२८८. एष नृभिर्वि नीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः। सोमो वनेषु विश्ववित् ॥ ३ ॥

१२८९. एष गव्युरचिक्रदत् पवमानो हिरण्ययुः। इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥ ४ ॥

१२९०. एष शुष्म्यसिष्यददन्तरिक्षे वृषा हरिः। पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥ ५ ॥

१२९१. एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति। देवावीरघशंसहा ॥ ६ ॥

(७)

ऋषिः—राहूगणः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१२९२. स सुतः पीतये वृषा सोमः पवित्रे अर्षति। विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ॥ १ ॥

१२९३. स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः। अभि योनिं कनिक्रदत् ॥ २ ॥

१२९४. स वाजी रोचनं दिवः पवमानो वि धावति। रक्षोहा वारमव्ययम् ॥ ३ ॥

१२९५. स त्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत्। जामिभिः सूर्यं सह ॥ ४ ॥

१२९६. स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविददाभ्यः। सोमो वाजमिवासरत् ॥ ५ ॥

१२९७. स देवः कविनेषितो३ऽभि द्रोणानि धावति। इन्दुरिन्द्राय मंहयन् ॥ ६ ॥

(८)

ऋषिः—पवित्रो वसिष्ठो वोभौ वा ॥ देवता—पावमान्यध्येतृस्तुतिः ॥

छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१२९८. यः पावमानी रध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥ १ ॥

१२९९. पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥ २ ॥

१३००. पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः ।
ऋषिभिः संभृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् ॥ ३ ॥

१३०१. पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम् ।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः ॥ ४ ॥

१३०२. येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा ।
तेन सहस्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः ॥ ५ ॥

१३०३. पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम् ।
पुण्याँश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च गच्छति ॥ ६ ॥

(९)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१३०४. अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे ।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥ १ ॥

१३०५. स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः ।
स नो रक्षिषद् दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोनः ॥ २ ॥

१३०६. त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः ।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—वत्सः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३०७. महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ॥ १ ॥

१३०८. कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम् । जामि ब्रुवत आयुधा ॥ २ ॥

१३०९. प्रजामृतस्य पिप्रतः प्र यद्भरन्त वह्नयः । विप्रा ऋतस्य वाहसा ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—शतं वैखानसाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३१०. पवमानस्य जिघ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत । जीरा अजिरशोचिषः ॥ १ ॥

१३११. पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः । हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः ॥ २ ॥

१३१२. पवमान व्यश्नुहि रश्मिभिर्वाजसातमः । दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—१, २ बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती); ३ द्विपदाविराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २, ३ पञ्चमः ॥

१३१३. परीतो षिञ्चता सुतं सोमो य उत्तमं हविः ।
दधन्वाँ यो नर्यो अप्स्वा३ऽन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥ १ ॥

१३१४. नूनं पुनानोऽविभिः परि स्रवादब्धः सुरभिन्तरः ।
सुते चित्वाप्सु मदामो अन्धसा श्रीणन्तो गोभिरुत्तरम् ॥ २ ॥

१३१५. परि स्वानश्चक्षसे देवमादनः क्रतुरिन्दुर्विचक्षणः ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वसुर्भारद्वाजः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१३१६. असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारमत्येष्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदत् ॥ १ ॥

१३१७. पर्जन्यः पिता महिषस्य पर्णिनो नाभा पृथिव्या गिरिषु क्षयं दधे ।
स्वसार आपो अभि गा उदासरन्त्सं ग्रावभिर्वसते वीते अध्वरे ॥ २ ॥

१३१८. कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन् दुरिता सोम नो मृड घृता वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

१३१९. श्रायन्तइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जातो जनिमान्योजसा प्रति भागं न दीधिमः ॥ १ ॥

१३२०. अलर्षिरातिं वसुदामुप स्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
यो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥ २ ॥

(१५)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

१३२१. यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतये वि द्विषो वि मृधो जहि ॥ १ ॥
१३२२. त्वं हि राधसस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधर्ता ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥ २ ॥

(१६)

ऋषिः—भरद्वाजः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३२३. त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे। पवस्व मंहयद्रयिः ॥ १ ॥
१३२४. त्वं सुतो मदिन्तमो दधन्वान्मत्सरिन्तमः। इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥ २ ॥
१३२५. त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत्। द्युमन्तं शुष्ममा भर ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—मनुराप्सवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१३२६. पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥ १ ॥
१३२७. तव द्रप्सा उदप्रुत इन्द्रं मदाय वावृधुः ।
त्वां देवासो अमृताय कं पपुः ॥ २ ॥
१३२८. आ नः सुतास इन्दवः पुनाना धावता रयिम् ।
वृष्टिद्यावो रीत्यापः स्वर्विदः ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—अम्बरीष ऋजिश्वा च ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१३२९. परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वा इत्परि मदेन सह गच्छति ॥ १ ॥
१३३०. द्विर्यं पञ्च स्वयशसं सखायो अद्रिसंहतम् ।
प्रियमिन्द्रस्य काम्यं प्रस्नापयन्त ऊर्मयः ॥ २ ॥

१३३१. इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते वीराय सदनासदे ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—अग्नयो धिष्ण्या ऐश्वराः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—द्विपदा विराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१३३२. पवस्व सोम महे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥ १ ॥
१३३३. प्र ते सोतारो रसं मदाय पुनन्ति सोमं महे द्युम्नाय ॥ २ ॥
१३३४. शिशुं जज्ञानं हरिं मृजन्ति पवित्रे सोमं देवेभ्य इन्दुम् ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—अमहीयुः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३३५. उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम्। इन्दुं देवा अयासिषुः ॥ १ ॥
१३३६. तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव। य इन्द्रस्य हृदं सनिः ॥ २ ॥
१३३७. अर्षा नः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम्। वर्धा समुद्रमुक्थ्य ॥ ३ ॥

(२१)

ऋषिः—त्रिशोकः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३३८. आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥ १ ॥
१३३९. बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्त्रं पृथुः स्वरुः ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥ २ ॥
१३४०. अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥ ३ ॥

(२२)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१३४१. य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे ।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ॥ १ ॥

१३४२. यश्चिद्धि त्वा बहुभ्य आ सुतावाँ आविवासति ।
उग्रं तत् पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग ॥ २ ॥

१३४३. कदा मर्तमराधसं पदा क्षुम्पमिव स्फुरत् ।
कदा नः शुश्रवद् गिर इन्द्रो अङ्ग ॥ ३ ॥

(२३)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१३४४. गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥ १ ॥

१३४५. यत्सानोः सान्वारुहो भूर्यस्पष्ट कर्त्वम् ।
तदिन्द्रो अर्थं चेतति यूथेन वृष्णिरेजति ॥ २ ॥

१३४६. युङ्क्ष्वा हि केशिना हरी वृषणा कक्ष्यप्रा ।
अथा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर ॥ ३ ॥

इति दशमोऽध्यायः, पञ्चमप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथैकादशोऽध्यायः

षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—१ इध्मः समिद्धो वाग्निः; २ तनूनपात्; ३ नराशंसः; ४ इडः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३४७. सुषमिद्धो न आ वह देवाँ अग्ने हविष्मते । होतः पावक यक्षि च ॥ १ ॥

१३४८. मधुमन्तं तनूनपाद्यज्ञं देवेषु नः कवे । अद्या कृणुह्यूतये ॥ २ ॥

१३४९. नराशंसमिह प्रियमस्मिन्यज्ञ उप ह्वये । मधुजिह्वं हविष्कृतम् ॥ ३ ॥

१३५०. अग्ने सुखतमे रथे देवाँ ईडित आ वह । असि होता मनुर्हितः ॥ ४ ॥

(२)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—आदित्यः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३५१. यदद्य सूर उदितेऽनागा मित्रो अर्यमा । सुवाति सविता भगः ॥ १ ॥

१३५२. सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन्त्सुदानवः । ये नो अंहोऽतिपिप्रति ॥ २ ॥

१३५३. उत स्वराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये । महो राजान ईशते ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—प्रगाथः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३५४. उत्त्वा मन्दन्तु सोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः । अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥ १ ॥

१३५५. पदा पणीनराधसो नि बाधस्व महाँ असि । न हि त्वा कश्च न प्रति ॥ २ ॥

१३५६. त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् । त्वं राजा जनानाम् ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—पराशरः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१३५७. आ जागृविर्विप्र ऋतं मतीनां सोमः पुनानो असदच्चमूषु ।
सपन्ति यं मिथुनासो निकामा अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः ॥ १ ॥

१३५८. स पुनान उप सूरे दधान ओभे अप्रा रोदसी वी ष आवः ।
प्रिया चिद्यस्य प्रियसास ऊती सतो धनं कारिणे न प्र यंसत् ॥ २ ॥

१३५९. स वर्धिता वर्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वाँ अभि नो ज्योतिषावित् ।
यत्र नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभि गा अद्रिमिष्णन् ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—प्रगाथो घौरः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः
(१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

१३६०. मा चिदन्यद्वि शंसत सखायो मा रिषण्यत ।
इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥ १ ॥

१३६१. अवक्रक्षिणं वृषभं यथा जुवं गां न चर्षणीसहम् ।
विद्वेषणं संवननमुभयङ्करं मंहिष्ठमुभयाविनम् ॥ २ ॥

(६)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः
(१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः, २ पञ्चमः ॥

१३६२. उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथाइव ॥ १ ॥

१३६३. कण्वाइव भृगवः सूर्याइव विश्वमिद्धीतमाशत ।
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन् ॥ २ ॥

(७)

ऋषिः—त्र्यरुणस्त्रसदस्यू ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—पिपीलिकामध्या अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१३६४. पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः ।
द्विषस्तरध्या ऋणया न ईरसे ॥ १ ॥
१३६५. अजीजनो हि पवमान सूर्यं विधारे शक्मना पयः ।
गोजीरया रंहमाणः पुरन्ध्या ॥ २ ॥
१३६६. अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये ।
वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—अग्नयो धिष्ण्या ऐश्वराः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—द्विपदा विराट्पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१३६७. परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय ॥ १ ॥
१३६८. एवामृताय महे क्षयाय स शुक्रो अर्ष दिव्यः पीयूषः ॥ २ ॥
१३६९. इन्द्रस्ते सोम सुतस्य पेयात् क्रत्वे दक्षाय विश्वे च देवाः ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—हिरण्यस्तूपः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१३७०. सूर्यस्येव रश्मयो द्रावयित्नवो मत्सरासः प्रसुतः साकमीरते ।
तन्तुं ततं परि सर्गास आशवो नेन्द्रादृते पवते धाम किं चन ॥ १ ॥
१३७१. उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु मन्द्राजनी चोदते अन्तरासनि ।
पवमानः सन्तनिः सुन्वतामिव मधुमान् द्रप्सः परि वारमर्षति ॥ २ ॥
१३७२. उक्षा मिमेति प्रति यन्ति धेनवो देवस्य देवीरुप यन्ति निष्कृतम् ।
अत्यक्रमीदर्जुनं वारमव्ययमत्कं न निक्तं परि सोमो अव्यत ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—वशिष्ठः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—विराडनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१३७३. अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतं जनयत प्रशस्तम् ।
दूरेदृशं गृहपतिमथव्युम् ॥ १ ॥
१३७४. तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित् ।
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः ॥ २ ॥
१३७५. प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ ।
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—सार्पराज्ञी ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३७६. आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥ १ ॥
१३७७. अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती । व्यख्यन्महिषो दिवम् ॥ २ ॥
१३७८. त्रिंशद्धाम वि राजति वाक्पतङ्गाय धीयते । प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥ ३ ॥

इत्यैकादशोऽध्यायः, षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ द्वादशोऽध्यायः

षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—१, २, ४ गोतमो राहूगणः; ३ वसिष्ठः ॥ देवता—अग्निः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१३७९. उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये । आरे अस्मे च शृण्वते ॥ १ ॥
१३८०. यः स्नीहितीषु पूर्व्यः संजग्मानासु कृष्टिषु । अरक्षद्दाशुषे गयम् ॥ २ ॥
१३८१. स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु शन्तमः । उतास्मान् पात्वंहसः ॥ ३ ॥
१३८२. उत ब्रुवन्तु जन्तव उदग्निर्वृत्रहाजनि । धनञ्जयो रणेरणे ॥ ४ ॥

(२)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१३८३. अग्ने युङ्क्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः। अरं वहन्त्याशवः॥ १॥

१३८४. अच्छा नो याह्या वहाभि प्रयांसि वीतये। आ देवान्त्सोमपीतये॥ २॥

१३८५. उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत्। शोचा वि भाह्यजर॥ ३॥

(३)

ऋषिः—प्रजापतिः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ स्वरः—गान्धारः॥

१३८६. प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः॥ १॥

१३८७. आ जामिरत्के अव्यत भुजे न पुत्र ओण्योः।
सरज्जारो न योषणां वरो न योनिमासदम्॥ २॥

१३८८. स वीरो दक्षसाधनो वि यस्तस्तम्भ रोदसी।
हरिः पवित्रे अव्यत वेधा न योनिमासदम्॥ ३॥

(४)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः॥

१३८९. अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि।
युधेदापित्वमिच्छसे॥ १॥

१३९०. न की रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः।
यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित्पितेव हूयसे॥ २॥

(५)

ऋषिः—मेधातिथिमेध्यातिथी काण्वौ॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

१३९१. आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये॥ १॥

१३९२. आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या।
शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य पीतये॥ २॥

१३९३. पिबा त्वा३स्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपाइव।
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते॥ ३॥

(६)

ऋषिः—१ ऋजिश्वा; २ ऊर्ध्वसद्मा॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः॥

१३९४. आ सोता परि षिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम्। वनप्रक्षमुदप्रुतम्॥ १॥

१३९५. सहस्रधारं वृषभं पयोदुहं प्रियं देवाय जन्मने।
ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजा देव ऋतं बृहत्॥ २॥

(७)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१३९६. अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः॥ १॥

१३९७. गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे। सीदन्नृतस्य योनिमा॥ २॥

१३९८. ब्रह्म प्रजावदा भर जातवेदो विचर्षणे। अग्ने यद्दीदयद्दिवि॥ ३॥

(८)

ऋषिः—वसिष्ठः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

१३९९. अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम्।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन् मितेव सद्म पशुमन्ति होता॥ १॥

१४००. भद्रा वस्त्रा समन्या३ वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागृविर्देववीतौ॥ २॥

१४०१. समु प्रियो मृज्यते सानो अव्ये यशस्तरो यशसां क्षैतो अस्मे।
अभि स्वर धन्वा पूयमानो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ३॥

(९)

ऋषिः—तिरश्चीः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ स्वरः—गान्धारः॥

१४०२. एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्धैराशीर्वान् ममत्तु॥ १॥

१४०३. इन्द्र शुद्धो न आ गहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्य ॥ २ ॥
१४०४. इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—सुतम्भर आत्रेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४०५. अग्ने स्तोमं मनामहे सिध्रमद्य दिविस्पृशः । देवस्य द्रविणस्यवः ॥ १ ॥
१४०६. अग्निर्जुषत नो गिरो होता यो मानुषेष्वा । स यक्षद् दैव्यं जनम् ॥ २ ॥
१४०७. त्वमग्ने सप्रथा असि जुष्टो होता वरेण्यः । त्वया यज्ञं वि तन्वते ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१४०८. अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामङ्गोषिणमवावशंत वाणीः ।
वना वसानो वरुणो न सिन्धुर्वि रत्नधा दयते वार्याणि ॥ १ ॥
१४०९. शूरग्रामः सर्ववीरः सहावान् जेता पवस्व सनिता धनानि ।
तिग्मायुधः क्षिप्रधन्वा समत्स्वषाढः साह्वान् पृतनासु शत्रून् ॥ २ ॥
१४१०. उरुगव्यूतिरभयानि कृण्वन्त्समीचीने आ पवस्वा पुरन्धी ।
अपः सिषासन्नुषसः स्वा३र्गाः सं चिक्रदो महो अस्मभ्यं वाजान् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—नृमेधपुरुमेधौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१४११. त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पतिः ।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इत्पुर्वनुत्तश्चर्षणीधृतिः ॥ १ ॥
१४१२. तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः ॥

१४१३. यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् ।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ १ ॥
१४१४. अपां नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निमु श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ॥ २ ॥

(१४)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४१५. यमग्ने पृत्सु मर्त्यमवा वाजेषु यं जुनाः । स यन्ता शश्वतीरिषः ॥ १ ॥
१४१६. न किरस्य सहन्त्य पर्येता कयस्य चित् । वाजो अस्ति श्रवाय्यः ॥ २ ॥
१४१७. स वाजं विश्वचर्षणिरर्वद्भिरस्तु तरुता । विप्रेभिरस्तु सनिता ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—नोधाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१४१८. साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी ॥ १ ॥
१४१९. सं मातृभिर्न शिशुर्वावशानो वृषा दधन्वे पुरुवारो अद्भिः ।
मर्यो न योषामभि निष्कृतं यन्त्सं गच्छते कलश उस्रियाभिः ॥ २ ॥
१४२०. उत प्र पिप्य ऊधरघ्न्याया इन्दुर्धाराभिः सचते सुमेधाः ।
मूर्धानं गावः पयसा चमूष्वभि श्रीणन्ति वसुभिर्न निक्तैः ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१४२१. पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः ।
आपिर्नो बोधि सधमाद्ये वृधे३ऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥ १ ॥

१४२२. भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा न स्तरभिमातये ।
अस्मां चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ॥ २ ॥

(१७)

ऋषिः—रेणुर्वैश्वामित्रः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१४२३. त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे सत्यामाशिरं परमे व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ॥ १ ॥
१४२४. स भक्षमाणो अमृतस्य चारुण उभे द्यावा काव्येना वि शश्रथे ।
तेजिष्ठा अपो मंहना परि व्यत यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः ॥ २ ॥
१४२५. ते अस्य सन्तु केतवोऽमृत्यवोऽदाभ्यासो जनुषी उभे अनु ।
येभिर्नृम्णा च देव्या च पुनत आदिद्राजानं मनना अगृभ्णत ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—कुत्सः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१४२६. अभि वायुं वीत्यर्षा गृणानो३भि मित्रावरुणा पूयमानः ।
अभी नरं धीजवनं रथेष्ठामभीन्द्रं वृषणं वज्रबाहुम् ॥ १ ॥
१४२७. अभि वस्त्रा सुवसनान्यर्षाभि धेनूः सुदुघाः पूयमानः ।
अभि चन्द्रा भर्त्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान् रथिनो देव सोम ॥ २ ॥
१४२८. अभी नो अर्ष दिव्या वसून्यभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः ।
अभि येन द्रविणमश्नवामाभ्यार्षेयं जमदग्निवन्नः ॥ ३ ॥

(१९)

ऋषिः—नृमेधपुरुमेधौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ बृहती ॥
स्वरः—१, २ गान्धारः; ३ मध्यमः ॥

१४२९. यज्जायथा अपूर्व्य मघवन् वृत्रहत्याय ।
तत्पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उतो दिवम् ॥ १ ॥
१४३०. तत्ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ॥ २ ॥

१४३१. आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।
घर्मं न सामं तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ॥ ३ ॥

(२०)

ऋषिः—अगस्त्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ स्कन्धोग्रीवी बृहती; २, ३ अनुष्टुप् ॥
स्वरः—१ मध्यमः; २, ३ गान्धारः ॥

१४३२. मत्स्यपायि ते महः पात्रस्येव हरिवो मत्सरो मदः ।
वृषा ते वृष्ण इन्दुर्वाजी सहस्त्रसातमः ॥ १ ॥
१४३३. आ नस्ते गन्तु मत्सरो वृषा मदो वरेण्यः ।
सहावाँ इन्द्र सानसिः पृतनाषाडमर्त्यः ॥ २ ॥
१४३४. त्वं हि शूरः सनिता चोदयो मनुषो रथम् ।
सहावान् दस्युमव्रतमोषः पात्रं न शोचिषा ॥ ३ ॥

इति द्वादशोऽध्यायः, षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः ॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—कविर्भार्गवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४३५. पवस्व वृष्टिमा सु नोऽपामूर्मिं दिवस्परि । अयक्ष्मा बृहतीरिषः ॥ १ ॥
१४३६. तया पवस्व धारया यया गाव इहागमन् । जन्यास उप नो गृहम् ॥ २ ॥
१४३७. घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः । अस्मभ्यं वृष्टिमा पव ॥ ३ ॥
१४३८. स न ऊर्जे व्या३व्ययं पवित्रं धाव धारया । देवासः शृणवन्हि कम् ॥ ४ ॥
१४३९. पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजङ्घनत् । प्रत्नवद्रोचयन्रुचः ॥ ५ ॥

(२)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१-३ अनुष्टुप्; ४ बृहती ॥
स्वरः—१-३ गान्धारः; ४ मध्यमः ॥

१४४०. प्रत्यस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर ।
अरङ्गमाय जग्मयेऽपश्चादध्वने नरः ॥ १ ॥

१४४१. एमेनं प्रत्येतन सोमेभिः सोमपातमम् ।
अमत्रेभिर्ऋजीषिणमिन्द्रं सुतेभिरिन्दुभिः ॥ २ ॥

१४४२. यदी सुतेभिरिन्दुभिः सोमेभिः प्रतिभूषथ ।
वेदा विश्वस्य मेधिरो धृषत्तन्तमिदेषते ॥ ३ ॥

१४४३. अस्माअस्मा इदन्धसोऽध्वर्यो प्र भरा सुतम् ।
कुवित्समस्य जेन्यस्य शर्धतोऽभिशस्तेरवस्वरत् ॥ ४ ॥

(३)

ऋषिः—असितः काश्यपो देवलो वा ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४४४. बभ्रवे नु स्वतवसेऽरुणाय दिविस्पृशे । सोमाय गाथमर्चत ॥ १ ॥

१४४५. हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन । मधावा धावता मधु ॥ २ ॥

१४४६. नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन । इन्दुमिन्द्रे दधातन ॥ ३ ॥

१४४७. अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे । देवेभ्यो अनुकामकृत् ॥ ४ ॥

१४४८. इन्द्राय सोम पातवे मदाय परि षिच्यसे । मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥ ५ ॥

१४४९. पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि णः । इन्दविन्द्रेण नो युजा ॥ ६ ॥

(४)

ऋषिः—सुकक्षः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४५०. उद् घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम् । अस्तारमेषि सूर्य ॥ १ ॥

१४५१. नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा । अहिं च वृत्रहावधीत् ॥ २ ॥

१४५२. स न इन्द्रः शिवः सखाश्वावद्गोमद्यवमत् । उरुधारेव दोहते ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—विभ्राट् सौर्यः ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१४५३. विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पिपर्ति बहुधा वि राजति ॥ १ ॥

१४५४. विभ्राड् बृहत्सुभृतं वाजसातमं धर्मं दिवो धरुणे सत्यमर्पितम् ।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमं ज्योतिर्जज्ञे असुरहा सपत्नहा ॥ २ ॥

१४५५. इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं विश्वजिद्धनजिदुच्यते बृहत् ।
विश्वभ्राड् भ्राजो महि सूर्यो दृश उरु पप्रथे सह ओजो अच्युतम् ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती,
२ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१४५६. इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥ १ ॥

१४५७. मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्योऽ३ माशिवासोऽव क्रमुः ।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोऽति शूर तरामसि ॥ २ ॥

(७)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती,
२ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१४५८. अद्याद्या श्वःश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥ १ ॥

१४५९. प्रभङ्गी शूरो मघवा तुवीमघः सम्मिश्लो वीर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥ २ ॥

(८)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—सरस्वान् ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४६०. जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्त सुदानवः । सरस्वन्तं हवामहे ॥ १ ॥

(९)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४६१. उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा । सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥ १ ॥

(१०)

ऋषिः—१ विश्वामित्रः, २ मेधातिथिः, ३ शतं वैखानसाः ॥ देवता—१ सविता,
२ ब्रह्मणस्पतिः, ३ अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४६२. तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ १ ॥

१४६३. सोमानां स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते ।
कक्षीवन्तं य औशिजः ॥ २ ॥

१४६४. अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—यजत आत्रेयः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४६५. ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य। महि वा क्षत्रं देवेषु ॥ १ ॥

१४६६. ऋतमृतेन सपन्तेषिरं दक्षमाशाते। अद्रुहा देवौ वर्धेते ॥ २ ॥

१४६७. वृष्टिद्यावा रीत्यापेषस्पती दानुमत्याः। बृहन्तं गर्तमाशाते ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४६८. युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि ॥ १ ॥

१४६९. युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥ २ ॥

१४७०. केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः--उशनाः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१४७१. अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्वे तुभ्यं पवते त्वमस्य पाहि ।
त्वं ह यं चकृषे त्वं ववृष इन्दुं मदाय युज्याय सोमम् ॥ १ ॥

१४७२. स ईं रथो न भुरिषाडयोजि महः पुरूणि सातये वसूनि ।
आदीं विश्वा नहुष्याणि जाता स्वर्षाता वन ऊर्ध्वा नवन्त ॥ २ ॥

१४७३. शुष्मी शर्धो न मारुतं पवस्वानभिशस्ता दिव्या यथा विट् ।
आपो न मक्षू सुमतिर्भवा नः सहस्राप्साः पृतनाषाड् न यज्ञः ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ वर्धमाना गायत्री; २, ३ गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४७४. त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥ १ ॥

१४७५. स नो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वाभिर्यजा महः। आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥ २ ॥

१४७६. वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा। अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४७७. होता देवो अमर्त्यः पुरस्तादेति मायया। विदथानि प्रचोदयन् ॥ १ ॥

१४७८. वाजी वाजेषु धीयतेऽध्वरेषु प्र णीयते। विप्रो यज्ञस्य साधनः ॥ २ ॥

१४७९. धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमा दधे। दक्षस्य पितरं तना ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—हर्यतः प्रागाथः ॥ देवता—अग्निर्हवींषि वा ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४८०. आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम्। रसा दधीत वृषभम् ॥ १ ॥

१४८१. ते जानत स्वमोक्यां३ सं वत्सासो न मातृभिः। मिथो नसन्त जामिभिः ॥ २ ॥

१४८२. उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि। इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—बृहद्दिव आथर्वणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१४८३. तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञ उग्रस्त्वेषनृम्णः ।
सद्यो जज्ञानो नि रिणाति शत्रूननु यं विश्वे मदन्त्यूमाः ॥ १ ॥

१४८४. वावृधानः शवसा भूर्योजाः शत्रुर्दासाय भियसं दधाति ।
अव्यनच्च व्यनच्च सस्नि सं ते नवन्त प्रभृता मदेषु ॥ २ ॥

१४८५. त्वे क्रतुमपि वृञ्जन्ति विश्वे द्विर्यदेते त्रिर्भवन्त्यूमाः ।
स्वादोः स्वादीयः स्वादुना सृजा समदः सु मधु मधुनाभि योधीः ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—गृत्समदः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अष्टिः; २, ३ अतिशक्वरी ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २-३ पञ्चमः ॥

१४८६. त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृम्पत्
सोमममपिबद्विष्णुना सुतं यथावशम् ।
स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुं सैनं
सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥ १ ॥

१४८७. साकं जातः क्रतुना साकमोजसा ववक्षिथ
साकं वृद्धो वीर्यैः सासहिर्मृधो विचर्षणिः ।
दाता राध स्तुवते काम्यं वसु प्रचेतन सैनं
सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥ २ ॥

१४८८. अध त्विषीमाँ अभ्योजसा कृविं युधाभवदा
रोदसी अपृणदस्य मज्मना प्र वावृधे ।
अधत्तान्यं जठरे प्रेमरिच्यत प्र चेतय सैनं
सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥ ३ ॥

इति त्रयोदशोऽध्यायः, षष्ठप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—प्रियमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४८९. अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥ १ ॥

१४९०. आ हरयः ससृज्रिरेऽरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि संनवामहे ॥ २ ॥

१४९१. इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु । यत्सीमुपह्वरे विदत् ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—नृमेधपुरुमेधौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१४९२. आ नो विश्वासु हव्यमिन्द्रं समत्सु भूषत ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहन् परमज्या ऋचीषम ॥ १ ॥

१४९३. त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥ २ ॥

(३)

ऋषिः—त्र्यरुणत्रसदस्यू ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—ऊर्ध्वा बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

१४९४. प्रत्नं पीयूषं पूर्व्यं यदुक्थ्यं महो गाहाद्दिव आ निरधुक्षत ।
इन्द्रमभि जायमानं समस्वरन् ॥ १ ॥

१४९५. आदीं के चित् पश्यमानास आप्यं वसुरुचो दिव्या अभ्यनूषत ।
दिवो न वारं सविता व्यूर्णुते ॥ २ ॥

१४९६. अध यदिमे पवमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनाभि मज्मना ।
यूथे न निष्ठा वृषभो वि राजसि ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१४९७. इममू षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसम् । अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥ १ ॥

१४९८. विभक्तासि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ । सद्यो दाशुषे क्षरसि ॥ २ ॥

१४९९. आ नो भज परमेष्वा वाजेषु मध्यमेषु । शिक्षा वस्वो अन्तमस्य ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—वत्सः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५००. अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रह । अहं सूर्यइवाजनि ॥ १ ॥

१५०१. अहं प्रत्नेन जन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत् । येनेन्द्रः शुष्ममिद्दधे ॥ २ ॥

१५०२. ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवुर्ऋषयो ये च तुष्टुवुः । ममेद् वर्धस्व सुष्टुतः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—अग्निस्तापसः ॥ देवता—विश्वेदेवाः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१५०३. अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्जोषि ब्रह्म सहस्कृत ।
ये देवत्रा य आयुषु तेभिर्नो महया गिरः ॥ १ ॥

१५०४. प्र स विश्वेभिरग्निभिरग्निः स यस्य वाजिनः ।
तनये तोके अस्मदा सम्यङ् वाजैः परीवृतः ॥ २ ॥

१५०५. त्वं नो अग्ने अग्निभिर्ब्रह्म यज्ञं च वर्धय ।
त्वं नो देवतातये रायो दानाय चोदय ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—त्र्यरुणत्रसदस्यू ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—ऊर्ध्वा बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

१५०६. त्वे सोम प्रथमा वृक्तबर्हिषो महे वाजाय श्रवसे धियं दधुः ।
स त्वं नो वीर वीर्याय चोदय ॥ १ ॥
१५०७. अभ्यभि हि श्रवसा ततर्दिथोत्सं न कं चिज्जनपानमक्षितम् ।
शर्याभिर्न भरमाणो गभस्त्योः ॥ २ ॥
१५०८. अजीजनो अमृत मर्त्याय कमृतस्य धर्मन्नमृतस्य चारुणः ।
सदासरो वाजमच्छा सनिष्यदत् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—विश्वमना वैयश्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१५०९. एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु ।
प्र राधांसि चोदयते महित्वना ॥ १ ॥
१५१०. उपो हरीणां पतिं राधः पृञ्चन्तमब्रवम् ।
नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य ॥ २ ॥
१५११. न ह्या३ङ्ग पुरा च न जज्ञे वीरतरस्त्वत् ।
न की राया नैवथा न भन्दना ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—प्रियमेध आङ्गिरसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—निचृदुष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१५१२. नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम् । पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ॥ १ ॥

(१०)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५१३. देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्वासिचम् ।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते ॥ १ ॥
१५१४. तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत ।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे ॥ २ ॥

(११)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बृहती ॥ स्वरः—मध्यमः ॥

१५१५. अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन् व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्तु नो गिरः ॥ १ ॥
१५१६. यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीभिर्नमस्यत ॥ २ ॥
१५१७. प्र दैवोदासो अग्निर्देव इन्द्रो न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य शर्मणि ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—शतं वैखानसाः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५१८. अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ १ ॥
१५१९. अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः ।
तमीमहे महागयम् ॥ २ ॥
१५२०. अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ।
दधद्रयिं मयि पोषम् ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वसूयव आत्रेयाः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५२१. अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया । आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥ १ ॥
१५२२. तं त्वा घृतस्नवीमहे चित्रभानो स्वर्दृशम् । देवाँ आ वीतये वह ॥ २ ॥
१५२३. वीतिहोत्रं त्वा कवे द्युमन्तं समिधीमहि । अग्ने बृहन्तमध्वरे ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५२४. अवा नो अग्न ऊतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि । विश्वासु धीषु वन्द्य ॥ १ ॥
१५२५. आ नो अग्ने रयिं भर सत्रासाहं वरेण्यम् । विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् ॥ २ ॥
१५२६. आ नो अग्ने सुचेतुना रयिं विश्वायुपोषसम् । मार्डीकं धेहि जीवसे ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—केतुराग्नेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५२७. अग्निं हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु। तेन जेष्म धनंधनम् ॥ १ ॥

१५२८. यया गा आकरामहै सेनयाग्ने तवोत्या। तां नो हिन्व मघत्तये ॥ २ ॥

१५२९. आग्ने स्थूरं रयिं भर पृथुं गोमन्तमश्विनम्। अङ्धि खं वर्तया पविम् ॥ ३ ॥

१५३०. अग्ने नक्षत्रमजरमा सूर्यं रोहयो दिवि। दधज्ज्योतिर्जनेभ्यः ॥ ४ ॥

१५३१. अग्ने केतुर्विशामसि प्रेष्ठः श्रेष्ठ उपस्थसत्। बोधा स्तोत्रे वयो दधत् ॥ ५ ॥

(१६)

ऋषिः—विरूप आङ्गिरसः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५३२. अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति ॥ १ ॥

१५३३. ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वःपतिः। स्तोता स्यां तव शर्मणि ॥ २ ॥

१५३४. उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते। तव ज्योतींष्यर्चयः ॥ ३ ॥

इति चतुर्दशोऽध्यायः, सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५३५. कस्ते जामिर्जनानामग्ने को दाश्वध्वरः। को ह कस्मिन्नसि श्रितः ॥ १ ॥

१५३६. त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः। सखा सखिभ्य ईड्यः ॥ २ ॥

१५३७. यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वं दमम् ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५३८. ईडेन्यो नमस्यस्तिरस्तमांसि दर्शतः। समग्निरिध्यते वृषा ॥ १ ॥

१५३९. वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः। तं हविष्मन्त ईडते ॥ २ ॥

१५४०. वृषणं त्वा वयं वृषन् वृषणः समिधीमहि। अग्ने दीद्यतं बृहत् ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—विरूप आङ्गिरसः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५४१. उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः। अग्ने शुक्रास ईरते ॥ १ ॥

१५४२. उप त्वा जुह्वो३ मम घृताचीर्यन्तु हर्यत। अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥ २ ॥

१५४३. मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम्। अग्निमीडे स उ श्रवत् ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५४४. पाहि नो अग्न एकया पाह्यू३त द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥ १ ॥

१५४५. पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव ।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे ॥ २ ॥

(५)

ऋषिः—त्रित आप्त्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१५४६. इनो राजन्नरतिः समिद्धो रौद्रो दक्षाय सुषुमाँ अदर्शि ।
चिकिद्वि भाति भासा बृहतासिक्नीमेति रुशतीमपाजन् ॥ १ ॥

१५४७. कृष्णां यदेनीमभि वर्पसाभूज्जनयन्योषां बृहतः पितुर्जाम् ।
ऊर्ध्वं भानुं सूर्यस्य स्तभायन् दिवो वसुभिररतिर्वि भाति ॥ २ ॥

१५४८. भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात्।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—उशनाः काव्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५४९. कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम्। वराय देव मन्यवे ॥ १ ॥

१५५०. दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो। कदु वोच इदं नमः ॥ २ ॥

१५५१. अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः। वाजद्रविणसो गिरः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५५२. अग्न आ याह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ॥ १ ॥

१५५३. अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥ २ ॥

(८)

ऋषिः—सुदीतिपुरुमीढौ तयोर्वान्यतरः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५५४. अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥ १ ॥

१५५५. अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम् ।
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥ २ ॥

(९)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५५६. अदाभ्यः पुरएता विशामग्निर्मानुषीणाम् । तूर्णी रथः सदा नवः ॥ १ ॥

१५५७. अभि प्रयांसि वाहसा दाश्वाँ अश्नोति मर्त्यः । क्षयं पावकशोचिषः ॥ २ ॥

१५५८. साह्वान् विश्वा अभियुजः क्रतुर्देवानाममृक्तः । अग्निस्तुविश्रवस्तमः ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः ॥

१५५९. भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥ १ ॥

१५६०. भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहिः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टये ॥ २ ॥

(११)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१५६१. अग्ने वाजस्य गोमत ईशानः सहसो यहो । अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः ॥ १ ॥

१५६२. स इधानो वसुष्कविरग्निरीडेन्यो गिरा । रेवदस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि ॥ २ ॥

१५६३. क्षपो राजन्नुत त्मनाग्ने वस्तोरुतोषसः । स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—गोपवन आत्रेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—आनुष्टुभः प्रगाथः (१ अनुष्टुप्; २-३ गायत्री) ॥ स्वरः—१ गान्धारः; २-३ षड्जः ॥

१५६४. विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम् ।
अग्निं वो दुर्यं वच स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥ १ ॥

१५६५. यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् । प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥ २ ॥

१५६६. पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता । हव्यान्यैरयद् दिवि ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यो वीतहव्यो वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१५६७. समिद्धमग्निं समिधा गिरा गृणे शुचिं पावकं पुरो अध्वरे ध्रुवम् ।
विप्रं होतारं पुरुवारमद्रुहं कविं सुम्नैरीमहे जातवेदसम् ॥ १ ॥

१५६८. त्वां दूतमग्ने अमृतं युगेयुगे हव्यवाहं दधिरे पायुमीड्यम् ।
देवासश्च मर्त्तासश्च जागृविं विभुं विश्पतिं नमसा नि षेदिरे ॥ २ ॥

१५६९. विभूषन्नग्न उभयाँ अनु व्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे ।
यत्ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽध स्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—प्रयोगो भार्गवः; पावकोऽग्निर्बार्हस्पत्यो वा, गृहपतियविष्ठौ सहसः सुतौ तयोर्वान्यतरो वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५७०. उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिरन् ॥ १ ॥

१५७१. यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसन्दिनम् । आपश्चिन्नि दधा पदम् ॥ २ ॥

१५७२. पदं देवस्य मीढुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः । भद्रा सूर्यइवोपदृक् ॥ ३ ॥

इति पञ्चदशोऽध्यायः, सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः ॥

अथ षोडशोऽध्यायः

सप्तमप्रपाठकस्य तृतीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५७३. अभि त्वा पूर्वपीतये इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥ १ ॥

१५७४. अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ॥ २ ॥

(२)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५७५. प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः । इन्द्राग्नी इष आ वृणे ॥ १ ॥

१५७६. इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम् । साकमेकेन कर्मणा ॥ २ ॥

१५७७. इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः । ऋतस्य पथ्या३ अनु ॥ ३ ॥

१५७८. इन्द्राग्नी तविषाणि वां सधस्थानि प्रयांसि च । युवोरप्तूर्यं हितम् ॥ ४ ॥

(३)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५७९. शग्ध्यू३ षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥ १ ॥

१५८०. पौरो अश्वस्य पुरुकृद्गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।
न किर्हि दानं परिमर्धिषत् त्वे यद्यद्यामि तदा भर ॥ २ ॥

(४)

ऋषिः—भर्गः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५८१. त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥ १ ॥

१५८२. त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।
आ पुरन्दरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोऽवसे ॥ २ ॥

(५)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५८३. यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्वग्नये ॥ १ ॥

१५८४. अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥ २ ॥

(६)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—वरुणः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५८५. इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युरा चके ॥ १ ॥

(७)

ऋषिः—सुकक्षः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५८६. कया त्वं न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन् । कया स्तोतृभ्य आ भर ॥ १ ॥

(८)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१५८७. इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥ १ ॥

१५८८. इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे स्वानास इन्दवः ॥ २ ॥

(९)

ऋषिः—विश्वकर्मा भौवनः ॥ देवता—विश्वकर्मा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१५८९. विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्वयं यजस्व तन्वां३ स्वाहिते ।
मुह्यन्त्वन्ये अभितो जनास इहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ॥ १ ॥

(१०)

ऋषिः—अनानतः पारुच्छेपिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अत्यष्टिः ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१५९०. अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि
तरति सयुग्वभिः सूरो न सयुग्वभिः ।
धारा पृष्ठस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः ।
विश्वा यद्रूपा परियास्यृक्वभिः सप्तास्येभिर्ऋक्वभिः ॥ १ ॥

१५९१. प्राचीमनु प्रदिशं याति चेकितत्सं रश्मिभिर्यतते
दर्शतो रथो दैव्यो दर्शतो रथः ।
अग्मन्नुक्थानि पौंस्येन्द्रं जैत्राय हर्षयन् ।
वज्रश्च यद्भवथो अनपच्युता समत्स्वनपच्युता ॥ २ ॥

१५९२. त्वं ह त्यत्पणीनां विदो वसु सं मातृभिर्मर्जयसि
स्व आ दम ऋतस्य धीतिभिर्दमे ।
परावतो न साम तद्यत्रा रणन्ति धीतयः ।
त्रिधातुभिररुषीभिर्वयो दधे रोचमानो वयो दधे ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ॥ देवता—पूषा ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५९३. उत नो गोषणिं धियमश्वसां वाजसामुत। नृवत्कृणुह्यूतये ॥ १ ॥

(१२)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—मरुतः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५९४. शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः। विदा कामस्य वेनतः ॥ १ ॥

(१३)

ऋषिः—ऋजिश्वा ॥ देवता—विश्वदेवाः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५९५. उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृडीका भवन्तु नः ॥ १ ॥

(१४)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—द्यावापृथिव्यौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५९६. प्र वां महि द्यवी अभ्युपस्तुतिं भरामहे। शुची उप प्रशस्तये ॥ १ ॥

१५९७. पुनाने तन्वा मिथः स्वेन दक्षेण राजथः। ऊह्याथे सनादृतम् ॥ २ ॥

१५९८. मही मित्रस्य साधथस्तरन्ती पिप्रती ऋतम्। परि यज्ञं नि षेदथुः ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१५९९. अयमु ते समतसि कपोतइव गर्भधिम्। वचस्तच्चिन्न ओहसे ॥ १ ॥

१६००. स्तोत्रं राधानां पते गिर्वाहो वीर यस्य ते। विभूतिरस्तु सूनृता ॥ २ ॥

१६०१. ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन् वाजे शतक्रतो। समन्येषु ब्रवावहै ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—हर्यतः प्रागाथः ॥ देवता—अग्निर्हवींषि वा ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६०२. गाव उप वदावटे मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया ॥ १ ॥

१६०३. अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु। अवटस्य विसर्जने ॥ २ ॥

१६०४. सिञ्चन्ति नमसावटमुच्चाचक्रं परिज्मानम्। नीचीनवारमक्षितम् ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—देवातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६०५. मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥ १ ॥

१६०६. सव्यामनु स्फिग्यं वावसे वृषा न दानो अस्य रोषति ।
मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ॥ २ ॥

(१८)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६०७. इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥ १ ॥

१६०८. अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्रइव पप्रथे ।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥ २ ॥

(१९)

ऋषिः—श्रुष्टिगुः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६०९. यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत् सो अज्यते रयिः ॥ १ ॥
१६१०. तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे स्वानास इन्दवः ॥ २ ॥

(२०)

ऋषिः—पर्वतनारदौ ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१६११. गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धनिव ।
शुचिं च वर्णमधि गोषु धारय ॥ १ ॥
१६१२. स नो हरीणां पत इन्दो देवप्सरस्तमः ।
सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव ॥ २ ॥
१६१३. सनेमि त्वमस्मदा अदेवं कं चिदत्रिणम् ।
साह्वाँ इन्दो परि बाधो अप द्वयुम् ॥ ३ ॥

(२१)

ऋषिः—अत्रिः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१६१४. अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मध्वाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमप्सु गृभ्णते ॥ १ ॥
१६१५. विपश्चिते पवमानाय गायत मही न धारात्यन्धो अर्षति ।
अहिर्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीडन्नसरद् वृषा हरिः ॥ २ ॥
१६१६. अग्रेगो राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नां भुवनेष्वर्पितः ।
हरिर्घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः ॥ ३ ॥

इति षोडशोऽध्यायः, सप्तमप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ सप्तदशोऽध्यायः

अष्टमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६१७. विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिमं यज्ञमिदं वचः । चनो धाः सहसो यहो ॥ १ ॥
१६१८. यच्चिद्धि शश्वता तना देवंदेवं यजामहे । त्वे इद्धूयते हविः ॥ २ ॥
१६१९. प्रियो नो अस्तु विश्पतिर्होता मन्द्रो वरेण्यः । प्रियाः स्वग्नयो वयम् ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६२०. इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १ ॥
१६२१. स नो वृषन्नमुं चरुं सत्रादावन्नपा वृधि । अस्मभ्यमप्रतिष्कुतः ॥ २ ॥
१६२२. वृषा यूथेव वंसगः कृष्टीरियर्त्योजसा । ईशानो अप्रतिष्कुतः ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—शंयुर्बार्हस्पत्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६२३. त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय ।
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥ १ ॥
१६२४. पर्षि तोकं तनयं पर्तृभिष्ट्वमदब्धैरप्रयुत्वभिः ।
अग्ने हेडांसि दैव्या युयोधि नोऽदेवानि ह्वरांसि च ॥ २ ॥

(४)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—विष्णुः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१६२५. किमित्ते विष्णो परिचक्षि नाम प्र यद्ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि ।
मा वर्पो अस्मदप गूह एतद्यदन्यरूपः समिथे बभूथ ॥ १ ॥
१६२६. प्र तत्ते अद्य शिपिविष्ट हव्यमर्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान् क्षयन्तमस्य रजसः पराके ॥ २ ॥
१६२७. वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—१ वायुः; २-३ इन्द्रवायू ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१६२८. वायो शुक्रो अयामि ते मध्वो अग्रं दिविष्टिषु ।
आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ॥ १ ॥

१६२९. इन्द्रश्च वायवेषां सोमानां पीतिमर्हथः ।
युवां हि यन्तीन्दवो निम्नमापो न सध्र्यक् ॥ २ ॥

१६३०. वायविन्द्रश्च शुष्मिणा सरथं शवसस्पती ।
नियुत्वन्ता न ऊतय आ यातं सोमपीतये ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—रेभसूनू काश्यपौ ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१६३१. अध क्षपा परिष्कृतो वाजाँ अभि प्र गाहसे ।
यदी विवस्वतो धियो हरिं हिन्वन्ति यातवे ॥ १ ॥

१६३२. तमस्य मर्जयामसि मदो य इन्द्रपातमः ।
यं गाव आसभिर्दधुः पुरा नूनं च सूरयः ॥ २ ॥

१६३३. तं गाथया पुराण्या पुनानमभ्यनूषत ।
उतो कृपन्त धीतयो देवानां नाम बिभ्रतीः ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६३४. अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः । सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥ १ ॥

१६३५. स घा नः सूनुः शवसा पृथुप्रगामा सुशेवः । मीढ्वाँ अस्माकं बभूयात् ॥ २ ॥

१६३६. स नो दूराच्चासाच्च नि मर्त्यादघायोः । पाहि सदमिद्विश्वायुः ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६३७. त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता वृत्रतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥ १ ॥

१६३८. अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा ।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥ २ ॥

(९)

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६३९. यज्ञ इन्द्रमवर्धयद् यद्भूमिं व्यवर्तयत् । चक्राण ओपशं दिवि ॥ १ ॥

१६४०. व्या३न्तरिक्षमतिरन् मदे सोमस्य रोचना । इन्द्रो यदभिनद्वलम् ॥ २ ॥

१६४१. उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहा सतीः । अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—श्रुतकक्षः सुकक्षो वा आङ्गिरसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६४२. त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् । आ च्यावयस्यूतये ॥ १ ॥

१६४३. युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम् । नरमवार्यक्रतुम् ॥ २ ॥

१६४४. शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम । अवा नः पार्ये धने ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१६४५. तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव दक्षमुत क्रतुम् ।
वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥ १ ॥

१६४६. तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः ।
त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ॥ २ ॥

१६४७. त्वां विष्णुर्बृहन् क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः ।
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—विरूप आङ्गिरसः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६४८. नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ॥ १ ॥

१६४९. कुवित्सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् । उरुकृदुरु णस्कृधि ॥ २ ॥

१६५०. मा नो अग्ने महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा । संवर्गं सं रयिं जय ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वत्सः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६५१. समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः । समुद्रायेव सिन्धवः ॥ १ ॥

१६५२. वि चिद्वृत्रस्य दोधतः शिरो बिभेद वृष्णिना । वज्रेण शतपर्वणा ॥ २ ॥

१६५३. ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत्समवर्त्तयत् । इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ एकपदापङ्क्तिः; २-३ गायत्री ॥ स्वरः—१ पञ्चमः; २-३ षड्जः ॥

१६५४. सुमन्मा वस्वी रन्ती सूनरी ॥ १ ॥

१६५५. सरूप वृषन्ना गहीमौ भद्रौ धुर्यावभि । ताविमा उप सर्पतः ॥ २ ॥

१६५६. नीव शीर्षाणि मृढ्वं मध्य आपस्य तिष्ठति । शृङ्गेभिर्दशभिर्दिशन् ॥ ३ ॥

इति सप्तदशोऽध्यायः, अष्टमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

अथाष्टादशोऽध्यायः

अष्टमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः प्रियमेधश्चाङ्गिरसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६५७. पन्यंपन्यमित् सोतार आ धावत मद्याय । सोमं वीराय शूराय ॥ १ ॥

१६५८. एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम् । इन्द्रं गीर्भिर्गिर्वणसम् ॥ २ ॥

१६५९. पाता वृत्रहा सुतमा घा गमन्नारे अस्मत् । नि यमते शतमूतिः ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—श्रुतकक्षः सुकक्षो वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६६०. आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः । न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥ १ ॥

१६६१. विव्यक्थ महिना वृषन्भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ॥ २ ॥

१६६२. अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् । अरं धामभ्य इन्दवः ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—शुनःशेप आजीगर्तिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६६३. जराबोध तद्विविड्ढि विशेविशे यज्ञियाय । स्तोमं रुद्राय दृशीकम् ॥ १ ॥

१६६४. स नो महाँ अनिमानो धूमकेतुः पुरुश्चन्द्रः । धिये वाजाय हिन्वतु ॥ २ ॥

१६६५. स रेवाँइव विश्पतिर्दैव्यः केतुः शृणोतु नः । उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—शंयुर्बार्हस्पत्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६६६. तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने । शं यद् गवे न शाकिने ॥ १ ॥

१६६७. न घा वसुर्नि यमते दानं वाजस्य गोमतः । यत् सीमुपश्रवद्गिरः ॥ २ ॥

१६६८. कुवित्सस्य प्र हि व्रजं गोमन्तं दस्युहा गमत् । शचीभिरप नो वरत् ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—मेधातिथिः ॥ देवता—विष्णुः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६६९. इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । समूढमस्य पांसुले ॥ १ ॥

१६७०. त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन् ॥ २ ॥

१६७१. विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ ३ ॥

१६७२. तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥ ४ ॥

१६७३. तद्विप्रासो विपन्युवो जागृवांसः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥ ५ ॥

१६७४. अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्या अधि सानवि ॥ ६ ॥

(६)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६७५. मो षु त्वा वाघतश्च नारे अस्मन्नि रीरमन् ।
आरात्ताद्वा सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥ १ ॥

१६७६. इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते ।
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ॥ २ ॥

(७)

ऋषिः—आयुः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६७७. अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषत स्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥ १ ॥

१६७८. समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥ २ ॥

(८)

ऋषिः—अम्बरीष ऋजिश्वा च ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१६७९. इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते वीराय सदनासदे ॥ १ ॥

१६८०. तं सखायः पुरूरुचं वयं यूयं च सूरयः ।
अश्याम वाजगन्ध्यं सनेम वाजपस्त्यम् ॥ २ ॥

१६८१. परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत् परि मदेन सह गच्छति ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६८२. कस्तमिन्द्र त्वा वसवा मर्त्यो दधर्षति ।
श्रद्धा हि ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥ १ ॥

१६८३. मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।
तव प्रणीती हर्यश्व सूरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ॥ २ ॥

(१०)

ऋषिः—विश्वमना वैयश्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१६८४. एदु मधोर्मदिन्तरं सिञ्चाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीर स्तवते सदावृधः ॥ १ ॥

१६८५. इन्द्र स्थातर्हरीणां न किष्टे पूर्व्यस्तुतिम् ।
उदानंश शवसा न भन्दना ॥ २ ॥

१६८६. तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः ।
अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः ॥

१६८७. तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे । देवत्रा हव्यमूहिषे ॥ १ ॥

१६८८. विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिषमग्निमीडिष्व यन्तुरम् ।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥ २ ॥

(१२)

ऋषिः—सप्तर्षयः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६८९. आ सोम स्वानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दध्रिषे ॥ १ ॥

१६९०. स मामृजे तिरो अण्वानि मेष्यो मीढ्वान्त्सप्तिर्न वाजयुः ।
अनुमाद्यः पवमानो मनीषिभिः सोमो विप्रेभिर्ऋक्वभिः ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—कलिः प्रागाथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१६९१. वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य सवने सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥ १ ॥

१६९२. वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं न स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥ २ ॥

(१४)

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१६९३. इन्द्राग्नी रोचना दिवः परि वाजेषु भूषथः । तद्वां चेति प्र वीर्यम् ॥ १ ॥

१६९४. इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः। ऋतस्य पथ्या३ अनु॥ २॥

१६९५. इन्द्राग्नी तविषाणि वां सधस्थानि प्रयांसि च। युवोरप्तूर्यं हितम्॥ ३॥

(१५)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

१६९६. क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः॥ १॥

१६९७. दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे।
न किष्ट्वा नि यमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा॥ २॥

१६९८. य उग्रः सन्ननिष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत्॥ ३॥

(१६)

ऋषिः—निध्रुविः काश्यपः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१६९९. पवमाना असृक्षत सोमाः शुक्रास इन्दवः। अभि विश्वानि काव्या॥ १॥

१७००. पवमाना दिवस्पर्यन्तरिक्षादसृक्षत। पृथिव्या अधि सानवि॥ २॥

१७०१. पवमानास आशवः शुभ्रा असृग्रमिन्दवः। घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः॥ ३॥

(१७)

ऋषिः—विश्वामित्रः॥ देवता—इन्द्राग्नी॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१७०२. तोशा वृत्रहणा हुवे सजित्वानापराजिता। इन्द्राग्नी वाजसातमा॥ १॥

१७०३. प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः। इन्द्राग्नी इष आ वृणे॥ २॥

१७०४. इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम्। साकमेकेन कर्मणा॥ ३॥

(१८)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१७०५. उप त्वा रण्वसन्दृशं प्रयस्वन्तः सहस्कृत। अग्ने ससृज्महे गिरः॥ १॥

१७०६. उप च्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम्। अग्ने हिरण्यसन्दृशः॥ २॥

१७०७. य उग्रइव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः। अग्ने पुरो रुरोजिथ॥ ३॥

(१९)

ऋषिः—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१७०८. ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम्। अजस्रं घर्ममीमहे॥ १॥

१७०९. य इदं प्रतिपप्रथे यज्ञस्य स्वरुत्तिरन्। ऋतूनुत्सृजते वशी॥ २॥

१७१०. अग्निः प्रियेषु धामसु कामो भूतस्य भव्यस्य। सम्राडेको विराजति॥ ३॥

इत्यष्टादशोऽध्यायः, अष्टमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः॥

अथैकोनविंशोऽध्यायः

अष्टमप्रपाठकस्य तृतीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—विरूप आङ्गिरसः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१७११. अग्निः प्रत्नेन जन्मना शुम्भानस्तन्वां३ स्वाम्। कविर्विप्रेण वावृधे॥ १॥

१७१२. ऊर्जो नपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम्। अस्मिन् यज्ञे स्वध्वरे॥ २॥

१७१३. स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा। देवैरा सत्सि बर्हिषि॥ ३॥

(२)

ऋषिः—अवत्सारः॥ देवता—पवमानः सोमः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१७१४. उत्ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः। नुदस्व याः परिस्पृधः॥ १॥

१७१५. अया निजघ्निरोजसा रथसङ्गे धने हिते। स्तवा अबिभ्युषा हृदा॥ २॥

१७१६. अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूढ्या। रुज यस्त्वा पृतन्यति॥ ३॥

१७१७. तं हिन्वन्ति मदच्युतं हरिं नदीषु वाजिनम्। इन्दुमिन्द्राय मत्सरम्॥ ४॥

(३)

ऋषिः—विश्वामित्रः॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—बृहती॥ स्वरः—मध्यमः॥

१७१८. आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः।
मा त्वा के चिन्नि येमुरिन्न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि॥ १॥

१७१९. वृत्रखादो वलं रुजः पुरां दर्मो अपामजः।
स्थाता रथस्य हर्योरभिस्वर इन्द्रो दृढा चिदारुजः॥ २॥

१७२०. गम्भीराँ उदधीँरिव क्रतुं पुष्यसि गाइव ।
प्र सुगोपा यवसं धेनवो यथा ह्रदं कुल्याइवाशत ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—देवातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१७२१. यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥ १ ॥

१७२२. मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्द्रेन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद्दधिषे सहः ॥ २ ॥

(५)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१७२३. त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम् ।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः ॥ १ ॥

१७२४. मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान् कदा चना दभन् ।
विश्वा च न उपमिमीहि मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ ॥ २ ॥

(६)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७२५. प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः । दिवो अदर्शि दुहिता ॥ १ ॥

१७२६. अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी । सखा भूदश्विनोरुषाः ॥ २ ॥

१७२७. उत सखास्यश्विनोरुत माता गवामसि । उतोषो वस्व ईशिषे ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—प्रस्कण्वः काण्वः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७२८. एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥ १ ॥

१७२९. या दस्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा ॥ २ ॥

१७३०. वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि । यद्वां रथो विभिष्पतात् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१७३१. उषस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति ।
येन तोकं च तनयं च धामहे ॥ १ ॥

१७३२. उषो अद्येह गोमत्यश्वावति विभावरि ।
रेवदस्मे व्युच्छ सूनृतावति ॥ २ ॥

१७३३. युङ्क्ष्वा हि वाजिनीवत्यश्वाँ अद्यारुणाँ उषः ।
अथा नो विश्वा सौभगान्या वह ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ स्वरः—ऋषभः ॥

१७३४. अश्विना वर्तिरस्मदा गोमद् दस्रा हिरण्यवत् ।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतम् ॥ १ ॥

१७३५. एह देवा मयोभुवा दस्रा हिरण्यवर्त्तनी ।
उषर्बुधो वहन्तु सोमपीतये ॥ २ ॥

१७३६. यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः ।
आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—वसुश्रुत आत्रेयः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१७३७. अग्निं तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः ।
अस्तमर्वन्त आशवोऽस्तं नित्यासो वाजिन इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ १ ॥

१७३८. अग्निर्हि वाजिनं विशे ददाति विश्वचर्षणिः ।
अग्नी राये स्वाभुवं स प्रीतो याति वार्यमिषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ २ ॥

१७३९. सो अग्निर्यो वसुर्गृणे सं यमायन्ति धेनवः ।
समर्वन्तो रघुद्रुवः सं सुजातासः सूरय इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—सत्यश्रवा आत्रेयः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१७४०. महे नो अद्य बोधयोषो राये दिवित्मती ।
यथा चिन्नो अबोधयः सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥ १ ॥

१७४१. या सुनीथे शौचद्रथे व्यौच्छो दुहितर्दिवः ।
सा व्युच्छ सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥ २ ॥

१७४२. सा नो अद्याभरद्वसुर्व्युच्छा दुहितर्दिवः ।
यो व्यौच्छः सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—अवस्युरात्रेयः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१७४३. प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम् ।
स्तोता वामश्विनावृषि स्तोमेभिर्भूषति प्रति माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥ १ ॥

१७४४. अत्यायातमश्विना तिरो विश्वा अहं सना ।
दस्रा हिरण्यवर्त्तनी सुषुम्णा सिन्धुवाहसा माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥ २ ॥

१७४५. आ नो रत्नानि बिभ्रतावश्विना गच्छतं युवम् ।
रुद्रा हिरण्यवर्तनी जुषाणा वाजिनीवसू माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—बुधगविष्ठिरावात्रेयौ ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१७४६. अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् ।
यह्वाइव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सस्रते नाकमच्छ ॥ १ ॥

१७४७. अबोधि होता यजथाय देवानूर्ध्वो अग्निः सुमनाः प्रातरस्थात् ।
समिद्धस्य रुशददर्शि पाजो महान् देवस्तमसो निरमोचि ॥ २ ॥

१७४८. यदीं गणस्य रशनामजीगः शुचिरङ्क्ते शुचिभिर्गोभिरग्निः ।
आद्दक्षिणा युज्यते वाजयन्त्युत्तानामूर्ध्वो अधयज्जुहूभिः ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—कुत्स आङ्गिरसः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१७४९. इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा ।
यथा प्रसूता सवितुः सवायैवा रात्र्युषसे योनिमारैक् ॥ १ ॥

१७५०. रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैगु कृष्णा सदनान्यस्याः ।
समानबन्धू अमृते अनूची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने ॥ २ ॥

१७५१. समानो अध्वा स्वस्रोरनन्तस्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे ।
न मेथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—अत्रिः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१७५२. आ भात्यग्निरुषसामनीकमुद्विप्राणां देवया वाचो अस्थुः ।
अर्वाञ्चा नूनं रथ्येह यातं पीपिवांसमश्विना घर्ममच्छ ॥ १ ॥

१७५३. न संस्कृतं प्र मिमीतो गमिष्ठान्ति नूनमश्विनोपस्तुतेह ।
दिवाभिपित्वेऽवसागमिष्ठा प्रत्यवर्त्तिं दाशुषे शम्भविष्ठा ॥ २ ॥

१७५४. उता यातं संगवे प्रातरह्नो मध्यन्दिन उदिता सूर्यस्य ।
दिवा नक्तमवसा शन्तमेन नेदानीं पीतिरश्विना ततान ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—गोतमो राहूगणः ॥ देवता—उषाः ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१७५५. एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते ।
निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः ॥ १ ॥

१७५६. उदपप्तन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत ।
अक्रन्नुषासो वयुनानि पूर्वथा रुशन्तं भानुमरुषीरशिश्रयुः ॥ २ ॥

१७५७. अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः ।
इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—दीर्घतमा औचथ्यः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—जगती ॥ स्वरः—निषादः ॥

१७५८. अबोध्यग्निर्ज्म उदेति सूर्यो व्यू३षाश्चन्द्रा मह्यावो अर्चिषा।
आयुक्षातामश्विना यातवे रथं प्रासावीद्देवः सविता जगत् पृथक् ॥ १ ॥

१७५९. यद्युञ्जाथे वृषणमश्विना रथं घृतेन नो मधुना क्षत्रमुक्षतम्।
अस्माकं ब्रह्म पृतनासु जिन्वतं वयं धना शूरसाता भजेमहि ॥ २ ॥

१७६०. अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो जीराश्वो अश्विनोर्यातु सुष्टुतः।
त्रिबन्धुरो मघवा विश्वसौभगः शं न आ वक्षद् द्विपदे चतुष्पदे ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—अवत्सारः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७६१. प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः। अच्छा वाजं सहस्रिणम् ॥ १ ॥

१७६२. अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति। हरिस्तुञ्जान आयुधा ॥ २ ॥

१७६३. स मर्मृजान आयुभिरिभो राजेव सुव्रतः। श्येनो न वंसु षीदति ॥ ३ ॥

१७६४. स नो विश्वा दिवो वसूतो पृथिव्या अधि। पुनान इन्दवा भर ॥ ४ ॥

इत्येकोनविंशोऽध्यायः, अष्टमप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

अथ विंशोऽध्यायः

नवमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः

(१)

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७६५. प्रास्य धारा अक्षरन् वृष्णः सुतस्यौजसः। देवाँ अनु प्रभूषतः ॥ १ ॥

१७६६. सप्तिं मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा। ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् ॥ २ ॥

१७६७. सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो। वर्धा समुद्रमुक्थ्य ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—द्विपदा गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७६८. एष ब्रह्मा य ऋत्विय इन्द्रो नाम श्रुतो गृणे ॥ १ ॥

१७६९. त्वामिच्छवसस्पते यन्ति गिरो न संयतः ॥ २ ॥

१७७०. वि स्रुतयो यथा पथ इन्द्र त्वद् यन्तु रातयः ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—प्रियमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—आनुष्टुभः प्रगाथः (१ अनुष्टुप्, २-३ गायत्री) ॥ स्वरः—१ गान्धारः; २-३ षड्जः ॥

१७७१. आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि ।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्रं शविष्ठ सत्पतिम् ॥ १ ॥

१७७२. तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते। आ पप्राथ महित्वना ॥ २ ॥

१७७३. यस्य ते महिना महः परि ज्मायन्तमीयतुः। हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—दीर्घतमा औचथ्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—उष्णिक् (१ विराट्, २ भुरिक्, ३ निचृत्) ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१७७४. आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो३ नार्वा ।
सूरो न रुरुक्वाञ्छतात्मा ॥ १ ॥

१७७५. अभि द्विजन्मा त्री रोचनानि विश्वा रजांसि शुशुचानो अस्थात्।
होता यजिष्ठो अपां सधस्थे ॥ २ ॥

१७७६. अयं स होता यो द्विजन्मा विश्वा दधे वार्याणि श्रवस्या ।
मर्तो यो अस्मै सुतुको ददाश ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—पदपङ्क्तिः ॥ स्वरः—पञ्चमः ॥

१७७७. अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिश्पृशम् ।
ऋध्यामा त ओहैः ॥ १ ॥

१७७८. अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः ।
रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ ॥ २ ॥

१७७९. एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाक् स्वा३र्ण ज्योतिः ।
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—प्रस्कण्वः काण्वः ॥ देवता—अग्निरश्विनावुषाश्च ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः
(१ बृहती, २ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१७८०. अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य ।
आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषर्बुधः ॥ १ ॥
१७८१. जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनोऽग्ने रथीरध्वराणाम् ।
सजूरश्विभ्यामुषसा सुवीर्यमस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥ २ ॥

(७)

ऋषिः—बृहदुक्थो वामदेव्यः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१७८२. विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार ।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥ १ ॥
१७८३. शाक्मना शाको अरुणः सुपर्ण आ यो महः शूरः सनादनीडः ।
यच्चिकेत सत्यमित्तन्न मोघं वसु स्पार्हमुत जेतोत दाता ॥ २ ॥
१७८४. ऐभिर्ददे वृष्ण्या पौंस्यानि येभिरौक्षद् वृत्रहत्याय वज्री ।
ये कर्मणः क्रियमाणस्य मह्न ऋतेकर्ममुदजायन्त देवाः ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—बिन्दुः पूतदक्षो वा ॥ देवता—मरुतः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७८५. अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ॥ १ ॥
१७८६. पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ॥ २ ॥
१७८७. उतो न्वस्य जोषमा इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातर्होतेव मत्सति ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—जमदग्निर्भार्गवः ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती,
२ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१७८८. बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनिष्टम मह्ना देव महाँ असि ॥ १ ॥
१७८९. बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥ २ ॥

(१०)

ऋषिः—सुकक्षः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१७९०. उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ॥ १ ॥
१७९१. द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः । उप नो हरिभिः सुतम् ॥ २ ॥
१७९२. त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप नो हरिभिः सुतम् ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—भुरिगनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१७९३. प्र वो महे महेवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।
विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः ॥ १ ॥
१७९४. उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।
तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥ २ ॥
१७९५. इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।
हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (१ बृहती,
२ सतोबृहती) ॥ स्वरः—१ मध्यमः; २ पञ्चमः ॥

१७९६. यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद्दधिषे रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ॥ १ ॥
१७९७. शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद् विदे ।
न हि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता च न ॥ २ ॥

(१३)

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—विराडनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१७९८. श्रुधी हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम् ।
कृष्वा दुवांस्यन्तमा सचेमा ॥ १ ॥
१७९९. न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान् ।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥ २ ॥

१८००. भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मनीषी हवते त्वामित् ।
मारे अस्मन्मघवं ज्योक्कः ॥ ३ ॥

(१४)

ऋषिः—सुदाः पैजवनः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—शक्वरी ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८०१. प्रो ष्वस्मै पुरोरथमिन्द्राय शूषमर्चत ।
अभीके चिदु लोककृत् सङ्गे समत्सु वृत्रहा ।
अस्माकं बोधि चोदिता नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥ १ ॥
१८०२. त्वं सिन्धूँरवासृजोऽधराचो अहन्नहिम् ।
अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे विश्वं पुष्यसि वार्यम् ।
तं त्वा परि ष्वजामहे नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥ २ ॥
१८०३. वि षु विश्वा अरातयोऽर्यो नशन्त नो धियः ।
अस्तासि शत्रवे वधं यो न इन्द्र जिघांसति ।
या ते रातिर्ददिर्वसु नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥ ३ ॥

(१५)

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः, प्रियमेधश्चाङ्गिरसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥
छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१८०४. रेवाँ इद्रेवत स्तोता स्यात्त्वावतो मघोनः । प्रेदु हरिवः सुतस्य ॥ १ ॥
१८०५. उक्थं च न शस्यमानं नागो रयिरा चिकेत । न गायत्रं गीयमानम् ॥ २ ॥
१८०६. मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परा दाः । शिक्षा शचीवः शचीभिः ॥ ३ ॥

(१६)

ऋषिः—नीपातिथिः काण्वः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१८०७. एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥ १ ॥
१८०८. अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥ २ ॥

१८०९. आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण वक्षतु ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥ ३ ॥

(१७)

ऋषिः—जमदग्निर्भार्गवः ॥ देवता—पवमानः सोमः ॥ छन्दः—द्विपदागायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१८१०. पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तमः ॥ १ ॥
१८११. ते सुतासो विपश्चितः शुक्रा वायुमसृक्षत ॥ २ ॥
१८१२. असृग्रं देववीतये वाजयन्तो रथाइव ॥ ३ ॥

(१८)

ऋषिः—परुच्छेपो दैवोदासिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—अत्यष्टिः ॥ स्वरः—गान्धारः ॥

१८१३. अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसोः
सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम् ।
य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा
घृतस्य विभ्राष्टिमनु शुक्रशोचिष आजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ १ ॥
१८१४. यजिष्ठं त्वा यजमाना हुवेम ज्येष्ठमङ्गिरसां
विप्र मन्मभिर्विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ।
परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम् ।
शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥ २ ॥
१८१५. स हि पुरू चिदोजसा विरुक्मता
दीद्यानो भवति द्रुहन्तरः परशुर्न द्रुहन्तरः ।
वीडु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत्स्थिरम् ।
निष्षहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ॥ ३ ॥

इति नवमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः ॥

नवमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—अग्निः पावकः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—१-२ विष्टारपङ्क्तिः; ३-५ सतोबृहती; ६ उपरिष्टाज्ज्योतिस्त्रिष्टुप्॥ स्वरः—१-५ पञ्चमः; ६ धैवतः॥

१८१६. अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्ते अर्चयो विभावसो ।
बृहद्भानो शवसा वाजमुक्थ्यां३ दधासि दाशुषे कवे ॥ १ ॥
१८१७. पावकवर्चाः शुक्रवर्चा अनूनवर्चा उदियर्षि भानुना ।
पुत्रो मातरा विचरन्नुपावसि पृणक्षि रोदसी उभे ॥ २ ॥
१८१८. ऊर्जो नपाज्जातवेदः सुशस्तिभिर्मन्दस्व धीतिभिर्हितः ।
त्वे इषः सं दधुर्भूरिवर्पसश्चित्रोतयो वामजाताः ॥ ३ ॥
१८१९. इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायो अमर्त्य ।
स दर्शतस्य वपुषो वि राजसि पृणक्षि दर्शतं क्रतुम् ॥ ४ ॥
१८२०. इष्कर्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तं राधसो महः ।
रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिं रयिम् ॥ ५ ॥
१८२१. ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निं सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।
श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥ ६ ॥

(२)

ऋषिः—सोभरिः काण्वः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (१ ककुबुष्णिक्, २ सतोबृहती)॥ स्वरः—१ ऋषभः; २ पञ्चमः॥

१८२२. प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तरति वाजकर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमाविथ ॥ १ ॥
१८२३. तव द्रप्सो नीलवान् वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥ २ ॥

(३)

ऋषिः—अरुणो वैतहव्यः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—जगती॥ स्वरः—निषादः॥

१८२४. तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापो अग्निं जनयन्त मातरः ।
तमित्समानं वनिनश्च वीरुधोऽन्तर्वतीश्च सुवते च विश्वहा ॥ १ ॥

(४)

ऋषिः—अग्निश्चाक्षुषः प्रजापतिर्वा॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१८२५. अग्निरिन्द्राय पवते दिवि शुक्रो वि राजति। महिषीव वि जायते ॥ १ ॥

(५)

ऋषिः—अवत्सारः काश्यपः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

१८२६. यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति ।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ॥ १ ॥

(६)

ऋषिः—अवत्सारः काश्यपः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—त्रिष्टुप्॥ स्वरः—धैवतः॥

१८२७. अग्निर्जागार तमृचः कामयन्तेऽग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति।
अग्निर्जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ॥ १ ॥

(७)

ऋषिः—मृगः॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१८२८. नमः सखिभ्यः पूर्वसद्भ्यो नमः साकंनिषेभ्यः। युञ्जे वाचं शतपदीम् ॥ १ ॥
१८२९. युञ्जे वाचं शतपदीं गाये सहस्रवर्तनि। गायत्रं त्रैष्टुभं जगत् ॥ २ ॥
१८३०. गायत्रं त्रैष्टुभं जगद् विश्वा रूपाणि सम्भृता। देवा ओकांसि चक्रिरे ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—अवत्सारो वत्सप्रीर्वा॥ देवता—अग्निः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१८३१. अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निरिन्द्रो ज्योतिर्ज्योतिरिन्द्रः। सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः ॥ १ ॥
१८३२. पुनरूर्जा नि वर्तस्व पुनरग्न इषायुषा। पुनर्नः पाह्यंहसः ॥ २ ॥
१८३३. सह रय्या नि वर्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया। विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ॥ देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—गायत्री॥ स्वरः—षड्जः॥

१८३४. यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोसखा स्यात् ॥ १ ॥
१८३५. शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम् ॥ २ ॥
१८३६. धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥ ३ ॥

(१०)

ऋषिः—त्रिशिरास्त्वाष्ट्रः सिन्धुद्वीपो वाम्बरीषः ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१८३७. आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे ॥ १ ॥

१८३८. यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः ॥ २ ॥

१८३९. तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥ ३ ॥

(११)

ऋषिः—उलो वातायनः ॥ देवता—वायुः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ स्वरः—षड्जः ॥

१८४०. वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे। प्र न आयूँषि तारिषत् ॥ १ ॥

१८४१. उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा। स नो जीवातवे कृधि ॥ २ ॥

१८४२. यददो वात ते गृहे३मृतं निहितं गुहा। तस्य नो धेहि जीवसे ॥ ३ ॥

(१२)

ऋषिः—सुपर्णः ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८४३. अभि वाजी विश्वरूपो जनित्रं हिरण्ययं बिभ्रदत्कं सुपर्णः ।
सूर्यस्य भानुमृतुथा वसानः परि स्वयं मेधमृज्रो जजान ॥ १ ॥

१८४४. अप्सु रेतः शिश्रिये विश्वरूपं तेजः पृथिव्यामधि यत् सम्बभूव।
अन्तरिक्षे स्वं महिमानं मिमानः कनिक्रन्ति वृष्णो अश्वस्य रेतः ॥ २ ॥

१८४५. अयं सहस्रा परि युक्ता वसानः सूर्यस्य भानुं यज्ञो दाधार ।
सहस्रदाः शतदा भूरिदावा धर्ता दिवो भुवनस्य विश्पतिः ॥ ३ ॥

(१३)

ऋषिः—वेनः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८४६. नाके सुपर्णमुप यत्पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥ १ ॥

१८४७. ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थात् प्रत्यङ् चित्रा बिभ्रदस्यायुधानि।
वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्वा३र्ण नाम जनत प्रियाणि ॥ २ ॥

१८४८. द्रप्सः समुद्रमभि यज्जिगाति पश्यन् गृध्रस्य चक्षसा विधर्मन् ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा चकानस्तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥ ३ ॥

इति विंशोऽध्यायः, नवमप्रपाठकस्य द्वितीयोऽर्धः ॥

अथैकविंशोऽध्यायः

नवमप्रपाठकस्य तृतीयोऽर्धः

(१)

ऋषिः—अप्रतिरथ ऐन्द्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८४९. आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्।
सङ्क्रन्दनोऽनिमिष एकवीरः शतं सेना अजयत् साकमिन्द्रः ॥ १ ॥

१८५०. सङ्क्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना।
तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा ॥ २ ॥

१८५१. स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी सं सृष्टा स युध इन्द्रो गणेन।
सं सृष्टजित् सोमपा बाहुशर्ध्यू३ग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥ ३ ॥

(२)

ऋषिः—अप्रतिरथ ऐन्द्रः ॥ देवता—१ बृहस्पतिः; २-३ इन्द्रः ॥
छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८५२. बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः ।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम् ॥ १ ॥

१८५३. बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः ।
अभिवीरो अभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमा तिष्ठ गोवित् ॥ २ ॥

१८५४. गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा ।
इमं सजाता अनु वीरयध्वमिन्द्रं सखायो अनु सं रभध्वम् ॥ ३ ॥

(३)

ऋषिः—अप्रतिरथ ऐन्द्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८५५. अभि गोत्राणि सहसा गाहमानोऽदयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः ।
दुश्च्यवनः पृतनाषाडयुध्यो३ऽस्माकं सेना अवतु प्र युत्सु ॥ १ ॥

१८५६. इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥ २ ॥

१८५७. इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां मरुतां शर्ध उग्रम् ।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात् ॥ ३ ॥

(४)

ऋषिः—अप्रतिरथ ऐन्द्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८५८. उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत् सत्वनां मामकानां मनांसि ।
उद् वृत्रहन् वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥ १ ॥

१८५९. अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ता जयन्तु ।
अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्त्वस्माँ उ देवा अवता हवेषु ॥ २ ॥

१८६०. असौ या सेना मरुतः परेषामभ्येति न ओजसा स्पर्धमाना ।
तां गूहत तमसापव्रतेन यथैतेषामन्यो अन्यं न जानात् ॥ ३ ॥

(५)

ऋषिः—१-२ अप्रतिरथ ऐन्द्रः; ३ पायुर्भारद्वाजः ॥ देवता—१ अप्वा; २ इन्द्रो मरुतो वा; ३ इषवः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २-३ अनुष्टुप् ॥ स्वरः—१ धैवतः; २-३ गान्धारः ॥

१८६१. अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥ १ ॥

१८६२. प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म यच्छतु ।
उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ ॥ २ ॥

१८६३. अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कं च नोच्छिषः ॥ ३ ॥

(६)

ऋषिः—पायुर्भारद्वाजः ॥ देवता—१-२ इन्द्रः; ३ संग्रामाशिषः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप्; ३ पङ्क्तिः ॥ स्वरः—१ धैवतः; २ गान्धारः; ३ पञ्चमः ॥

१८६४. कङ्काः सुपर्णा अनु यन्त्वेनान् गृध्राणामन्नमसावस्तु सेना ।
मैषां मोच्यघहारश्च नेन्द्र वयांस्येनाननुसंयन्तु सर्वान् ॥ १ ॥

१८६५. अमित्रसेनां मघवन्नस्माञ्छत्रुयतीमभि ।
उभौ तामिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति ॥ २ ॥

१८६६. यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखाइव ।
तत्र नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥ ३ ॥

(७)

ऋषिः—शासो भारद्वाजः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१-२ अनुष्टुप्; ३ विराड् जगती ॥
स्वरः—१-२ गान्धारः; ३ निषादः ॥

१८६७. वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज ।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः ॥ १ ॥

१८६८. वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः ।
यो अस्माँ अभिदासत्यधरं गमया तमः ॥ २ ॥

१८६९. इन्द्रस्य बाहू स्थविरौ युवानावनाधृष्यौ सुप्रतीकावसह्यौ ।
तौ युञ्जीत प्रथमौ योग आगते याभ्यां जितमसुराणां सहो महत् ॥ ३ ॥

(८)

ऋषिः—शासो भारद्वाजः ॥ देवता—संग्रामाशिषः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप्; ३ पङ्क्तिः ॥ स्वरः—१ धैवतः; २ गान्धारः; ३ पञ्चमः ॥

१८७०. मर्माणि ते वर्मणा च्छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥ १ ॥

१८७१. अन्धा अमित्रा भवताशीर्षाणोऽहयइव ।
तेषां वो अग्निनुन्नानामिन्द्रो हन्तु वरंवरम् ॥ २ ॥

१८७२. यो नः स्वोऽरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरं शर्म वर्म ममान्तरम् ॥ ३ ॥

(९)

ऋषिः—१ जय ऐन्द्रः; २-३ गोतमो राहूगणः ॥ देवता—१ इन्द्रः; २-३ विश्वेदेवाः ॥
छन्दः—१-२ त्रिष्टुप्; ३ विराट्स्थाना त्रिष्टुप् ॥ स्वरः—धैवतः ॥

१८७३. मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगन्था परस्याः ।
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व ॥ १ ॥

१८७४. भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २ ॥

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
१८७५. स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।
३ २ ३ २ ३ १ २
स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ३ ॥

इत्येकविंशोऽध्यायः, नवमप्रपाठकश्च समाप्तः ॥

इत्युत्तरार्चिकः ॥

इति सामवेदसंहिता ॥

सामवेदमन्त्रानुक्रमणिका

अ

आ

य

Divya Yog Mandir
Library
Kankhal, Haridwar